श्री तीनलोक मण्डल विधान

रचयिता :

कविवर पण्डित राजमल पवैया

प्रकाशक :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

फोन : 0141-2707458, 2705581

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

प्रथम दो संस्करण •	:	५ हजार
(२० अक्टूबर, १९९८)		
तृतीय संस्करण	:	१ हजार
१८ अप्रैल, २००८		
(महावीर जयन्ति)		
योग	:	**६ हजार**

मूल्य : पच्चीस रुपये

मुद्रक :
प्रिन्ट 'ओ' लैण्ड
बाईस गोदाम, जयपुर

• अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन, जयपुर द्वारा प्रकाशित

प्रकाशकीय

(तृतीय संस्करण)

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर के माध्यम से कविवर पण्डित राजमलजी पवैया द्वारा रचित तीन लोक मण्डल विधान का प्रकाशन करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। इसके पूर्व इस कृति के दो संस्करण अ.भा. जैन युवा फैडरेशन, जयपुर के माध्यम से प्रकाशित हो चुके हैं।

जिनागम में तीन लोक अकृत्रिम चैत्य-चैत्यालयों की पूजन करने की परम्परा अनादिकाल से चली आ रही हैं। सभी श्रावक नित्यप्रति उल्लासपूर्वक इनकी पूजा करके अपने आपको धन्य मानते हैं, जिन्हें अवकाश नहीं होता वे मात्र अर्घ्य चढ़ाकर ही संतोष कर लेते हैं।

अभी तक पण्डित टेकचन्दजी कृत तीनलोक विधान ही अधिक प्रचलित है, परन्तु उक्त विधान करने में ३०-४० दिन सहज ही लग जाते हैं। चूँकि वर्तमान समय में लोगों के पास इतना समय नहीं कि वे लम्बे समय तक इसप्रकार के आयोजन कर सकें, अतः जनसामान्य की सुविधा को ध्यान में रखते हुए श्री राजमलजी पवैया से अनुरोध किया गया कि वे ऐसे विधान की रचना करें जो एक सप्ताह में भलीभाँति पूर्ण हो जाए।

श्री राजमलजी पवैया सिद्धहस्त रचनाकार हैं, उन्होंने अनेक विधान लिखे हैं। हमारे अनुरोध को स्वीकार कर अल्प समय में आपने इस विधान की रचना की है, इसके लिए हम उनके हृदय से आभारी हैं।

इसमें प्रथम अधोलोक के ७,७२,००,००० जिनालयों की वंदना के पश्चात् मध्यलोक सम्बन्धी ४५८ अकृत्रिम जिनालयों का विस्तृत गुणानुवाद एवं पूजन है। तत्पश्चात् ऊर्ध्वलोक के ८४,९७,०२३ जिनालयों का वर्णन है। इसप्रकार तीन लोक के ८ करोड़ ५६ लाख ९७ हजार ४८१ जिनालयों की वंदना इस विधान के माध्यम से सहज हो जाती है। पूजन-अर्चना के साथ-साथ तीनों लोकों के अकृत्रिम चैत्यालयों की जानकारी भी सहज ही हो जाती है।

इस कृति के प्रकाशन का दायित्व सदा की भाँति विभाग के प्रभारी अखिल बंसल ने सम्हाला है, साथ ही प्रूफ रीडिंग के कार्य में पण्डित अशोकजी लुहाड़िया, पण्डित संजय शास्त्री बड़ामलहरा तथा पण्डित मनीषजी शास्त्री का भी महत्वपूर्ण सहयोग मिला है एतदर्थ ये सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

जिन महानुभावों ने इस पुस्तक की कीमत कम करने में अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया है उन सभी का हम हृदय से आभार मानते हैं।

आप सभी इस कृति के माध्यम से आत्मविभोर होकर तीनलोक मण्डल विधान का रस लेते हुए मुक्ति के पथ पर अग्रसर हों ऐसी भावना के साथ – **ब्र. यशपाल जैन**, एम.ए.

प्रकाशन मंत्री, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

क्रमांक पूजन का नाम	पृष्ठ
मंगलाचरण/संकल्प	1
1. समुच्चय पूजन	7
2. श्री अधोलोक जिनालय पूजन	13
3. श्री मध्यलोक जिनालय पूजन	21
4. पंचमेरू समुच्चय पूजन	27
5. सुदर्शनमेरु षोडश जिनालय पूजन	33
6. जम्बूद्वीप सुदर्शनमेरू संबंधी चार गजदंत जिनालयपूजन	41
7. जम्बूशालमली वृक्ष जिनालय पूजन	48
8. सुदर्शन मेरू संबंधी षोडश वक्षार जिनालय पूजन	53
9. जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरू संबंधी चौतीस विजयार्ध जिनालय	64
10.जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरू संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन	72
11.श्री धातकी खण्ड पूर्व दिशा विजय मेरू संबंधी षोडश जिनालय पूजन	78
12.श्री धातकी खण्ड पूर्व विजयमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजन	85
13.श्री धातकीखंड विजयमेरू संबंधित धातकी शालमलि द्वय वृक्ष जिनालयपूजन	92
14.श्री धातकी खंड विजय मेरू संबंधित सोलह वक्षार जिनालय पूजन	97
15.श्री धातकी खंड विजय मेरू चौतीस विजयार्ध जिनालय पूजन	105
16.श्री धातकी खंड विजय मेरू षटकुलाचल जिनालय पूजन	117
17.श्री धातकी खंड पश्चिम दिशा अचलमेरू षोडश जिनालय	122
18.श्री धातकी खंड अचल मेरू संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजन	131
19.श्री धातकी खंड अचलमेरू धातकीशालमलिवृक्षदो जिनालयपूजन	136
20.श्री अचलमेरू संबंधी षोडश वक्षार जिनालय पूजन	141
21.श्री अचलमेरू संबंधी चौतीस विजयार्ध जिनालय पूजन	149
22.श्री धातकी खंड अचलमेरू संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन	159
23.श्री धातकी खंड अचलमेरू संबंधी दो इष्वाकार जिनालय पूजन	164
24.श्री पुष्करार्ध द्वीप संबंधी पूर्व मंदरमेरू सोलह जिनालय पूजन	169
25.श्री पुष्करार्ध सबंधी मंदरमेरु चार गजदत जिनालय पूजन	176
26.श्री पुष्करार्ध मंदरमेरू पुष्कर शालमलि वृक्ष जिनालय पूजन	181
27.श्री पुष्करार्ध मंदरमेरू संबंधी षोडश वक्षार जिनालय पूजन	186
28.श्री पुष्करार्ध मंदरमेरू चौतीस विजयार्ध जिनालय पूजन	193
29.श्री पुष्करार्ध मंदर मेरू षटकुलाचल जिनालय पूजन	203
30.श्री पुष्करार्ध पश्चिम विधुन्माली मेरू सोलह जिनालय पूजन	208
31.श्री पुष्करार्ध विधुन्माली चार गजदंत जिनालय पूजन	215
32.श्री पुष्करार्ध विधुन्माली मेरू सोलह वक्षार जिनालय पूजन	225
33.श्री पुष्करार्ध पश्चिम विधुन्माली मेरू संबंधी चौतीस विजयार्ध जिनालय पूजन	232
34.श्री पुष्करार्ध विधुन्माली मेरू संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन	242
35.श्री पुष्करार्ध विधुन्माली संबंधी द्वय इष्वाकार जिनालय पूजन	248

ॐ

तीन लोक मंडल विधान

मंगलाचरण

छंद - अनुष्टुप

मंगलं सिद्ध परमेष्ठी, मंगलं तीर्थंकरम् ।
मंगलं शुद्ध चैतन्यं, आत्म धर्मोस्तु मंगलम् ॥
मंगलं चैत्य चैत्यालयअकृत्रिम कृत्रिम परम् ।
मंगलं रत्नमय स्वर्णिम बिम्ब जिन त्रैलोक्यकम् ॥

दोहा

पंच परम परमेष्ठी जिन प्रतिमा जिन धाम ।
मंगल जिनवाणी परम श्री जिनधर्म प्रणाम ॥

चामर

वीतराग श्री जिनेन्द्र ज्ञान रूप मंगलम् ।
गणधरादि सर्व साधु ध्यान रूप मंगलम् ॥
जैन धर्म सार्व धर्म विश्व धर्म मंगलम् ।
वस्तु का स्वभाव ही अनाद्यनंत मंगलम् ॥
तीन लोक मंगल विधान श्रेष्ठ मंगलम् ।
अधो मध्य ऊर्ध्वलोक जिनालय सुमंगलम् ॥
ढाई द्वीप पंचमेरु परम श्रेष्ठ मंगलम् ।
सुगिरि मानुषोत्तर द्वीप नंदीश्वरम् ॥
कुन्डलवर एकादश द्वीप सदा मंगलम् ।
रुचकवर त्रयोदशं द्वीप श्रेष्ठ मंगलम् ॥
ज्ञान ध्यान वैराग्यरूप दिव्य मंगलम् ।
सम्यक्त्व ज्ञान चारित्र भव्य मंगलम् ॥
रत्नत्रय निधि से हैं पूजित जिनराज सब ।
रत्नत्रय गुण से हैं भूषित मुनिराज सब ॥

रत्नत्रय शक्ति से पाऊँ निर्वाण अब ।
रत्नत्रय भक्ति से होऊँ भगवान अब ॥
त्रैलोक्य चैत्य चैत्यालय सुमंगलम् ।
स्रोत इस विधान का तिलोयपण्णति परम ॥
साधु यति वृषभ आचार्य देव मंगलम् ।
मोक्ष प्राप्ति का उपाय सर्वश्रेष्ठ मंगलम् ॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

पीठिका

छंद - वीर

चौदह राजु उत्तंग लोकत्रय पुरुषाकार विशाल प्रसिद्ध ।
तीन शतक तिरतालीस घन राजु अनादि से ही है सिद्ध ॥
अधोलोक छह मध्य एक है ऊर्ध्व सात राजु विस्तार ।
सर्वोपरि है सिद्ध शिला जो ढाई द्वीप सम चंद्राकार ॥
अंतिम वातवलय तनु में पैंतालीस लाख सुयोजन की ।
सिद्ध चक्र इस पर शोभित है महिमा है आनंदधन की ॥

ताटंक

इस अनंत आकाश मध्य में तीन लोक रचना सुन्दर ।
अधो मध्य अरु ऊर्ध्व लोक है वातवलय वेष्ठित मनहर ॥
अधोलोक में सात नर्क हैं मिलता जहाँ पाप का फल ।
मध्य लोक में अति सुन्दर हैं द्वीप और सागर जल थल ॥

ऊर्ध्व लोक में स्वर्गादिक हैं मिलता जहाँ पुण्य का फल ।
त्रिलोकाग्र पर मुक्ति शिला है शुद्ध भाव फल है उज्ज्वल ॥
अधो लोक में चित्रा भू पर असंख्य व्यंतर जिन आलय ।
सात करोड़ बहत्तर लाख भवनवासी के चैत्यालय ॥

मध्य लोक की चित्रा भू पर असंख्यात योजन भारी ।
असंख्यात हैं द्वीप असंख्यों हैं समुद्र बहु जलधारी ॥

ढाई द्वीप तक मनुज लोक है जिसमें पाँच सुमेरु प्रसिद्ध ।
अंतिम मानुषोत्तर पर्वत मनुज लोक सीमा सुप्रसिद्ध ॥

नन्दीश्वर है द्वीप आठवाँ श्री जिन चैत्यालय छविमान ।
अरु ग्यारहवाँ कुन्डलवर तेरहवां द्वीप रुचकवर जान ॥
इन सब में है चार शतक अट्ठावन श्री जिन चैत्यालय ।
भक्ति सहित पूजन करते हैं इन्द्रादिक सुर मंगलमय ॥

मेरु सुदर्शन, विजय, अचल, मंदर, विद्युन्माली अभिराम ।
सब पर सोलह सोलह जिन चैत्यालय जिन बिम्बों के धाम ॥
अस्सी मेरु जिनालय वन्दूँ गज दन्तों के वन्दूँ बीस ।
वक्षारों के अस्सी वन्दूँ वृक्षों पर दस गृह जगदीश ॥

विजयार्धों के एक शतक सत्तर इष्वाकारों के चार ।
कुलाचलों के तीस जिनालय मानुषोत्तर के हैं चार ॥
नन्दीश्वर के बावन जिनगृह कुन्डलवर के चार महान ।
चार रुचकवर सर्व मिला कर चार शतक अट्ठावन मान ॥

सभी अकृत्रिम जिन चैत्यालय एक शतक वसु बिम्ब सहित ।
उनन्चास सहस्र चार सौ चौंसठ रत्नमयी शोभित ॥
सब ही द्वीप समुद्रों का इक दूजे से दूना विस्तार ।
जिन शासन भूगोल ज्ञान का अद्भुत है अनुपम भंडार ॥

ऊर्ध्व लोक में सोलह स्वर्गों में हैं लाखों चैत्यालय ।
नवग्रीवक में सुर अर्चित हैं श्रेष्ठ मनोहर जिनआलय ॥
नव अनुदिश अरु पंच अनुत्तर में महिमामय चैत्यालय ।
सब मिल लाख चुरासी सहस संतानवे तेईस जिन आलय ॥

मैं भी भव्य भावना भाऊँ वीतराग रंग रंगी हुई ।
शाश्वत सुख मय मुक्ति वधू का वरण करूँ गुण सजी हुई ॥
इनका यह परिचय संक्षिप्त जिनागम के अनुसार कथन ।
भाव पूर्वक वर्णन करके शुद्धात्मा को करूँ नमन ॥

तीन लोक मंडल विधान है सबसे उत्तम सहज सरल ।
निज स्वरूप अबलंबन द्वारा पाऊँ शुद्ध स्वभाव विमल ॥
अनेकान्त मय जिनशासन है स्याद्वाद विधि मंगलमय ।
वस्तु स्वरूप जान प्रगटाऊँ निर्मल ज्ञान प्रकाशालय ॥

निश्चय भक्ति प्राप्ति हेतु मैं भाव सहित करता पूजन ।
शाश्वत सुख के पथदर्शक सर्वज्ञ जिनेश्वर को वन्दन ॥
आठ कोटि अरु छप्पन लाख संतानवे सहस्र चार शतक ।
अरु इक्यासी जिन चैत्यालय वन्दूँ नाथ झुका मस्तक ॥

इस विधान की पूजन का फल शुद्ध भावना उर लाऊँ ।
सम्यक् दर्शन की महिमा पा शुद्ध आत्मा ही ध्याऊँ ॥
संयम लेकर पंच महाव्रत धारण कर मुनि बन जाऊं ।
आत्म सिद्धि की शीघ्र प्राप्ति कर महामोक्ष सुख प्रभु पाऊँ ॥

अधोलोक जिनालय एवं जिन प्रतिमा संख्या

वीर छंद

अधोलोक में सात करोड़ बहत्तर लाख भवन जिन जान ।
भवनवासी देवों के भवनालय में जिनमंदिर छविमान ॥
जिन प्रतिमा वसु अरब कोटि तैंतीस छहत्तर लाख महान ।
मैं परोक्ष वन्दन करता हूँ जय जय जय जिनेन्द्र भगवान ॥

मध्य लोक जिनालय एवं जिन प्रतिमा संख्या

वीर छंद

जम्बूद्वीप सुमेरु सुदर्शन अठहत्तर मंदिर विख्यात ।
खंडधात की विजय मेरु है अठहत्तर मंदिर प्रख्यात ॥
खंडधात की अचल मेरु के अस्सी चैत्यालय प्रख्यात ।
पुष्करार्ध मंदर सुमेरु के अठहत्तर चैत्यालय ख्यात ॥
पुष्करार्ध विद्युन्माली के अस्सी चैत्यालय विख्यात ।
मानुषोत्तर मनुज लोक सीमा पर चार सुगृह प्रख्यात ॥

अष्टम द्वीप श्री नंदीश्वर बावन चैत्यालय विख्यात।
ग्यारहवें कुन्डलवर में है चार चैत्यालय प्रख्यात ॥
ढाई द्वीप में तीन शतक अरु अट्ठानवे जिनालय ख्यात।
ऋषि मुनि गण धर इन्द्रादिक सुर पूजन करते हैं दिन रात॥
तेरहवाँ है द्वीप रुचकवर चारों चैत्यालय विख्यात।
मध्यलोक सब चार शतक अट्ठावन चैत्यालय प्रख्यात॥
कुल प्रतिमाएँ सहस्र उनन्चास सात शतक चौंसठ लो जान।
भक्ति भाव से यथाशक्ति पूजन कर जिन आगम लो मान॥

ऊर्ध्व लोक जिनालय एवं जिन प्रतिमा संख्या

वीर छंद

ऊर्ध्व लोक गृह लाख चौरासी संतानवे सहस्र तेईस।
स्वर्णमयी जिन मंदिर अनुपम रत्निम प्रतिमाएँ जगदीश॥
प्रतिमा इक्यानवे कोटि अरु लाख छहत्तर में लो जोड़।
सहस्र अठत्तर चार शतक चौरासी कुल है इनका जोड़॥

तीन लोक के समस्त अकृत्रिम चैत्यालय एवं चैत्य संख्या

छंद ताटंक

तीन लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय अविनाशी।
वसुकोटि सुछप्पन लाख संतानवे सहस्र चार शत इक्यासी।
प्रतिमाएँ नौ अरब कोटि पच्चीस लाख छप्पन में जोड़।
सहस सत्ताइस नौ सौ अड़तालीस जिनेश्वर के कर जोड़॥
जय जय जय जय तीन लोक के सर्व जिनालय के भगवान।
जय जय जय जय तीन लोक मंडल विधान का भाव महान॥

प्रातिहार्य एवं मंगल द्रव्य संख्या

प्रातिहार्य वसु एक बिम्ब संग एक शतक वसु-वसु विख्यात।
गिनती में हैं आठ शतक चौंसठ जिन आगम में प्रख्यात॥

हैं वसु मंगल द्रव्य बिम्ब संग एक शतक वसु-वसु विख्यात।
गिनती में हैं आठ शतक चौंसठ जिन आगम में प्रख्यात॥
प्रातिहार्य सब एक लाख अरु चार सहस्र इक शत बारह।
मंगल द्रव्य एक लाख अरु चार सहस्र इक शत बारह॥
प्रति गृह एक शतक वसु प्रतिमा के गर्भालय पृथक्-पृथक्।
जिन आगम की महिमा वर्णन कर गणधर भी जाते थक॥

मंदिर पर ध्वजाओं के वर्ण, चिन्ह, संख्या

छंद - ताटंक

महाध्वजाएँ शुद्ध ध्वजाएँ पंच वर्ण की होती है।
दस प्रकार के चिन्हों से ये सदा सुशोभित होती है॥
माला, सिंह, गरुड़, अंकुश, गज, कमल, मयूर, वृषभ के चित्र।
चकवा चकवी हंस चिन्ह शोभित बहुरंगी ध्वजा पवित्र॥
महाध्वजाएँ चारों दिशि में एक शतक वसु एक प्रकार।
दस प्रकार की चार सहस त्रय शतक बीस हैं विविध प्रकार॥
क्षुद्र ध्वजा इक महाध्वजा संग इकशत वसु-वसु हैं विख्यात।
चार लाख छयासठ सहस्र पाँच सौ साठ लघु ध्वज प्रख्यात॥
सर्व ध्वजाएँ चार लाख सत्तर सहस्र वसु शत अस्सी।
एक एक चैत्यालय पर हैं यशो ध्वजाएँ ध्रुव छवि सी॥
हम तो मात्र प्रतीक रूप ही नन्हीं ध्वजा चढ़ा पाते।
श्री जिनेन्द्र की पूजन करते सुख पाते बहु हर्षाते॥
और विशेष ज्ञान करना है तो जिनआगम से लो जान।
अकृत्रिम जिन चैत्यालय की महिमा के गाओ जय गान॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
भव दुख क्षय हों कर्म नाश हों जिनगुण संपति मिले महान॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री तीन लोक मंडल विधान

समुच्चय पूजन

स्थापना

छंद – रोला

तीन लोक के सकल जिनालय सविनय वन्दूँ ।
रत्नमयी जिनबिम्ब भाव पूर्वक अभिनन्दूँ ॥
अधो मध्य अरु ऊर्ध्व लोक के जिन चैत्यालय ।
सादर शीष झुकाऊँ पाऊँ ध्रुव ज्ञानालय ॥
आठ कोटि अरु छप्पन लाख सहस संतानव ।
चार शतक इक्यासी अकृत्रिम जिनवर गृह ॥
भक्ति भाव से पूजन करूँ विधान रचाऊँ ।
महिमामय त्रैलोक्य जिनालय उर में ध्याऊँ ॥
आह्वानन सुस्थापन सन्निधि करूँ भाव से ।
प्रासुक द्रव्य चढ़ाऊँ स्वामी शुद्ध भाव से ॥

छंद – वसंततिलका

त्रैलोक्य मंडल विधान प्रभो रचाऊँ ।
सम्यक्त्व की स्व वीणा हे प्रभुवर बजाऊँ ॥
निज आत्मा स्वयं के गुण से सजाऊँ ।
संसार सर्व जय कर शिव सौख्य पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोक संबंधि आठ करोड़ छप्पन लाख संतानवे हजार चार सौ इक्यासी अकृत्रिम जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोक संबंधि आठ करोड़ छप्पन लाख संतानवे हजार चार सौ इक्यासी अकृत्रिम जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोक संबंधिआठ करोड़ छप्पन लाख संतानवे सहस्र चार सौ इक्यासी अकृत्रिम जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक

छंद - मानव

सम्यक् निर्णय जल लाऊँ जन्मादि रोग क्षय करने ।
आनंद गीत निज गाऊँ रागादिभाव जय करने ।।
त्रैलोक्य जिनालय पूजूँ प्रासुक वसु द्रव्य सजा कर ।
जिन बिम्बों को नित वन्दूँ उर स्वपर विवेक जगा कर ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित चंदन की गरिमा निज मस्तक पर सज्रित हो ।
भव ज्वर का अंत करूँ मैं भव रोगों से वर्जित हो ।
त्रैलोक्य जिनालय पूजूँ प्रासुक वसु द्रव्य सजा कर ।
जिन बिम्बों को नित वन्दूँ उर स्वपर विवेक जगा कर ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

सम्यक् अक्षत अनुभव मय आनंद अतीन्द्रिय दाता ।
अक्षय पद प्राप्त करूँ मैं परिपूर्ण स्वसौख्य प्रदाता ।।
त्रैलोक्य जिनालय पूजूँ प्रासुक वसु द्रव्य सजा कर ।
जिन बिम्बों को नित वन्दूँ उर स्वपर विवेक जगा कर ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि.।

सम्यक् स्वपुष्प की महिमामय गंध मुझे भायी है ।
चिर कामबाण की पीड़ा क्षय होने को आयी है ।।
त्रैलोक्य जिनालय पूजूँ प्रासुक वसु द्रव्य सजा कर ।
जिन बिम्बों को नित वन्दूँ उर स्वपर विवेक जगा कर ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

सम्यक् चरु अनुभव रसमय ही क्षुधा रोग के नाशक ।
ज्ञानामृत रस निर्मित हैं ये ही हैं स्वपर प्रकाशक ।।
त्रैलोक्य जिनालय पूजूँ प्रासुक वसु द्रव्य सजा कर ।
जिन बिम्बों को नित वन्दूँ उर स्वपर विवेक जगा कर ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

सम्यक् स्वदीप की आभा अन्तर्मन ज्योतित करती ।
मिथ्या भ्रम की अंधियारी अन्तमुहूर्त में हरती ॥
त्रैलोक्य जिनालय पूजूँ प्रासुक वसुद्रव्य सजा कर ।
जिन बिम्बों को नित वन्दूँ उर स्वपर विवेक जगा कर ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

कर्माग्नि बुझाने को प्रभु सम्यक् स्वधूप ही लाऊँ ।
निष्कर्म अवस्था पाकर सम्यक् स्वरूप दर्शाऊँ ॥
त्रैलोक्य जिनालय पूजूँ प्रासुक वसु द्रव्य सजा कर ।
जिन बिम्बों को नित वन्दूँ उर स्वपर विवेक जगा कर ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

शुद्धात्म स्वभावी सम्यक् फल हे प्रभु मैं कब पाऊँ ।
ध्रुव मोक्ष महाफल पाकर त्रैलोक्य शिखर पर जाऊँ ॥
त्रैलोक्य जिनालय पूजूँ प्रासुक वसु द्रव्य सजा कर ।
जिन बिम्बों को नित वन्दूँ उर स्वपर विवेक जगा कर ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

सम्यक् भावों का गरिमामय अर्घ्य अपूर्व बनाऊँ ।
निज नित्य निरंजन निर्मल अनुपम अनर्घ्य पद पाऊँ ॥
त्रैलोक्य जिनालय पूजूँ प्रासुक वसु द्रव्य सजा कर ।
जिन बिम्बों को नित वन्दूँ उर स्वपर विवेक जगा कर ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – रोला

अधो लोक जिन भवन शाश्वत पूजूँ स्वामी ।
सात कोटि अरु लाख बहत्तर उज्ज्वल नामी ॥
भाव सहित वन्दन कर उत्तम अर्घ्य चढ़ाऊँ ।
भव बंधन का नाश करूँ शिव सुख उपजाऊँ ॥

आत्म तत्व का भान करूँ समकित निधि पाऊँ ।
निश्चय संयम तरणी पर तत्क्षण चढ़ जाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि सात करोड़ बहत्तर लाख अकृत्रिमजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

मध्य लोक संबंधी चैत्यालय

मध्य लोक गृह चार शतक अट्ठावन वन्दूँ ।
विनय भाव से अर्घ्य चढ़ा निज को अभिनन्दूँ ॥
तेरह द्वीपों तक शाश्वत जिन चैत्यालय हैं ।
मानों अपने मध्यलोक में सिद्धालय हैं ॥
सम्यग्ज्ञान दीप को जोकर शिव पथ पाऊँ ।
भव तट को तज करके भव सागर तर जाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि चार सौ अट्ठावन अकृत्रिमजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

ऊर्ध्व लोक सम्बंधी चैत्यालय

ऊर्ध्व लोक संबंधी शाश्वत जिन चैत्यालय ।
लाख चुरासी सहस संतानवे तेईस आलय ॥
कर्म कलुषता नाश हेतु मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ ।
शुद्ध स्वभाव भाव की महिमा उर में लाऊँ ॥
यथाख्यात चारित्र प्राप्त कर मोह विनाशूँ ।
केवल ज्ञान सूर्य को पा सिद्धत्व प्रकाशूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासी लाख संतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

महार्घ्य

छंद रोला

अधो मध्य अरु ऊर्ध्व लोक के जिन चैत्यालय ।
तीन लोक में श्रेष्ठ मनोहर श्री जिन आलय ॥
नाचूँ गाऊँ अर्घ्य चढ़ाऊँ निज मैं आऊँ ।
प्राप्त स्वरूपाचण करूँ निज ध्रुव पद पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि आठ करोड़ छप्पन लाख संतानवे हजार चार सौ इक्यासी चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. ।

जयमाला

छंद - रोला

तीन लोक के चैत्य चैत्यालय अभिनन्दूँ ।
भव दुख क्षय के हेतु जिनेश्वर तुमको वन्दूँ ॥
मैं अनादि से था निगोद में बहु दुख पाया ।
एक समय को भी हे स्वामी सुख ना आया ॥

नित निगोद से निकला मैं त्रस हुआ जिनेश्वर ।
द्वय त्रय चऊ इन्द्रिय तन पाया पूरा दुखकर ॥
कठिनाई से पंचेन्द्रिय पशु तन फिर पाया ।
बध बंधन के महादुखों को पा भरमाया ॥
फिर मानव पंचेन्द्रिय संज्ञी हुआ भाग्य से ।
पंचेन्द्रिय विषयों में अटका मैं कुभाग्य से ॥
निज को भूला पर में अटका भव में भटका ।
व्रत संयम बिन समकित ले स्वर्गों में लटका ॥

अन्त न आया मेरे दुख का नाथ आज तक ।
सम्यग्दर्शन मिला न पल भर को भी अब तक ॥
व्रत संयम सब शून्य हो गए समकित के बिन ।
फिर निगोद में जा पहुँचा दुख पाए छिन छिन ॥

तारे गिन गिन रातें काटीं दिन रो रो कर ।
पर भावों में ही जागा हूँ निज में सोकर ॥
जब जब अवसर आया मैंने उसे गँवाया ।
मिथ्या भ्रम के बादल को भी ना विघटाया ॥

महापुण्य से हे स्वामी फिर नर तन पाया ।
जिनकुल जिन श्रुत पाकर तुव चरणों में आया ॥
तुव मुद्रा को देख मुझे जिन मुद्रा भायी ।
मैंने जाना काललब्धि अब मेरी आयी ॥

कुन्द कुन्द का समयसार प्रभु मैंने पाया ।
त्यागा अप्रतिबुद्धपना प्रतिबुद्ध सुहाया ॥
तत्त्वाभ्यास किया है मैंने परम विनय से ।
आज जुड़ गया स्वामी मैं सम्यक् निर्णय से ॥

अब न कहीं भी जाऊँगा यह दृढ निश्चय है ।
अभूतार्थ व्यवहार न भाता शुद्ध हृदय है ॥
ज्ञानोदधि की तरंग मेरे उर में आयी ।
ज्ञानामृत मय गंगा की छवि उर दर्शायी ॥

स्वाध्याय का सम्यक् फल अब पाया स्वामी ।
हुआ भविष्य महा उज्ज्वल हे अन्तर्यामी ॥
पुनः देह परिवर्तन का अवसर आया है ।
पुनः मनुज भव जिन कुल को मन ललचाया है ॥

प्रभु तुव चरणों में अपना कल्याण करूँगा ।
कुछ भव में ही सकल कर्म अवसान करूँगा ॥
अधो मध्य अरु ऊर्ध्व लोक के सकल जिनालय ।
भक्ति भाव से पूजे मैंने सादर सविनय ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकसंबंधि आठ करोड़ छप्पन लाख संतानवे हजार चार सौ इक्यासी चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. ।

आशीर्वाद

छंद – वीर

तीन लोक के कृत्रिम अकृत्रिम सर्व जिनालय करूँ प्रणाम ।
रत्नत्रय की प्राप्ति करूँ मैं पाऊँ निज शाश्वत ध्रुव धाम ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
भवदुख क्षय हों कर्म नाश हों जिन गुण संपत्ति मिले महान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

ॐ

श्री अधोलोक जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – ताटंक

अधो लोक में सात करोड़ बहत्तर लाख जिनालय हैं ।
रत्निम जिन प्रतिमा शोभित हैं ये प्रसिद्ध भवनालय हैं ॥
दस प्रकार के भवनवासी देवों के द्वारा वन्दित हैं ।
असुर कुमार आदि सुरपतियों के द्वारा अभिनन्दित हैं ॥
मध्यलोक से ही मैं अधोलोक के जिन मन्दिर वन्दूँ ।
जल फलादि वसु द्रव्य शुद्ध ले जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ ॥
व्यंतर देवों के असंख्य गृह में हैं असंख्य चैत्यालय ।
उनको भी वन्दन करता हूँ शुद्ध भाव का ले आश्रय ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि सात करोड़ बहत्तर लाख अकृत्रिमजिनालयस्थ श्री जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि सात करोड़ बहत्तर लाख अकृत्रिमजिनालयस्थ श्री जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि सात करोड़ बहत्तर लाख अकृत्रिमजिनालयस्थ श्री जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद – गीतिका

शुचि नीर सम्यक् प्राप्त करके आत्म का चिन्तन करूँ ।
जन्म और जरा मरण की व्याधि को पल में हरूँ ॥
अधो लोक जिनालयों को मैं सदा वन्दन करूँ ।
बिम्ब भवनालय जिनेश्वर नमन कर भवदुख हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि अकृत्रिमजिनालयस्थ जिनबिम्बभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि.।

संसार ज्वर के नाश हित यह मलय चंदन व्यर्थ है।
शुद्ध आत्म स्वभाव चन्दन ही सदैव समर्थ है ॥
अधो लोक जिनालयों को मैं सदा वन्दन करूँ।
बिम्ब भवनालय जिनेश्वर नमन कर भवदुख हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि अकृत्रिमजिनालयस्थ जिनबिम्बभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

अपद से भवदुख मिला है स्वपद मिलता ही नहीं।
शुद्ध अक्षत भाव बिन निज कमल खिलता ही नहीं ॥
अधो लोक जिनालयों को मैं सदा वन्दन करूँ।
बिम्ब भवनालय जिनेश्वर नमन कर भवदुख हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि अकृत्रिमजिनालयस्थ जिनबिम्बभ्यऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि.।

शील व्रत के पुष्प मनहर कामबाण विनाशते।
हृदय को निष्काम करते ज्ञान सूर्य प्रकाशते।
अधो लोक जिनालयों को मैं सदा वन्दन करूँ।
बिम्ब भवनालय जिनेश्वर नमन कर भवदुख हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि अकृत्रिमजिनालयस्थजिनबिम्बभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

आत्म रस निर्मित सुचरु ही क्षुधारोग विनाशते।
अनाहारी रूप मेरा सहज शीघ्र विकासते ॥
अधो लोक जिनालयों को मैं सदा वन्दन करूँ।
बिम्ब भवनालय जिनेश्वर नमन कर भवदुख हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि अकृत्रिमजिनालयस्थजिनबिम्बभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

ज्ञान दीप प्रकाश हो तो आत्मा भी जागता।
मोहतम मिथ्यात्व के संग सदा को ही भागता ॥
अधो लोक जिनालयों को मैं सदा वन्दन करूँ।
बिम्ब भवनालय जिनेश्वर नमन कर भवदुख हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि अकृत्रिमजिनालयस्थ जिनबिम्बभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

धर्म के दश अंग की ध्रुव धूप परम सुहावनी ।
अष्ट कर्म विनाश करती ज्ञान गाता लावनी ॥
अधो लोक जिनालयों को मैं सदा वन्दन करूँ ।
बिम्ब भवनालय जिनेश्वर नमन कर भवदुख हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि अकृत्रिमजिनालयस्थ जिनबिम्बभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

ज्ञान तरु फल पास हो तो मोक्षफल मिल जाएगा ।
नष्ट यह संसार होगा सौख्य शिव झिल जाएगा ॥
अधो लोक जिनालयों को मैं सदा वन्दन करूँ ।
बिम्ब भवनालय जिनेश्वर नमन कर भवदुख हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि अकृत्रिमजिनालयस्थ जिनबिम्बभ्यो महामोक्षफल-प्राप्तये फलं नि.।

धर्म भावी अर्घ्य लाया पद अनर्घ्य मुझे मिले ।
अपद क्षय कर स्वपद पाऊँ मुक्ति अंबुज उर खिले ॥
देह जड़ से भिन्न चेतन तत्त्व मेरी आत्मा ।
चिन्मयी चिच्चमत्कारी चिदंकित परमात्मा ॥
अधो लोक जिनालयों को मैं सदा वन्दन करूँ ।
बिम्ब भवनालय जिनेश्वर नमन कर भवदुख हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि अकृत्रिमजिनालयस्थ जिनबिम्बभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

अधोलोक संबंधी जिनालय

छंद – वसंततिलिका

जीवत्व शक्ति से ही जीता सदा मैं ।
पर द्रव्य भाव पर से रीता सदा मैं ॥
निज भावना बिना मैं दुख पा रहा हूँ ।
सुख प्राप्ति हेतु तुमको ही ध्या रहा हूँ ॥

वीर छंद

अधो लोक में दस प्रकार के भवनवासी देवों के थान ।
भव्य अकृत्रिम श्री जिन चैत्यालय हैं परम श्रेष्ठ छविमान ॥

इस प्रकार हैं सब मिल सात करोड़ बहत्तर लाख महान ।
भाव सहित मैं पूजन करके करूँ आत्मा का कल्याण ॥
पृथक्-पृथक् मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ दश धर्मों का ज्ञान करूँ ।
निश्चय पूर्वक पालन करके अव्रत का अवसान करूँ ॥

१. असुर कुमार जाति के देवों के भवनों में ६४ लाख जिनालय

असुर कुमार जाति के देवों के भवनों में हैं जिनगेह ।
जिन मंदिर हैं चौंसठ लाख सुविनय सहित पूजूँ धर नेह ॥
सम्यक् दर्शन की गंगोत्री स्वानुभूति से आती है ।
मोहराग द्वेषादि भाव की कालुषता धुल जाती है॥
अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी असुरकुमारदेवसंबंधि अड़तालीस लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

२. नागकुमार जाति के देवों के भवनों में चौरासी लाख जिनालय

नागकुमार जाति देवों के जिनगृह सुन्दर श्रेष्ठ महान ।
लाख चौरासी महा मनोहर जिनमें राजे जिन भगवान ॥
महिमामय जिन धर्म प्राप्त कर जो सम्यक् दृष्टि होते ।
वे ही भव सागर तरते हैं वे ही सिद्ध स्वपद जोते ॥
अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी नागकुमारदेवसंबंधि चौरासी लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

३. सुपर्ण कुमार जाति के देवों के भवनों में बहात्तर लाख जिनालय

छंद - ताटंक

देव सुपर्ण कुमार गृहों के लाख बहत्तर जिन मंदिर ।
परम भक्ति से भाव सहित मैं पूजूँ सविनय श्री जिनवर ॥
भेद ज्ञान विज्ञान प्राप्त कर सम्यक् ज्ञानी हो जाऊँ ।
स्वपर प्रकाशक महिमा पाऊँ निज ज्ञायक को ही ध्याऊँ॥

अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी सुपर्णकुमारदेवसंबंधि बहत्तर लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

४. द्वीप कुमार जाति के देवों के भवनों में छिहत्तर लाख जिनालय

द्वीप कुमार देव पूजते लाख छिहत्तर जिन मंदिर ।
दिव्य द्रव्य अर्पित कर चरणों में वन्दन करते सादर ॥
शुद्ध स्वरूपाचरण शक्ति से जो पाते सम्यक् चारित्र ।
वे हो जाते हैं कुछ भव में सर्वोत्तम पद प्राप्त पवित्र ॥
अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी द्वीपकुमारदेवसंबंधी छिहत्तर लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽअर्घ्यं नि. ।

५. उदधिकुमार जाति के देवों के भवनों में छिहत्तर लाख जिनालय

उदधि कुमार देव करते हैं जिन प्रभु को वन्दन सादर ।
लाख छिहत्तर चैत्यालय की जिन प्रतिमा पूजें नम कर ॥
रत्नत्रय की भक्ति प्राप्त कर जो भी निज को ध्याता है ।
वही आत्मा ससम्मान अपने वैभव को पाता है॥
अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी उदधिकुमारदेवसंबंधि छिहत्तर लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

६. स्तनित कुमार जाति के देवों के भवनों में छिहत्तर लाख जिनालय

देव स्तनित कुमार करते प्रभु पूजन भावनामयी ।
लाख छिहत्तर जिन मंदिर में जिन प्रतिमा कल्याण मयी ।
धर्म ध्यान के ही पश्चात समुज्ज्वल शुक्ल ध्यान होता ।
घातिकर्म क्षय होने पर ही फिर अघाति भी क्षय होता ॥

अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी स्तनितकुमारदेवसंबंधि छिहत्तर लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

७. विद्युतकुमार जाति के देवों के भवनों में छिहत्तर लाख जिनालय

पूजन करते देव सभी विद्युतकुमार जिनगृह पावन ।
लाख छिहत्तर सभी अकृत्रिम अति सुन्दर हैं मन भावन ॥
ज्ञान ज्ञेय ज्ञायक विकल्प का नाम नहीं जब रहता है।
मोह क्षीण तत्क्षण होता है ज्ञायक निज में बहता है॥
अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी विद्युतकुमारदेवसंबंधि छिहत्तर लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

८. दिक्कुमार जाति के देवों के भवनों में छिहत्तर लाख जिनालय

दिक्कुमार देवों के द्वारा पूजित भव्य छिहत्तर लाख ।
जिन मंदिर महान शोभित हैं अकृत्रिम जिन आगम साख॥
यथाख्यात चारित्र बिना तो मोह क्षीण होता न कभी ।
केवलज्ञान प्रकाश आत्मा में होता है नहीं कभी ॥
अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी दिक्कुमारदेवसंबंधि छिहत्तर लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

९. अग्निकुमार जाति के देवों के भवनों में छिहत्तर लाख जिनालय

अग्नि कुमार देव लाख छिहत्तर जिन मंदिर विख्यात ।
भक्ति सहित वे पूजन करते कभी न गिनते वे दिन रात ॥
केवल ज्ञान प्राप्त होते ही सिद्ध स्वपद मिल जाता है।
निजानंद रस लीन स्वज्ञायक पद उर में झिल जाता है॥

अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी अग्निकुमारदेवसंबंधि छिहत्तर लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

१०. वायुकुमार जाति के देवों के भवनों में छियानवे लाख जिनालय

वायु कुमारों के जिन मंदिर लाख छयानवे.परम महान ।
वीतराग अरहंत देव के बिम्बों से है शोभावान ॥
त्रिलोकाग्र पर सिद्ध शिला पर राजित होते सिद्ध महान ।
करूँ आत्म अनुभूति सदा ही पाऊँ सिद्ध स्वपद अमलान॥
अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री भवनवासी वायुकुमारदेवसंबंधि छयानवे लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

११. व्यंतर देवों से संबंधित असंख्य जिनालय

व्यंतर देवों से संबंधित असंख्यात जिन चैत्यालय ।
इनमें राजित असंख्य जिन प्रतिमाओं को वन्दूँ निजमय ॥
अकृत्रिम चैत्यालय की गिनती में इनको नहीं गिना ।
ये असंख्य हैं गणित असंभव होता सुख क्या ज्ञान बिना ॥
इन सब को वन्दन करता हूँ मन वच काय त्रियोग सँवार ।
निजात्मा के अवलंबन से पाऊँ भव सागर का पार ॥
अधो लोक जिन मन्दिर पूजूँ सम्यग्दर्शन उपजाऊँ ।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर स्वपर विवेक हृदय लाऊँ ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री व्यंतरदेवसंबंधि असंख्यातजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

महार्घ्य

छंद - चामर (चाल - हम लाये हैं विदेह से)

शुभ राग पुण्य भाव है यह धर्म है नहीं ।
इसमें जो धर्म मानता समकित उसे नहीं ॥

जो पुण्य को ही धर्म मान इसमें मस्त है ।
मिथ्यात्व मोह भाव से सदैव ग्रस्त है ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधी सतत्तर अरब इक्यासी करोड़ छिहत्तर लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. ।

जयमाला

छंद – विधाता

गगन से ज्ञान बरसेगा हृदय में ध्यान आएगा ।
शुक्ल ध्यानी सरस चेतन स्वयं के गीत गाएगा ॥
सभी संशय विलय होंगे मिलेगा सिद्ध पद सादर ।
नहीं कुछ राग होगा उर ध्यान होगा परम शिव कर ॥
उदधि दुख पूर्ण सूखेगा बहेगी सौख्य की सरिता ।
नहीं कर्त्तव्य पर का कुछ नहीं कर्त्ता न कारयिता ॥
दशा अरहंत सम होगी स्वपर ज्ञायक स्वभावी बन ।
परम सर्वज्ञ होकर तुम बनोगे पूर्ण आनंद घन ॥
सदिच्छा पूर्ण होगी ही मिलेगा ध्यान फल उत्तम ।
नहीं भव भाव होगा फिर बनोगे सिद्ध प्रभु बिन श्रम ॥
देवियाँ गीत गाएँगी देव दुन्दुभि बजाएँगे ।
शताधिक इन्द्र पूजेंगे भावना भव्य भाएँगे ॥
नरक पशु देव नर गतियाँ विलय सम्पूर्ण होंगी ही ।
स्वगति पंचम मिलेगी ही वासना चूर्ण होंगी ही ॥
शिखर त्रैलोक्य दमकेगा तुम्हारी प्रभा से पावन ।
धरातल सर्व मंगलमय बनेगा शुद्ध मन भावन ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. ।

आशीर्वाद

वीर छंद

अधोलोक जिन मंदिर पूजे सात करोड़ बहत्तर लाख ।
आत्म द्रव्य का ज्ञान करूँगा जिन आगम की पाकर साख ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वाद:

श्री मध्यलोक जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - सोरठा

मध्य लोक जिनगेह स्वामी पूजूँ भाव से ।
सुख हो निःसंदेह शाश्वत अविकारी सहज ॥
प्रासुक द्रव्य चढ़ाय मन वच काय सँवार कर।
निज स्वभाव सुखदाय शीघ्र प्राप्त हो हे प्रभो ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - ताटंक

शीतल सलिल ज्ञान धारा की निज तरंग उर में जागे ।
जन्म जरा मरणादि व्याधि अन्तर्मुहुर्त में ही भागे ॥
मध्य लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय करूँ प्रणाम।
जिन प्रतिमाओं की पूजन कर निश्चित पाऊँगा ध्रुव धाम ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

अनुपम पावन शीतल चंदन तिलक शीष निज शोभित कर।
भव ज्वर ताप विनाश करूँ मैं अविरति दोष सदा को हर ॥
मध्य लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय करूँ प्रणाम।
जिन प्रतिमाओं की पूजन कर निश्चित पाऊँगा ध्रुव धाम ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा ।

अक्षत भावों की मणि माला अक्षय पद प्रदान करती ।
गुण अनंत प्रगटित करती है सर्व विभाव भाव हरती ॥
मध्य लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय करूँ प्रणाम ।
जिन प्रतिमाओं की पूजन कर निश्चित पाऊँगा ध्रुव धाम ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

महाशील के पुष्प मनोहर काम व्यथा हर लेते हैं ।
श्री अरहंत महा प्रभु सबको शाश्वत निज पद देते हैं ॥
मध्य लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय करूँ प्रणाम ।
जिन प्रतिमाओं की पूजन कर निश्चित पाऊँगा ध्रुव धाम ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

शुद्ध भाव रस सुचरु चढ़ाऊँ क्षुधा रोग विध्वंस करूँ ।
तृप्त अनाहारी बन जाऊँ भव की पीड़ा शीघ्र हरूँ ॥
मध्य लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय करूँ प्रणाम ।
जिन प्रतिमाओं की पूजन कर निश्चित पाऊँगा ध्रुव धाम ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

दीप ज्योति हो ज्ञान ध्यान वैराग्यमयी भ्रम तम नाशक ।
केवल ज्ञान महान मिले प्रभु आत्म ज्ञान हो भव नाशक ॥
मध्य लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय करूँ प्रणाम ।
जिन प्रतिमाओं की पूजन कर निश्चित पाऊँगा ध्रुव धाम ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

शुद्ध धूप हो ध्यान भाव की सकल व्याधियां टल जाएं ।
नित्य निरंजन पद पाऊँ मैं कर्म प्रकृतियां जल जाएँ ॥
मध्य लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय करूँ प्रणाम ।
जिन प्रतिमाओं की पूजन कर निश्चित पाऊँगा ध्रुव धाम ॥

ॐ ह्रींश्री मध्यलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

शुद्ध ज्ञान तरु के फल लाऊँ महा मोक्ष फल प्राप्त करूँ।
मोक्ष महल में प्रवेश कर के शाश्वत सुख उर व्याप्त करूँ ॥
मध्य लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय करूँ प्रणाम।
जिन प्रतिमाओं की पूजन कर निश्चित पाऊँगा ध्रुव धाम ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

परम ज्ञान के अर्घ्य बनाऊँ पद अनर्घ्य निज प्रगटाऊँ।
चारों गति की पीर मिटाऊँ राग भाव सब विघटाऊँ ॥
निजस्वरूप संबोधन पाकर परम समाधि दशा पाऊँ।
कारण कार्य स्वरूप जानकर केवल निज को ही ध्याऊँ ॥
मध्य लोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय करूँ प्रणाम।
जिन प्रतिमाओं की पूजन कर निश्चित पाऊँगा ध्रुव धाम ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि सर्वजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

१. जम्बू द्वीप संबंधी अठत्तर जिनालय

वीर छंद

भव्य अठत्तर जम्बू द्वीप जिनालय वन्दूँ भली प्रकार।
अकृत्रिम जिन प्रतिमा पूजूँ मैं भी अकृत्रिम अविकार ॥
स्वाध्याय का महत्त्व समझूँ आत्म तत्त्व का ज्ञान करूँ।
समकित सावन की महिमा पा मिथ्या भ्रम अज्ञान हरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपसंबंधि अठत्तर जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

२. धातकी द्वीप संबंधी एक सौ अट्ठावन जिनालय

खंड धातकी संबंधी इकशत अट्ठावन चैत्यालय।
भाव सहित वन्दन करके प्रभु मैं भी पाऊँ सिद्धालय ॥
तत्त्व ज्ञान की महिमा पाऊँ कर लूँ स्वपर भेद विज्ञान।
रत्नत्रय की तरणी चढ़ कर पाऊँ शाश्वत पद निर्वाण ॥

ॐ ह्रीं श्री धातकीखंडद्वीपसंबंधि एक सौ अट्ठावन जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

३. पुष्करार्ध संबंधी एक सौ अट्ठावन जिनालय

पुष्करार्ध संबंधी इकशत अट्ठावन जिनगेह महान ।
विनय सहित पूजन करके प्रभु करूँ स्वयं का मैं कल्याण ॥
अविरति नाशूँ व्रत उर धारूँ संयम रथ पाऊँ बलवान ।
यथाख्यात के बल से स्वामी पाऊँ मोक्ष सौख्य अमलान ॥

ॐ *ह्रीं श्री पुष्करार्धसंबंधि एक सौ अट्ठावन जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।*

४. मानुषोत्तर संबंधी चार जिनालय

मानुषोत्तर मनुज लोक की सीमा पर जिन मंदिर चार ।
भक्ति भाव से जिन गृह पूजूँ करूँ स्वयं से साक्षात्कार ॥
सर्व प्रमाद हरूँ मैं स्वामी महाव्रती हो ध्याऊँ ध्यान ।
शुक्ल ध्यान की महा कृपा से सिद्ध स्वपद पाऊँ भगवान ॥

ॐ *ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।*

५. अष्टमद्वीप नन्दीश्वर संबंधी बावन चैत्यालय

अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर चारों दिशि के चैत्यालय ।
बावन महा मनोहर पूजूँ मैं भी पाऊँ सिद्धालय ॥
मुक्ति मार्ग पर चलूँ निरंतर यथाख्यात चारित्र महान ।
पाकर कर्म आठ क्षय कर दूँ सिद्ध स्वपद पाऊँ अमलान ॥

ॐ *ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपसंबंधि बावन जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।*

६. एकादशम कुन्डलवर द्वीप संबंधी चार जिनालय

एकादशम द्वीप कुन्डलवर पर्वत पर जिन मंदिर चार ।
इन्द्रादिक सुर पूजन करते जिन प्रभु महिमा अपरंपार ॥
भव तट छोड़ूँ शिव तट पाऊँ मुक्ति भवन में करूँ प्रवेश ।
हो जाऊँ निज आत्म शक्ति से हे स्वामी मैं निर्ग्रंथेश ॥

ॐ *ह्रीं श्री कुन्डलवरद्वीपसंबंधि चार जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।*

७. त्रयोदशम रुचकवर द्वीप संबंधी चार जिनालय

ताटंक

द्वीप रुचकवर त्रयोदशम चैत्यालय चार करूँ पूजन ।
जिन महिमा से ओत प्रोत हो काटूँ कर्मों के बंधन ॥
मोक्ष मार्ग पूरा हो हे प्रभु मुक्ति भवन साम्राज्य मिले ।
ध्यान ज्ञान की सुरभि प्राप्त कर मोक्ष सौख्य उर पूर्ण झिले ॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

महार्घ्य

अर्ध कुण्डलिया

मध्य लोक के जिनालय मैंने पूजे आज ।
महाअर्घ्य अर्पण करूँ बन जाऊँ मुनिराज ॥
बन जाऊँ मुनिराज करूँ आत्मा का चिन्तन ।
वन पर्वत तरु सरिता तट पर करूँ अध्ययन ॥
सप्तम षष्टम झूला झूलूँ निज को ध्याऊँ ।
श्रेणी चढ़ कर वीतराग हो निज पद पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि चार सौ अट्ठावन जिनालयस्थ उनन्चास हजार चार सौ चौंसठ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद - शार्दूलविक्रीड़ित

वन्दूँ हे प्रभु मध्य लोक जिन गृह शाश्वत अकृत्रिम कृत्रिम ।
पूजूँ श्री जिनबिम्ब सर्व पावन वसुद्रव्य प्रासुक सजा ॥
पाऊँ अपना शुद्ध ज्ञान स्वामी दिन रात निज को भजूँ ।
रागद्वेष विकार भाव सारे हे नाथ अब तो तजूँ ॥

वीर छंद

मध्य लोक के चार शतक अट्ठावन अकृत्रिम गृह भव्य ।
अष्ट प्रातिहार्य हैं शोभित शोभित हैं वसुमंगल द्रव्य ॥
स्वर्णिम मंदिर रत्निम प्रतिमा धनुष पाँच सौ अवगाहन ।
एक शतक वसु बिम्ब विराजे प्रति मंदिर बहु मनभावन ॥

एक एक को वन्दन करके निरखूँ जिन प्रतिमा प्रत्येक ।
भाव शुद्ध आएँ अनगिनती ज्ञान भाव हो उर में एक ॥
संयम से भूषित हो जाऊँ ज्ञान ध्यान जागे उर में ।
बिना किसी बाधा के जाऊँ आप कृपा से शिवपुर में ॥

कलिहारी पर परिणति नाशूँ विदा करूँ संशय मिथ्यात्व ।
भेदज्ञान का संबल लेकर प्राप्त करूँ उर में सम्यक्त्व ॥
सम्यग्ज्ञान जगे अंतर में हो चारित्र महान पवित्र ।
प्राप्त स्वरूपाचरण करूँ मैं चौथे में निरखूँ निज चित्र ॥

छठे सातवें झूला झूलूँ तज प्रमत्त होऊँ अप्रमत्त ।
निजानंद रस लीन रहूँ मैं निजस्वभाव में होकर रत्त ॥
शुक्ल ध्यान ले श्रेणी क्षायिक चढ़ूँ घातिया नाश करूँ ।
फिर अर्न्तमुहुर्त में स्वामी केवल ज्ञान प्रकाश करूँ ॥

नव देवों की करूँ वन्दना नहीं नवग्रह का हो डर ।
आत्म देव को ही मैं निरखूँ रत्नत्रय धारूँ शिव कर ॥
भव आकांक्षाएँ क्षय कर दूँ समभावी हो जाऊँ मैं ।
परम तपस्वी हो जाऊँ प्रभु मुक्ति मार्ग पर आऊँ मैं ॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिसर्व जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – वीर

मध्यलोक के सर्व जिनालय भाव सहित पूजे हैं आज ।
अत्युत्तम निज ध्यान करूँ मैं पाऊँ अपना निज पद राज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन न हो हे स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

श्री पंचमेरु जिनालय पूजन

पीठिका

छंद - सरसी

मेरु सुदर्शन, विजय, अचल, मंदर, विद्युन्माली।
ढाई द्वीप में पाँचों सुरगिरि बहु गौरव शाली ॥
मेरु सुदर्शन एक लाख योजन ऊँचा जानो।
शेष लाख चौरासी योजन ऊँचे हैं मानो ॥

दो सहस्र कोस का होता एक महा योजन।
मात्र कोस दो का होता है केवल लघु योजन ॥
अकृत्रिम रचनाओं का है नाप महा योजन।
कृत्रिम रचना में प्रयोग होता है लघु योजन ॥

चार चार वन से शोभित सुमेरु अति मनहर हैं।
चारों दिशि में चार चार जिन मंदिर सब पर हैं ॥
भू पर भद्रशाल वन सुन्दर हरा भरा मनहर।
फिर नन्दन वन महिमाशाली ऊपर है सुन्दर ॥

फिर हैं वन सौमनस मनोरम महिमा मय सुन्दर।
फिर पांडुक वन चारों दिशि में हैं सबसे ऊपर ॥
इसकी चार दिशा में चार शिलाएँ मनभावन।
तीर्थंकर जन्माभिषेक से हुईं सभी पावन ॥

वीर छंद

भरत क्षेत्र के तीर्थंकर का पांडुक शिला सदा अभिषेक।
ऐरावत के तीर्थंकर का रत्नकंबला पर अभिषेक ॥
पूर्व विदेह तीर्थंकर का रत्नशिला होता अभिषेक।
अपर विदेह तीर्थंकर का पान्डुकंबला हो अभिषेक ॥

छंद - सरसी

मेरु सुदर्शन के ऊपर है ऋजु विमान प्रथमम् ।
बाल बराबर की दूरी है इतना अंतर कम ॥
मेरु सुदर्शन की चूलिका महायोजन चालीस ।
इसके नीचे पान्डुक वन में न्हवन थान जगदीश ॥

मैं भी न्हवन करूँ भाव से तीर्थंकर प्रभु का ।
वन्दन करूँ विनय से स्वामी तीर्थंकर विभु का ॥
जला विभावों की होली अनुभव गुलाल पाऊँ ।
राग अभाव हेतु ज्ञान के शुद्ध रंग लाऊँ ॥

समकित फागुन की महिमा से ओत प्रोत होऊँ ।
अष्ट कर्म जंजाल जला दूँ सिद्ध स्वपद जोऊँ ॥
निज रस की शीतल ठंडाई सदा सदा पीऊँ ।
ध्रुव जीवत्व शक्ति के बल से सदा सदा जीऊँ ॥

स्थापना

दोहा

पंचमेरु पूजन करूँ करूँ स्वयं का ज्ञान ।
निश्चयनय भूतार्थ का आश्रय लूँ बलवान ॥
मेरु स्वर्ण के दिव्य हैं स्वर्णमयी जिन गेह ।
अस्सी के जिनबिम्ब सब रत्निम जजूँ सनेह ॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरूसंबंधि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरूसंबंधि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूहअत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरूसंबंधि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - विधाता

मोह मिथ्यात्व के तम को विनाशूँ नाथ यह बल दो ।
नीर सम्यक्त्व की बरसात हो उर भाव उज्ज्वल हो ।

मेरु पाँचों से संबंधित अस्सी जिनगृह करूँ पूजन।
परम पुरुषार्थ जाग्रत कर हरूँ वसु कर्म के बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

हरूँ अव्रत असंयम को करूँ कल्याण मैं अपना।
नियम से ज्ञान के साधूँ करूँ संसार को सपना॥
मेरु पाँचों से संबंधित अस्सी जिनगृह करूँ पूजन।
परम पुरुषार्थ जाग्रत कर हरूँ वसु कर्म के बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

प्रमादों को करूँ अब क्षय महाव्रत पूर्ण उर धारूँ।
स्वपद अक्षय मिले मुझको शुद्ध निज रूप उजियारूँ
मेरु पाँचों से संबंधित अस्सी जिनगृह करूँ पूजन।
परम पुरुषार्थ जाग्रत कर हरूँ वसु कर्म के बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

कषायों को करूँ मैं क्षय शील गुण प्राप्त कर लूँ मैं।
काम बाणों की पीड़ा को निमिष में नाथ हर लूँ मैं॥
मेरु पाँचों से संबंधित अस्सी जिनगृह करूँ पूजन।
परम पुरुषार्थ जाग्रत कर हरूँ वसु कर्म के बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

वेदनी कर्म को कर क्षय अनाहारी स्वपद पाऊँ।
अबाधक सौख्य उर लाऊँ मुक्ति सुख नित्य विलसाऊँ॥
मेरु पाँचों से संबंधित अस्सी जिनगृह करूँ पूजन।
परम पुरुषार्थ जाग्रत कर हरूँ वसु कर्म के बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोह की वासना दुखमय चतुर्गति में भ्रमाती है।
तिमिर अज्ञान के क्षय की भावना उर को भाती है॥
मेरु पाँचों से संबंधित अस्सी जिनगृह करूँ पूजन।
परम पुरुषार्थ जाग्रत कर हरूँ वसु कर्म के बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

निजातम का गगन मंडल कर्म से आच्छादित है।
इसे निर्मल करूँगा मैं भावना उर सुनिश्चित है॥
मेरु पाँचों से संबंधित अस्सी जिनगृह करूँ पूजन।
परम पुरुषार्थ जाग्रत कर हरूँ वसु कर्म के बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

मोक्ष फल प्राप्ति की रुचि है नहीं संसार आकांक्षा।
ज्ञान कैवल्य फल पाने विनाशूँ स्वर्ग सुख वांछा॥
मेरु पाँचों से संबंधित अस्सी जिनगृह करूँ पूजन।
परम पुरुषार्थ जाग्रत कर हरूँ वसु कर्म के बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य अविकल स्वभावी तो बनाए ही नहीं मैंने।
आज अवसर मिला है तो सजाया निज हृदय मैंने॥
मुक्ति का मार्ग पाकर भी रहा व्यवहार में उलझा।
बिना निश्चय निजाश्रय के नहीं कोई कभी सुलझा॥
मेरु पाँचों से संबंधित अस्सी जिनगृह करूँ पूजन।
परम पुरुषार्थ जाग्रत कर हरूँ वसु कर्म के बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

महार्घ्य

छंद – शार्दूलविक्रीडित

पाँचों स्वर्णमयी सुमेरु सुन्दर हैं अकृत्रिम शाश्वत।
स्वर्णिम अस्सी गेह श्रेष्ठ वन्दूँ बिम्ब रत्निम परम॥
मेरा निज शुद्धात्म तत्त्व निरूपम है धातु चैतन्य मय।
ध्रुवधामी चिच्चमत्कार चेतन ज्ञानाब्धि का स्रोत है।

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ पंचमेरु जिन राज।
रत्नत्रय की भक्ति से पाऊँ मोक्ष स्वराज॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीतिजिनालयस्थ आठ हजार छह सौ चालीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद – मानव

रागादि भाव के द्वारा तू भव दुख सागर मत भर।
ज्ञानादि भाव के द्वारा तू ज्ञान समुद्र हृदय धर॥
मोहादि भाव चहुँगति में ही भ्रमण कराते आए।
पल भर भी चैन न पाया दुख के घन ही उमड़ाए॥
चिर घनीभूत भव पीड़ा बहु अब तक तूने पायी।
अध्यवसानादि भाव ने तेरी सुध बुध बिसरायी॥
ज्ञानाब्धि उछलता भीतर फिर भी तू दुखी हुआ है।
झेली न तरंग ज्ञान की अतएव न सुखी हुआ है॥
पुण्यों के पात्र बनाकर भव जल कब तक ढोएगा।
खाली न कभी सर होगा तू बार बार रोएगा॥
शुद्धात्म भावना से ही भव जल सब चुक जाता है।
शोषित होता भव सागर भव दुखघन उड़ जाता है॥
शिव तट के तोरण द्वारों पर शहनाई बजती है।
तुझ से परिणय को आतुर प्रिय मुक्ति वधू सजती है॥
गुण मणियों की ध्रुव लड़ियाँ झूमर बन लूम रही हैं।
पर्यायें ज्ञान भाव की तेरे पग चूम रही हैं॥

कैवल्य ज्ञान की लहरें प्रति पल तुझ पर न्यौछावर।
तू स्व पर प्रकाशक चेतन आतुरता रही न कण भर॥
तेरे चरणों को धोने क्षीरोदधि मचल रहा है।
त्रय वात वलय के ऊपर शिवपुर भी ललक रहा है॥
अनुपम उजियारा तूने पाया है भ्रम तम खोकर।
ध्रुव सिद्ध स्वपद पाएगा निज ज्ञान दीप उर जोकर॥
चैतन्य धातु से निर्मित है जीव द्रव्य ध्रुव तेरा।
दर्शन ज्ञानादि गुणों का है इसके भीतर डेरा॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसंबंधिअशीतिजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

वीर छंद

पंचमेरु के सभी जिनालय भक्ति सहित पूजें प्रभु आज।
ज्ञान वल्लरी फलित हो गई दृष्टित हुए श्री जिनराज॥

इत्याशीर्वादः

चलो रे भाई सिद्धपुरी

देखो खड़ा है विमान महान, चलो रे भाई सिद्धपुरी।
वायुयान आया है सीट सुरक्षित अभी करालो।
सम्यक्दर्शन ज्ञान चरित के तीनों पास मंगालो ॥देखो ॥१॥
नरभव से ही यह विमान सीधा शिवपुर जाता है।
जो चूका वह फिर अनन्त कालों तक पछताता है। देखो. ॥२॥
रत्नत्रय की बर्थ संभालो शुद्धभाव में जीलो।
निज स्वभाव का भोजन लेकर ज्ञानामृत जल पीलो ॥देखो. ॥३॥
निज स्वरुप में जागरुक जो उनको पहुंचाएगा।
सिद्य शिला सिंहासन तक जा तुमको बिठलाएगा ॥देखो. ॥४॥
मुक्ति भवन में मोक्ष वधू वरमाला पहनाएगी।
सादि अनंत समाधि मिलेगी जगती गुण गाएगी ॥देखो.॥५॥

श्री सुदर्शन मेरु षोडश जिनालय पूजन

स्थापना

एक लाख योजन का जम्बू द्वीप सुरम्य जिनागम साख।
लवण उदधि इसको घेरे है चारों दिशि योजन दो लाख॥
एक लाख योजन ऊँचा है मेरु सुदर्शन परम विशाल।
इस पर सोलह जिन चैत्यालय भव्य स्वर्णमय अति सुविशाल॥
इन सब की पूजन करके प्रभु शुद्ध आत्मा ध्याऊँगा।
विमल ज्ञान की दिव्य भावना भाकर निजपद पाऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधी षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधी षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधी षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - अवतार

निज शुद्ध भाव की नाथ, लाऊँ जल धारा।
जन्मादि रोग त्रय नाश, पाऊँ सुख सारा॥
हैं मेरु सुदर्शन मध्य, सोलह जिन मंदिर।
पूजूँ रत्निम अति भव्य, जिन प्रतिमा सुन्दर॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

उत्तम चंदन की गंध, मेरे मन भायी।
संसार ताप क्षय हेतु, निज की सुधि आयी॥
हैं मेरु सुदर्शन मध्य, सोलह जिन मंदिर।
पूजूँ रत्निम अति भव्य, जिन प्रतिमा सुन्दर॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

अक्षत अखंड निज रूप, की महिमा लाऊँ ।
परिपूर्ण ज्ञान पा नाथ, अक्षय पद पाऊँ ॥
हैं मेरु सुदर्शन मध्य, सोलह जिन मंदिर ।
पूजूँ रत्निम अति भव्य, जिन प्रतिमा सुन्दर ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

गुणशील पुष्प की वास, अन्तर में पायी ।
चिर काम बाण की पीर, क्षय होने आयी ॥
हैं मेरु सुदर्शन मध्य, सोलह जिन मंदिर ।
पूजूँ रत्निम अति भव्य, जिन प्रतिमा सुन्दर ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

है क्षुधा व्याधि का रोग, भव पीड़ा दायक ।
निज अनाहार पद नाथ, शिवपुर सुख दायक ॥
हैं मेरु सुदर्शन मध्य, सोलह जिन मंदिर ।
पूजूँ रत्निम अति भव्य, जिन प्रतिमा सुन्दर ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोहान्धकार का नाश, मुझको करना है ।
केवल रवि पाकर देव, भव दुख हरना है ॥
हैं मेरु सुदर्शन मध्य, सोलह जिन मंदिर ।
पूजूँ रत्निम अति भव्य, जिन प्रतिमा सुन्दर ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

कर्मों की भीषण ज्वाला, पूर्ण बुझाना है ।
पद नित्य निरंजन नाथ, मुझको पाना है ॥
हैं मेरु सुदर्शन मध्य, सोलह जिन मंदिर ।
पूजूँ रत्निम अति भव्य, जिन प्रतिमा सुन्दर ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

फल मोक्ष प्राप्ति के हेतु, चरणों में आया।
भव दुख तरु क्षय के हेतु, तुमको ही ध्याया॥
हैं मेरु सुदर्शन मध्य, सोलह जिन मंदिर।
पूजूँ रत्निम अति भव्य, जिन प्रतिमा सुन्दर॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

पदवी अनर्घ्य का नाम, केवल सुन पाया।
इसका प्रभु सच्चा रूप, जान नहीं पाया॥
अब तो परमात्म स्वरूप, अपना ध्याऊँगा।
ज्ञाता दृष्टा बन देव, शिव सुख पाऊँगा॥
हैं मेरु सुदर्शन मध्य, सोलह जिन मंदिर।
पूजूँ रत्निम अति भव्य, जिन प्रतिमा सुन्दर॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

सुदर्शन मेरु भद्रशाल वन संबंधी चार जिनालय

छंद- रोला

मेरु सुदर्शन भद्रशाल वन चार जिनालय।
पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर में मंगलमय॥
जल गंधाक्षत पुष्प सुचरु ले दीप धूप फल।
भाव द्रव्य पूजन से मन होता अति निर्मल॥

छंद- उपमान (अहो जगत गुरु......)

भद्रशाल वन मध्य पूरव दिशि जिन मंदिर।
रत्निम श्री जिनबिम्ब सर्वोत्तम हैं सुखकर॥
पूजूँ ले वलसु द्रव्य श्री जिन अन्तर्यामी।
बाह्यान्तर निर्ग्रंथ बन जाऊँ हे स्वामी॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ भद्रशालवनस्थित पूर्वदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

भद्रशाल वन मध्य दक्षिण दिशि जिन मंदिर।
इन्द्रादिक सुर पूज्य ध्याते ऋषि मुनिगण धर॥
प्रासुक द्रव्य चढ़ाय करूँ मैं श्री जिन पूजन।
निज बल से हे नाथ हरूँ इस भव के बंधन॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ भद्रशालवनस्थित दक्षिणदिग्जिनालयजिन बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

भद्रशाल वन बीच पश्चिम दिशि जिन गेहा।
रत्नमयी जिनबिम्ब पूजूँ उर धर नेहा॥
श्री अरहंत महान पद्मासन जिन प्रतिमा।
नमें सुरा सुर आय ऐसी श्री जिन महिमा॥३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ भद्रशालवनस्थित पश्चिमदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

भद्रशाल वन मध्य उत्तर दिशि चैत्यालय।
एक शतक अरु आठ जिन प्रतिमा मंगलमय॥
सुर विद्याधर साधु दर्शन आय करें जी।
हम भी पूजें नाथ भव ज्वर ताप हरें जी॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ भद्रशालवनस्थित उत्तरदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

सुदर्शन मेरु नंदन वन संबंधी चार जिनालय

रोला

नंदन वन के पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर।
चार गगन चुम्बी जिन चैत्यालय अति सुन्दर॥
जल गंधाक्षत पुष्प सुचरु ले दीप धूप फल।
भाव द्रव्य पूजन से मन होता अति निर्मल॥

छंद – चौपाई

नन्दन वन पूरब जिनगेहा। भक्ति सहित वन्दूँ धर नेहा॥
एक शतक वसु प्रतिमा सोहें। ऋषि मुनि यति सुर के मन मोहें॥५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ नन्दनवनस्थित पूर्वदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

नंदन वन दक्षिण में नामी । जिन मंदिर अनुपम अभिरामी ॥
ऋषि मुनि गणधर शीष नवाते । भक्ति भाव से जिनगृह ध्याते ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ नन्दनवनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयजिन-बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

नंदन वन पश्चिम दिशि जाऊँ । जिन चैत्यालय शीष झुकाऊँ ॥
नृत्य वाद्य संगीत सुनाऊँ । पूजन कर उर मे हर्षाऊँ ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ नन्दनवनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयजिन-बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

नन्दनवन उत्तर दिशि जानो । जिन चैत्यालय सुन्दर मानो ॥
मान स्तंभ सुशोभित भारी । चौमुख जिन प्रतिमा मनहारी ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ नन्दनवनस्थित उत्तरदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

सुदर्शन मेरु सौमनस वन संबंधी चार जिनालय

रोला

सुवन सौमनस चार जिनालय सादर वन्दूँ ।
पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर जिन अभिनन्दूँ ॥
जल गंधाक्षत पुष्प सुचरु ले दीप धूप फल ।
भाव द्रव्य पूजन से मन होता अति निर्मल ॥

छंद - त्रोटक

जय मेरु सुदर्शन स्वर्णमयी । सौमनस सुवन बहु वर्णमयी ॥
है पूर्व दिशा में जिन मंदिर । पूजूँ वसु द्रव्य सजा जिनवर ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ सौमनसवनस्थित पूर्वदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

सौमनस सुवन दक्षिण दिशि में । हम ध्यान करें दिन में निशि में।
अरहंतों का देवालय है । अकृत्रिम भव्य जिनालय है ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ सौमनसवनस्थित दक्षिणदिक्जिनालयजिन-बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

सौमनस सुवन पश्चिम जाऊँ । चैत्यालय दर्शन कर आऊँ ॥
सम्यग्दर्शन की निधि पाऊँ । निश्चय रत्नत्रय उर लाऊँ ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ सौमनसवनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयजिन-बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

सौमनस सुवन उत्तर अनुपम। जिन चैत्यालय पावन उत्तम।
इकशत वसु हैं जिन प्रतिमाएँ। अति दर्शनीय मन को भाएँ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ सौमनसवनस्थित उत्तरदिक्‌जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

सुदर्शन मेरु पान्डुक वन संबंधी चार जिनालय

रोला

मेरु सुदर्शन पान्डुक वन की चार दिशाएँ।
चारों ही चैत्यालय जिन महिमा दर्शाएँ॥
जल गंधाक्षत पुष्प सुचरु ले दीप धूप फल।
भाव द्रव्य पूजन से होता मन अति उज्ज्वल॥

छंद – चान्द्रायण

मेरु सुदर्शन पान्डुक वन सुललाम है।
तीर्थंकर जन्माभिषेक का धाम है॥
पूर्व दिशा में जिन चैत्यालय जानिए।
पूजन करके सर्व पाप मल हानिए॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ पान्डुकवनस्थित पूर्वदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

पान्डुक वन दक्षिण में जिन गृह सोहता।
इन्द्रादिक सुर मुनियों के मन मोहता॥
एक शतक वसु बिम्ब चिरंतन भव्य है।
कलश ध्वजा तोरण सब कुछ द्रष्टव्य है॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ पान्डुकवनस्थित दक्षिणदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

पान्डुक वन पश्चिम दिशि गृह सुखकार है।
गूँज रही जिन प्रभु की जय जय कार है॥
प्रातिहार्य वसु से शोभित जिन बिम्ब हैं।
भव्य देखते इनमें निज प्रतिबिम्ब हैं॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ पान्डुकवनस्थित पश्चिमदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

पान्डुक वन उत्तर दिशि जिन चैत्यालयम् ।
एक शतक वसु मूर्ति सहित सिद्धालयम् ॥
पद्मासन नासाग्र दृष्टि मुद्रा परम ।
विनय सहित पूजूँ जिनराज जिनेश्वरम्॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ पान्डुकवनस्थित उत्तरदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

महार्घ्य

दोहा

पूजे अस्सी चैत्य गृह पावन परम पुनीत।
श्री अरहंत महान की महिमा वचनातीत॥

छंद - दिग्पाल

रागादि भाव होगा तो ज्ञान नहीं होगा ।
उर में विकल्प होगा तो ध्यान नहीं होगा ॥
तत्त्वाभ्यास के बिन निर्णय न निज का होगा ।
सम्यक्त्व प्राप्ति के बिन निज भान नहीं होगा ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ निरखूँ निज चिद्रूप ।
भाव भासना प्राप्त कर परखूँ अपना रूप ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ एक हजार सात सौ अट्ठाईस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद - दोहा

सम्यग्दर्शन मुक्ति का प्रथम श्रेष्ठ सोपान ।
जो धारण करते इसे पाते पद निर्वाण ॥
सम्यग्दर्शन हेतु हम करते तत्त्व विचार ।
मैं हूँ परमानन्दमय समयसार अविकार ॥

छंद - मानव

पावन समकित बन पाहुन, आए चेतन के अंगना ।
पायलिया बजी सुमति की बाजे समता के कंगना ॥

चिर प्यासी उर सीपी में समकित के मोती बरसे ।
चिन्तामणि रत्न मिला रे जिसको भव–भव से तरसे ॥
द्वादश भावना मनोरम रमणीय नृत्य करती हैं ।
वैराग्य भाव की मन में भावना भव्य भरती हैं ॥
जीवों की करुणा गहरी उर में हृदयस्पर्शी है ।
यह बन्ध मोक्ष के प्रति भी अन्तर में समदर्शी है ॥
समता रसमय अमृत की अन्तर में धारा बहती ।
चारित्र ज्ञान की गंगा साधना साधती रहती ॥
श्रद्धा की वन्दनवारें जिन में विवेक की लड़ियाँ ।
संशय का लेश न किंचित आई अनुभव की घड़ियाँ ॥
वसुधा की माया ममता बहका न इसे पायेगी ।
मद मोह लोभ की छलना हारेगी थक जायेगी ॥
बाह्यान्तर में मुनि मुद्रा होगी निर्ग्रंथ दिगम्बर ।
चरणों में झुक जाएगा सादर विनीत भू अम्बर ॥
ज्ञानी के अन्तस्तल में चमकी त्रिगुप्ति की मणियाँ ।
तप द्वारा कर्म झरेंगे टूटेंगी भव की कड़ियाँ ॥
सुखसागर कर्म जयी बन भव का प्रचण्ड दुख हरकर ।
निर्वाण प्राप्त कर लेगा घट में अखण्ड सुख भरकर ॥
यश तिलक शुभ्र हीरे सम जगमग जगमग दमकेगा ।
जगती में गौरव गाथा का विमल चन्द्र चमकेगा ॥
नर से अर्हन्त सिद्ध हो त्रैलोक्य पूज्य अविनाशी ।
संसार विजेता होगा जिसने निज ज्योति प्रकाशी ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

वीर छंद

मेरु सुदर्शन सोलह जिनगृह चारों दिशि के पूजे आज ।
चारों वन की चारों दिशि में अर्घ्य चढ़ाए हैं जिन राज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश महान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

ॐ

श्री जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजन

स्थापना

छंद रोला

मेरु सुदर्शन सम्बंधी गजदंत जिनालय।
चारों विदिशाओं में है ये जिन चैत्यालय ॥
विनय सहित पूजन करता हूँ भक्ति भाव से।
पूजन फल पाऊँ प्रभु जुड़ अपने स्वभाव से ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद – विजया

ज्ञान की चंद्रिका ने प्रणत हो कहा
रोग संसार के त्रय महा दुखमयी।
नीर सम्यक्त्व ही शुद्ध पावन सहज
आत्मा को सदा ही परम सुखमयी ॥
चार गजदंत जिनगृह मैं पूजूँ सदा
चारों विदिशा में मेरु सुदर्शन के पास।
ज्ञान की भावना भाऊँ मैं रात दिन
मोक्ष में जाऊँ पाऊँ मैं शाश्वत निवास ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

शुद्ध चंदन की महिमा से शोभित बनूँ
ताप संसार का मैं करूँ अब विनाश।
रूप की माधुरी से बचूँ मैं सदा
मैंने पाया है अब पूर्ण पावन प्रकाश॥
चार गजदंत जिनगृह मैं पूजूँ सदा
चारों विदिशा में मेरु सुदर्शन के पास।
ज्ञान की भावना भाऊँ मैं रात दिन
मोक्ष में जाऊँ पाऊँ मैं शाश्वत निवास॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

शुद्ध अक्षत स्वरूपी है यह आत्मा
अक्षय पद पाने का अब समय आ गया।
ज्ञान की चाँदनी की कृपा से प्रभो
अपना शुद्धात्मा ही मुझे भा गया॥
चार गजदंत जिनगृह मैं पूजूँ सदा
चारों विदिशा में मेरु सुदर्शन के पास।
ज्ञान की भावना भाऊँ मैं रात दिन
मोक्ष में जाऊँ पाऊँ मैं शाश्वत निवास॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि.।

शील पुष्पों की महिमा सुहायी मुझे
दशा निष्काम पाऊँ सदा को प्रभो।
शील की भावना पूर्ण जाग्रत हुई
अपनी शुद्धात्मा में सदा को विभो॥
चार गजदंत जिनगृह मैं पूजूँ सदा
चारों विदिशा में मेरु सुदर्शन के पास।
ज्ञान की भावना भाऊँ मैं रात दिन
मोक्ष में जाऊँ पाऊँ मैं शाश्वत निवास॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

स्वानुभव के सुचरु आज भाए प्रभो
मैं निराहारी हूँ ज्ञान मुझको मिला।
अपना तृप्त स्वभाव सदा पूज्य हैं
शुद्ध ज्ञान सुसम्यक् हृदय में झिला॥
चार गजदंत जिनगृह मैं पूजूँ सदा
चारों विदिशा में मेरु सुदर्शन के पास।
ज्ञान की भावना भाऊँ मैं रात दिन
मोक्ष में जाऊँ पाऊँ मैं शाश्वत निवास॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

ज्ञान का दीप मैंने जलाया है अब
मोह मिथ्यात्व का नाश भी कर दिया।
अपने भीतर विराजित हुआ नाथ अब
मैंने अंधियारा सारा ही क्षय कर लिया॥
चार गजदंत जिनगृह मैं पूजूँ सदा
चारों विदिशा में मेरु सुदर्शन के पास।
ज्ञान की भावना भाऊँ मैं रात दिन
मोक्ष में जाऊँ पाऊँ मैं शाश्वत निवास॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

ज्ञान की धूप पायी है मैंने सहज
शुक्ल ध्यान से कर्म जलाऊँगा सब।
मैंने अपना स्व निश्चय सुनिश्चित किया।
मैं तो प्रगटाऊँगा पूर्ण निज धर्म अब॥
चार गजदंत जिनगृह मैं पूजूँ सदा
चारों विदिशा में मेरु सुदर्शन के पास।
ज्ञान की भावना भाऊँ मैं रात दिन
मोक्ष में जाऊँ पाऊँ मैं शाश्वत निवास॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

मोक्ष पद की भी तो चाह मुझको नहीं
मैं तो मोक्ष स्वरूपी सदा से ही हूँ।
सिद्ध पर्याय का भी नहीं लोभी हूँ
मैं तो सिद्ध स्वरूपी सदा से ही हूँ॥
चार गजदंत जिनगृह मैं पूजूँ सदा
चारों विदिशा में मेरु सुदर्शन के पास।
ज्ञान की भावना भाऊँ मैं रात दिन
मोक्ष में जाऊँ पाऊँ मैं शाश्वत निवास॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य कल तक चढ़ाए विभावी बहुत
अब चढ़ाऊँगा निज अर्घ्य शिव सुखमयी।
त्याग की भावना उर में जागी है प्रभु
मोह ममता तजूँगा मैं भव दुखमयी॥
यह परिग्रह तजूँ मैं अकिंचन बनूँ
नष्ट कर दूँ मैं संसार के दंभ को।
अपनी शुद्धात्मा का ही दर्शन करूँ
शीघ्र प्रगटाऊँ अपने परम ब्रह्म को॥
चार गजदंत जिनगृह मैं पूजूँ सदा
चारों विदिशा में मेरु सुदर्शन के पास।
ज्ञान की भावना भाऊँ मैं रात दिन
मोक्ष में जाऊँ पाऊँ मैं शाश्वत निवास॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

सोरठा

गजदंतों के चार चैत्यालय वन्दूँ प्रभो।
पाऊँ सौख्य अपार आत्मा ही ध्याऊँ विभो॥

सुदर्शन मेरु गजदंत चार जिनालय

दोहा

हस्ति दंत सम जानिए चारों ही गजदंत ।
चार शतक बत्तीस हैं जिन प्रतिमा भगवंत ॥

वीर छंद

मेरु सुदर्शन आग्नेय विदिशा में गिरि गजदंत महान ।
महिमा धारी महा सौमनस सात कूट में एक प्रधान ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरोः आग्नेयविदिशि महासौमनसगजदन्तस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

है नैऋत्य दिशा में विद्युत्प्रभ गजदंत मनोज्ञ विशाल ।
नव कूटों में एक कूट पर स्वर्णिम चैत्यालय गिरिभाल॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरोः नैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभगजदन्तस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

है वायव्य कोण में पर्वत गंध मादनाचल अतिभव्य ।
सप्तकूट में एक कूट पर जिन चैत्यालय है द्दष्टव्य ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरोः वायव्यविदिशि गंधमादनगजदन्तस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

है ईशान दिशा में सुन्दर माल्यवान पर्वत गजदंत ।
नव कूटों से युक्त मनोहर एक कूट पर गृह भगवंत ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरोः ईशानविदिशि मान्यवानगजदन्तस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

महार्घ्य

वसंततिलका

है पाप भाव नर्कादिक दुक्ख दाता ।
है पुण्य भाव नश्वर सुर सौख्य दाता ॥
जो पुण्य पाप तज कर निज रूप ध्याता ।
वह शुद्ध भाव द्वारा ध्रुव सौख्य पाता ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ गृह गजदंत महान।
शुद्ध निर्जरा शक्ति से पाऊँ पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरूसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ चार सौ बत्तीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

शार्दूलविक्रीडित

गजदंतों के चार गेह वन्दूँ पूजन करूँ भाव से।
हो जाऊँ अब पूर्ण स्वस्थ है प्रभु संसार के घाव से॥
कर्मों की व्याधियाँ नष्ट करके निष्कर्म होऊँ प्रभो।
हो जाऊँ निर्भार नाथ अब मैं है भाव उर में विभो॥

छंद मानव

अभिनव श्रृंगार सजा कर निज परिणति उर में आती।
पर परिणति कुलटा तत्क्षण सम्पूर्ण विलय हो जाती॥
उर भेदज्ञान नचता है लेकर विवेक निज उर में।
ज्ञानाब्धि तरंगित होता अपने भीतर निज पुर में॥

सांस्कृतिक धरोहर मिलती हो सफल परिश्रम तत्क्षण।
अनुभव रस विकसित होता चेतन के मन में प्रतिक्षण॥
क्षायिक श्रेणी चढ़ते ही उर यथाख्यात आता है।
संयम का फल चेतन को परमोत्तम मिल जाता है॥

यह मोह क्षीण थल पाकर घातिया नाश करता है।
कैवल्य ज्ञान का अनुपम उर में प्रकाश भरता है॥
यह गुणस्थान तेरहवाँ कुछ दिन का अतिथि समझ लो।
चौदहवाँ पाकर तज दो फिर अपना सिद्ध स्वपद लो॥

रस गंध पर्श रूपादिक सब चले गए अपने घर।
जितने भी आडंबर थे वे हुए स्वयं क्षय सत्वर॥

छूटा परमौदारिक तन कार्माण वर्गणा नाशी ।
चैतन्य राज हो जाता शाश्वत शिवपुर का वासी ॥

आनंदघन हुआ चेतन ज्ञानामृत रस पीता है ।
यह सादि अनंतानंतों कालों तक ध्रुव जीता है ॥
है गुण अनंत मणियों से शोभित ध्रुव पूर्ण त्रिकाली ।
इसकी अचिन्त्य महिमा है त्रिभुवन में परम निराली ॥

आत्माश्रय समकित दाता आत्माश्रय संयमदाता ।
आत्माश्रय शिव सुख दाता आत्माश्रय मोक्ष प्रदाता ॥
आत्माश्रय की महिमा से जिन आगम भरा हुआ है ।
आत्माश्रय जल से ही तो यह आतम हरा हुआ है ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. ।

आशीर्वाद

वीर छंद

मेरु सुदर्शन संबंधी गजदंत जिनालय पूजे चार ।
सम्यग्ज्ञान सूर्य पाने का जागा उर में श्रेष्ठ विचार ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

भजन

कामना के पर्वत पर भावना नहीं रहती ।
वासना की घाटी में आत्मा नहीं बहती ॥
राग द्वेषादिक से कर लिया किनारा अब ।
इसलिए भवदुख को आत्मा नहीं सहती ॥
ज्ञेय ज्ञान ज्ञाता का सब विकल्प तोड़ दो ।
दिव्य ध्वनि खिरती है सारी बातें कहती ॥

ॐ

श्री जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - दोहा

जम्बू शाल्मलि वृक्ष पर दो चैत्यालय श्रेष्ठ ।
दोनों की पूजन करूँ तजूँ वासना नेष्ठ ॥

उत्तर कुरु ईशान दिशि जम्बू वृक्ष प्रधान ।
देवकुरु नैऋत्य दिशि शाल्मलि वृक्ष महान ॥

दो सौ सोलह बिम्ब जिन रत्नमयी छविमान ।
पृथ्वीकायिक वृक्ष हैं जय जय जय भगवान ॥

प्रासुक द्रव्य चढ़ा प्रभो करूँ तत्त्व अभ्यास ।
मैं भी सिद्ध समान हूँ हुआ मुझे विश्वास ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्ष जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्ष जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्ष जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - राधिका (लावनी)

जन्मादि रोग त्रय नाश करूँ हे स्वामी ।
भावों का जल लाया हूँ अन्तर्यामी ॥
मैं जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय वन्दूँ ।
आत्मीय भावना भा तुव पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

भव ज्वर की तपन शान्त कर दूँ हे स्वामी।
संसार ताप क्षय हो हे अन्तर्यामी ॥
मैं जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय वन्दूँ।
आत्मीय भावना भा तुव पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

भव सागर तरने का पुरुषार्थ जगाऊँ।
अक्षय पद पाने को भव राग भगाऊँ ॥
मैं जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय वन्दूँ।
आत्मीय भावना भा तुव पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

चिर काम बाण पीड़ा सर्वांश मिटाऊँ।
जितने बाधक कारण हैं उन्हें हटाऊँ ॥
मैं जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय वन्दूँ।
आत्मीय भावना भा तुव पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

नैवेद्य सलोने अनुभव रस मय लाऊँ।
चिर क्षुधा रोग जय कर शिव पद प्रगटाऊँ ॥
मैं जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय वन्दूँ।
आत्मीय भावना भा तुव पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोहान्धकार क्षय की पायी है बेला।
कैवल्य ज्ञान का दीप जले अलबेला ॥
मैं जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय वन्दूँ।
आत्मीय भावना भा तुव पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

निज शुक्ल ध्यान की धूप अनूठी लाऊँ।
कर्माग्नि बुझाऊँ शाश्वत निजपद पाऊँ ॥
मैं जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय वन्दूँ।
आत्मीय भावना भा तुव पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

निज आत्म ध्यान फल पाऊँ मेरे स्वामी।
फल मोक्ष प्राप्त हो निरूपम अन्तर्यामी ॥
मैं जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय वन्दूँ।
आत्मीय भावना भा तुव पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

निजगुणमय अर्घ्य अपूर्व बनाऊँ स्वामी।
पदवी अनर्घ्य पाऊँ निज त्रिभुवन नामी ॥
भव तिमिर नाश ध्रुव ज्योति अपूर्व जगाऊँ।
निज ज्ञान भवन के भीतर ही जम जाऊँ ॥
मैं जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय वन्दूँ।
आत्मीय भावना भा तुव पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

दोहा

जम्बू शाल्मलि वृक्ष के दो चैत्यालय पूज।
आत्म ज्ञान से प्राप्त हो शीघ्र मुक्ति की दूज ॥

छंद – उपजाति

संसार सागर वीभत्स भीषण।
गति चार के द्रह भव दुक्खदायी ॥

जम्बू सुतरु पर जिनगेह पूजूँ ।
जिनबिम्ब शाश्वत शिव सौख्यदायी॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूवृक्षस्थितजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

नरकादि भव दुख अब क्षय करूँ मैं ।
पंचम स्वगति का आनंद पाऊँ ॥
शाल्मलि सुतरु पर जिनधाम पूजूँ ।
स्वात्मानुभव कर शिव सौख्य लाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि शाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

महार्घ्य

छंद - शार्दूलविक्रीड़ित

ज्ञानानंद स्वरूप आत्मा का सम्पूर्णतः ज्ञानमय ।
सम्यग्दर्शन ज्ञान शुद्ध चारित है पूर्णतः ध्यानमय ॥
निश्चय पूर्वक मोक्ष मार्ग पाऊँ, पाऊँ यथाख्यात प्रभु ।
क्षय कर घाति अघाति कर्म सारे सिद्धत्व हो सौख्यमय ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ जम्बू शाल्मलि वृक्ष ।
निज स्वभाव की प्राप्ति में हो जाऊँ मैं दक्ष ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ दो सौ सोलह जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद - ताटंक

जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय दोनों को मैं करूँ नमन ।
समकित का निज वासित जल पी मिथ्या भ्रम का करूँ वमन ॥
समकित चंदन तिलक लगाऊँ करूँ ज्ञान धारा से नेह ।
वीतराग विज्ञान प्राप्त कर शिव सुख पाऊँ निःसंदेह ॥

समकित अक्षत धवल मंगाऊँ निज अक्षय पद कर लूँ प्राप्त ।
भव समुद्र को प्राप्त करूँ मैं हो जाऊँ फिर हे प्रभु आप्त ॥
समकित उपवन के पुष्पों की गंध कामशर करती नाश ।
महाशील की सुरभि सुहाती निज में करता जीव निवास ॥

समकित के चरु निज अनुभव रस निर्मित जो भी पाते हैं ।
निराहार गुण तृप्तमयी पा क्षुधारोग विनशाते हैं ॥
समकित के निज दीपक जगमग जगमग देते ज्ञान प्रकाश ।
मोह महातम क्षय करते हैं उर में आती दिव्य सुवास ॥

समकित रूपी धर्म धूप मिलते ही शुक्ल ध्यान होता ।
अष्ट कर्म भी इकशत अड़तालीस प्रकृति की द्युति खोता ॥
समकित के तरु फल पाते ही महामोक्ष फल मिल जाता ।
शाश्वत निजानंद निज उर में निमिष मात्र में झिल जाता ॥

समकित के गुण मय अर्घ्यों की पाकर महिमा अपरंपार ।
गुण सिद्धत्व प्रगट होता है जिय होता भवसागर पार ॥
महाअर्घ्यमय दिव्य आरती गाते हैं इन्द्रादिक देव ।
जयमाला गाकर कहते हैं हम भी सिद्ध बनें स्वयमेव ॥

दोहा

जम्बू शाल्मलि वृक्ष पर पूजे श्री जिनराज ।
आप कृपा से प्राप्त हो हे प्रभु निज पद राज ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि जम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ जिन-बिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद - वीर

जम्बू शाल्मलि वृक्ष जिनालय दोनों पूजे मैंने आज ।
वीतराग अरहंत मूर्तियों के दर्शन पाए जिनराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः ।

ॐ

श्री सुदर्शन मेरु संबंधी षोडश वक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - सरसी

मेरु सुदर्शन सम्बन्धी पर्वत सोलह वक्षार ।
एक एक पर एक जिनालय पूजूँ हो अविकार ॥
एक शतक वसु प्रतिमाओं से शोभित हैं जिनधाम ।
मंगल द्रव्य चढ़ाऊँ प्रासुक सविनय करूँ प्रणाम ॥
प्रभु प्रतिमा सतरह सौ अट्ठाईस रत्नमय श्रेष्ठ ।
एकमात्र चैतन्य भाव ही सब भावों में ज्येष्ठ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - गीत

संयम की तरणी भव सागर तरे ।
जन्मादि रोग त्रय पल में हरे ॥
वक्षार सोलह जिनालय नमन ।
पाँचों ही मिथ्यात्व कर दूँ वमन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

संयम का चंदन भव ज्वर को हरे ।
शीतल सहज भाव उर में भरे ॥

वक्षार सोलह जिनालय नमन ।
पाँचों ही मिथ्यात्व कर दूँ वमन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

संयम के अक्षत की महिमा अपार ।
ले जाते भव्यों को भवसागर पार ॥
वक्षार सोलह जिनालय नमन ।
पाँचों ही मिथ्यात्व कर दूँ वमन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि. ।

संयम के पुष्पों की गंध है महान ।
निष्काम भावना देती प्रधान ॥
वक्षार सोलह जिनालय नमन ।
पाँचों ही मिथ्यात्व कर दूँ वमन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

संयम के नैवेद्य भव पथ क्षयी ।
हरते क्षुधा रोग भव दुख मयी ॥
वक्षार सोलह जिनालय नमन ।
पाँचों ही मिथ्यात्व कर दूँ वमन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

संयम के दीपों की आभा प्रसिद्ध ।
मोह तम हर प्राणी हो जाते सिद्ध ॥
वक्षार सोलह जिनालय नमन ।
पाँचों ही मिथ्यात्व कर दूँ वमन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

संयम की धूप कर्म आठों जलाय ।
साधक को निश्चित ही शिवपुर ले जाय ॥

वक्षार सोलह जिनालय नमन ।
पाँचों ही मिथ्यात्व कर दूँ वमन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

संयम के फल करते मोक्ष प्रदान ।
अन्तर्मुहूर्त में देते निर्वाण ॥
वक्षार सोलह जिनालय नमन ।
पाँचों ही मिथ्यात्व कर दूँ वमन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

संयम के पौरुष का अर्घ्य महान ।
हो जाता जीव यह पल में भगवान ॥
जिनवर की पूजन कर आनंद करूँ ।
सम्पूर्ण आनंद उर में धरूँ ॥
वक्षार सोलह जिनालय नमन ।
पाँचों ही मिथ्यात्व कर दूँ वमन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – वसंततिलका

हैं दर्शनीय सोलह वक्षार जिनगृह ।
है वीतराग मुद्रा परिपूर्ण निस्पृह ॥
है वन्दनीय शुद्धात्मा निज मनोहर ।
तत्त्वोपदेश निर्मल जो सर्व दुखहर ॥

छंद – सरसी

पूर्व विदेह नदी सीता के उत्तर तट पर चार ।
पूर्व विदेह नदी सीता के दक्षिण तट पर चार ॥
हैं पश्चिम विदेह सीतोदा के दक्षिण में चार ।
अरु पश्चिम विदेह सीतोदा के उत्तर तट चार ॥

इन सोलह वक्षारों पर जिन चैत्यालय छविमान ।
विनय भाव से पूजा करके मैं भी बनूँ महान ॥

पूर्व विदेह सीता नदी के उत्तर तट के चार ज़िनालय

छंद – ताटंक

सीता सरिता उत्तर तट पर भद्रशाल वेदी अनुपम ।
चित्रकूट वक्षार स्वर्णमय चार कूट युत है अनुपम ॥
सरित ओर के सिद्धकूट पर श्री जिन चैत्यालय पावन ।
अर्घ्य चढ़ाऊँ जिन प्रतिमाएँ नित प्रति वन्दूँ मन भावन ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीता सरिता उत्तर तट पर पद्म कूट वक्षार प्रसिद्ध ।
स्वर्ण वर्ण का चार कूट युत वन शोभा से सदा समृद्ध ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नलिन कूट वक्षार मनोहर सुर सुरांगना नृत्य करें ।
श्री जिन चैत्याालय दर्शन कर सकल पाप मल त्वरित हरें ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

एक शैल वक्षार स्वर्णमय सीता के उत्तर तट पर ।
समभावी भावों के अधिपति पूजूँ भाव सहित जिनवर ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे एकशैलवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पूर्व विदेह सीता नदी के दक्षिण तट के देवारण्य के चार जिनालय

वीर छंद

पूर्व विदेह सरित सीता के दक्षिण तट चारों वक्षार ।
वीतराग अरहंत देव की यहाँ गूँजती जय जय कार ॥

सीता सरिता दक्षिण तट पर वेदी देवारण्य विशाल।
है त्रिकूट वक्षार चार कूटों से युक्त झुकाऊँ भाल ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे त्रिकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीता सरिता दक्षिण तट वैश्रवण कूट वक्षार महान।
ऋषि मुनि यति विद्याधर सुर इन्द्रादिक करते जय जय गान॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे वैश्रवणकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंजनात्मक गिरि वक्षार नदी सीता दक्षिण तट पर।
ऋद्धिधारि मुनि वंदन करते निज स्वभाव में हो तत्पर ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे अंजनात्मावक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीता सरिता दक्षिण तट अंजन वक्षार मनोहर हैं।
निज स्वभाव रस वर्षा पाने का यह सुन्दर अवसर है ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे अंजनात्मावक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पश्चिम विदेह सीतोदा नदी दक्षिण तट भद्रशाल वेदी के चार जिनालय

छंद - वीर

प्रथम मेरु पश्चिम विदेह सीतोदा सरिता दक्षिण चार।
हैं वक्षार सुशोभित स्वर्णिम नमन करूँ मैं बारंबार ॥
सीतोदा के दक्षिण तट पर भद्रशाल वेदी मनहर।
निकट एक वक्षार स्वर्ण मय श्रद्धावान नाम सुन्दर ॥
सरित ओर के सिद्ध कूट पर जिन चैत्यालय मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाऊँ जिन प्रतिमाएं नित प्रति वन्दूँ बारंबार ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरितादक्षिणतटे श्रद्धावान वक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीतोदा के दक्षिण तट पर गिरि वक्षार सुविजटावान ।
चार कूट से युक्त मनोहर अति उत्तम है महिमा वान ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरितादक्षिणतटे विजटावान वक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

सीतोदा के दक्षिण तट पर है आशीविष गिरि वक्षार ।
चंपक आम अशोक सप्तछद वृक्षों से शोभित मनहार ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरितादक्षिणतटे आशीविष वक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

है वक्षार सुखावह सुन्दर सीतोदा दक्षिण पावन ।
यति मुनियों की तपोभूमि है स्वर्णमयी अति मन भावन ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरितादक्षिणतटे सुखावह वक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पश्चिम विदेह सीतोदा सरिता उत्तर तट देवारण्य वेदी के चार जिनालय

छंद - वीर

प्रथम मेरु पश्चिम विदेह सीतोदा सरिता उत्तर चार ।
है वक्षार सुशोभित मंदिर नमन करूँ मैं बारंबार ॥
सीतोदा के उत्तर तटपर वेदी देवारण्य प्रसिद्ध ।
चंद्रमाल वक्षार श्रृंग पर वन उपवन वादी सुप्रसिद्ध ॥
सरित ओर के सिद्ध कूट पर जिन चैत्यालय मंगलकार ।
अर्घ्य चढ़ा कर जिन प्रतिमाएँ नित प्रति वन्दूँ बारंबार ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे चन्द्रमाल वक्षार स्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

सूर्य माल वक्षार सरित सीतोदा के उत्तर दिशि एक ।
सुर विद्या धर ऋषि मुनि गण धर दर्शन से हर्षित प्रत्येक ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमाल वक्षार स्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

नाग माल वक्षार सरित सीतोदा के उत्तर अनुपम ।
मोह तिमिर के क्षय करने में प्रभु मैं हुआ आज सक्षम ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे नागमाल वक्षार स्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

देवमाल वक्षार सरित सीतोदा के उत्तर तट पर ।
रत्नमयी जिनबिम्ब विराजे नृत्यगान होता मनहर ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धितपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे देवमाल वक्षार स्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - दिग्पाल

स्वाध्याय की सुरुचि से निर्मल स्वरूप निरखो।
फिर भेदज्ञान होगा अज्ञान नहीं होगा ॥
संयम हृदय में होगा तो जीतोगे असंयम ।
अविरति को बिना जीते कल्याण नहीं होगा ॥

दोहा

महा अर्घ्य अर्पण करूँ, करूँ भेद विज्ञान।
पूर्ण सौख्य की प्राप्ति हित करूँ आत्म श्रद्धान॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारजिनालयस्थ एक हजार सात सौ अट्ठाईस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद - दोहा

जिन प्रभु का उपदेश सुन करूँ तत्त्व का ज्ञान।
छह द्रव्यों को जानकर आत्मतत्त्व लूँ जान॥

छंद - दिग्वधू
(चाल - हे दीनबन्धु)

जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था को मान लूँ ।
छह द्रव्य में अनंत जीव द्रव्य मान लूँ ॥
पुद्गल अनंतानंत धर्मद्रव्य एक है ।
अधर्म द्रव्य एक है आकाश एक है ॥
है कालद्रव्य लोक के प्रमाण असंख्यात ।
प्रत्येक द्रव्य में अनंतानंत गुण विख्यात ॥

प्रत्येक गुण में एक समय एक ही पर्याय।
उत्पाद और व्यय की गुण ध्रौव्य ही रहाय ॥
प्रत्येक द्रव्य के गुणों में हो रहा है यह।
होता ही रहेगा सदा होता रहा है यह ॥
अनादि निधन वस्तुएँ सब भिन्न-भिन्न हैं।
परिणमित होती अपनी मर्यादा सहित हैं ॥
कोई न किसी से कभी होता है परिणमित।
कोई भी किसी के नहीं आधीन है किंचित् ॥
पर परिणमन का भाव है संसार दुःखमयी।
संपूर्ण दुःख अभाव का है मंत्र सुखमयी ॥
यह है जिनेन्द्र वाणी स्व कल्याणमयी है।
माने जो सि निश्चय वह कर्मजयी है ॥

ढोहा

पूजे मैंने भाव से गृह सोलह वक्षार।
तत्त्व ज्ञान की शक्ति से पाऊँ ज्ञान अपार ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद - वीर

मेरु सुदर्शन वक्षारों के सोलह जिन गृह पूजे आज।
वीतराग अरहंत कृपा पा शीघ्र बनूँगा लघु जिनराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः।

卐

श्री जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय

स्थापना

छंद - चौपई

जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरु। के विजयार्ध सुगिरि जिन गेह।
संख्या में चौंतीस महान। वन्दन करूँ तुम्हें भगवान॥
पूजन करूँ विनय से नाथ। तुव चरणों का तजूँ न साथ।
पूजन फल पाऊँ अमलान। मिले शाश्वत पद निर्वाण॥

सोरठा

पूरव दिशा विदेह सोलह चैत्यालय परम।
पश्चिम सोलह गेह भरतैरावत एक इक॥

दोहा

तीन शतक अरु छह शतक सहित बहात्तर बिम्ब।
भाव सहित वन्दन करूँ देखूँ निज प्रतिबिम्ब॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - विधाता

भावमय नीर लाऊँ मैं, भावना शुद्ध भाव भाऊँ मैं।
जन्म मरणादि दुख नाशूँ सिद्ध पद शीघ्र पाऊँ मैं॥

भव्य चौंतीस चैत्यालय सुगिरि विजयार्ध के वन्दूँ।
भावना ज्ञानमय भाऊँ सर्व जिनबिम्ब अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भाव चंदन सहज शीतल विनय से आज लाऊँ मैं।
भवातप ज्वर विनाशूँ मैं पूर्ण आनन्द पाऊँ मैं॥
भव्य चौंतीस चैत्यालय सुगिरि विजयार्ध के वन्दूँ।
भावना ज्ञानमय भाऊँ सर्व जिनबिम्ब अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

भाव अक्षत निरामय हों नहीं शुभ राग भी हो प्रभु।
स्वपद अक्षय मिले स्वामी बनूँ मैं भी स्वयंभू विभु॥
भव्य चौंतीस चैत्यालय सुगिरि विजयार्ध के वन्दूँ।
भावना ज्ञानमय भाऊँ सर्व जिनबिम्ब अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

भावमय पुष्प पावन ले करूँ जिनराज की पूजन।
काम शर दुखमयी क्षय कर विनाशूँ कुगति के बंधन॥
भव्य चौंतीस चैत्यालय सुगिरि विजयार्ध के वन्दूँ।
भावना ज्ञानमय भाऊँ सर्व जिनबिम्ब अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

साम्य भावी सुचरु लाऊँ तृप्त पद प्राप्त हो नामी।
क्षुधा की व्याधियाँ नाशूँ अनाहारी बनूँ स्वामी॥
भव्य चौंतीस चैत्यालय सुगिरि विजयार्ध के वन्दूँ।
भावना ज्ञानमय भाऊँ सर्व जिनबिम्ब अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

ज्ञान का दीप उजियारूँ तिमिर क्षय मोह का कर दूँ।
ज्ञान कैवल्य की गरिमा निजंतर में प्रभो भर लूँ ॥
भव्य चौंतीस चैत्यालय सुगिरि विजयार्ध के वन्दूँ।
भावना ज्ञानमय भाऊँ सर्व जिनबिम्ब अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

धूप निज ध्यान में अब तो कर्म आठों जलाऊँ मैं।
निरंजन नित्य पद अनुपम सहज भावों से पाऊँ मैं ॥
भव्य चौंतीस चैत्यालय सुगिरि विजयार्ध के वन्दूँ।
भावना ज्ञानमय भाऊँ सर्व जिनबिम्ब अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

मोक्ष फल प्राप्त करने का जगा पुरुषार्थ अभ्यंतर।
रत्न तीनों संवारूँ मैं पाँच प्रत्यय अभी हर कर ॥
भव्य चौंतीस चैत्यालय सुगिरि विजयार्ध के वन्दूँ।
भावना ज्ञानमय भाऊँ सर्व जिनबिम्ब अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य पर भाव वाले तो चढाए हैं सदा मैंने।
स्वपद पाऊँ अनर्घ्य अपना भाव भाए हैं अब मैंने ॥
विकारों से रहित होऊँ परिग्रह शून्य हो जाऊँ।
ज्ञान रूपी क्षुधा रस पी सदा को मुक्त हो जाऊँ ॥
भव्य चौंतीस चैत्यालय सुगिरि विजयार्ध के वन्दूँ।
भावना ज्ञानमय भाऊँ सर्व जिनबिम्ब अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

श्री सुदर्शन मेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध स्थित जिनालय

छंद - वसंततिलका

जम्बू सुमेरु विजयार्ध महान वन्दूँ ।
स्वर्णिम जिनालयों के जिनबिम्ब पूजूँ ॥
आनंदकंद अरहंत जिनेन्द्र ध्याऊँ ।
आत्मत्व गुण प्रगट कर शिव सौख्य पाऊँ ॥

चौपई

प्रथम मेरु के पूर्व विदेह। अरु विदेह पश्चिम जिन गेह ॥
सोलह सोलह पर्वत जान। रजताचल विजयार्ध महान ॥
दक्षिण एक भरत के जान। इक ऐरावत उत्तर मान ॥
ये विजयार्ध कहे चौंतीस। भाव सहित वन्दूँ जगदीश ॥
इक इक गिरि पर नौ नौ कूट। नौ नौ में इक सिद्ध सुकूट ॥
सिद्ध कूट जिन गृह स्वर्णिम। इक शत वसु प्रतिमा रत्निम ॥

प्रत्येक अर्घ्य

सुदर्शन मेरु पूर्व विदेहस्थ सोलह विजयार्ध जिनालय

दोहा

सीता उत्तर तट बसा कच्छा देश महान ।
भद्रशाल वेदी निकट आर्य खंड इक जान ॥
पर्वत इक वैताढ्य है नव कूटों से युक्त ।
सिद्ध कूट वन्दन करूँ जिन प्रतिमा संयुक्त ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुकच्छा देख कर मोहित होते सर्व ।
नर किन्नर गंधर्व का लज्जित होता गर्व ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महाकच्छा जहाँ ललित कला का धाम ।
तीर्थंकर उत्पन्न हो पाते शिव पुर धाम ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश कच्छकावती में होता जिनगुण गान ।
जिन ध्वनि सुनकर भव्य जन पाते केवलज्ञान ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेश मध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

यह आवर्त्ता देश है ऋषि मुनि करें विहार ।
शुक्ल ध्यान धर जा रहे कर्म नाश भव पार ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश लांगलावर्त की कर्म भूमि विख्यात ।
आर्य खंड में नित्य ही होता मंगल प्रात ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पुष्कला जानिए कर्म भूमि सुविचित्र ।
निज स्वभाव का ध्यान धर होते सभी पवित्र ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पुष्कलावती में श्रावक जन का वास ।
धर्म ध्यान धर साधु वन करते कर्म विनाश ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेश मध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद रोला

पूर्व विदेह नदी सीता के दक्षिण तट पर ।
देवारण्य वेदिका वत्सादेश मनोहर ॥
सिद्ध कूट रजताचल शीष सुशोभित सुन्दर ।
स्वर्ण कलश युत जिन चैत्यालय वन्दूँ सुखकर ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतासरिताद्दक्षिणतटे वत्सादेश मध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुवत्सा में वैताढ्य महापर्वत है।
छह खंडों में आर्य खंड उत्तम उन्नत है ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे सुवत्सादेश मध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महावत्सा है अनुपम शोभा न्यारी।
त्रेसठ पुरुष शलाका होते हैं गुणधारी ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे महावत्सादेश मध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वत्सकावती जहाँ तीर्थंकर होते।
वसु कर्मों को नाश सिद्ध अभ्यंकर होते ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे वत्सकावती देश मध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रम्यादेश प्रसिद्ध जहाँ पर कर्म भूमि है।
रत्नत्रय के लिए सदा ही धर्म भूमि है ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे रम्यादेश मध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुरम्या सदा चक्रवर्ती होते हैं।
छह खंडों को जीत राज्य अधिपति होते हैं ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे सुरम्यादेश मध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रमणीया है देश जहाँ नारायण होते।
प्रतिनारायण का अभिमान क्षणिक में खोते ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे रमणीयादेश मध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश मंगलावती जहाँ बलभद्र राजते।
नारायण का अंत जान निजराज साधते ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे मंगलावती देशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अर्घ्यावलि

सुदर्शन मेरु पश्चिम विदेहस्थ सोलह विजयार्ध जिनालय

छंद ताटंक

अपर विदेह नदी सीतोदा दक्षिण तट अति ही उत्तम ।
भद्रशाल वेदी के सुनिकट आठ देश सुन्दर अनुपम ॥
पचपन पचपन उभय दिशा में विद्याधर के नगर प्रधान ।
नव कूटों से युक्त एक विजयार्ध सभी देशों में जान ॥
एक कूट पर शाश्वत श्री जिन मंदिर भव्य अकृत्रिम है ।
आठों जिन चैत्यालय की शोभा अति अद्‌भुत है अनुपम है॥

सोरठा

पद्‌मादेश मझार रजताचल के शीष पर ।
पाऊँ पद अविकार श्री जिनवर पूजन करूँ ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुपद्‌मा मध्य रूपाचल के शीर्ष पर ।
करूँ आत्म कल्याण पूजूँ श्री जिन धाम मैं ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मा देश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महापद्‌मा बड़ा, आर्यखण्ड है एक ।
रूपाचल सिद्धायतन, पूजूँ धार विवेक ॥१९।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मा देश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रजताचल जिनधाम देश पद्‌मकावती में ।
सम्यग्दर्शन हेतु बार बार वन्दन करूँ ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मकावती देश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिन-बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

शंखा देश विचित्र रजता चल वैताढ्य है ।
पाऊँ सम्यग्ज्ञान दर्शन कर जिन चैत्य के ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नलिनादेश महान रजतमयी विजयार्ध पर ।
साम्य भाव चारित्र पाऊँ जिन पद पूज कर ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे नलिना देश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

कुमुदा देश प्रसिद्ध तीर्थंकर की जन्म भू ।
रत्नत्रय स्वीकार करूँ जिनालय पूज कर ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे कुमदा देश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सरित सुदेश प्रधान रूपाचल अति सोहता ।
पाऊँ शिवपुर थान विनय सहित पूजन करूँ ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे सरितदेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद - दोहा

सीतोदा उत्तर दिशा देवारण्य समीप ।
आठ देश में आठ हैं गिरि विजयार्ध महीप ॥
वप्रा के विजयार्ध पर पूजूँ श्री जिनगेह ।
सतत् निरंतर प्राप्त हो ज्ञान सुधा रस नेह ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे वप्रादेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुवप्रा जानिए रजताचल अभिराम ।
अष्ट मूल गुण धार कर पूजूँ मैं जिनधाम ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सुवप्रादेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महावप्रा महा रूपाचल के शीष ।
पाँचों अणुव्रत पालकर वन्दूँ श्री जगदीश ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे महावप्रादेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वप्रकावती में गिरि वैताढ्य मनोज्ञ ।
जिन प्रभु पूजन कर बनूँ प्रतिमा पालन योग्य ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे वप्रकावती देश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

गंधादेश महान में रूपाचल विख्यात ।
क्षुल्लक एलक हो नमूँ श्री जिनवर नित प्रात ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे गंधादेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुगंधा कर्म भू रजताचल है मध्य ।
मुनि पद धारण हेतु प्रभु नित्य चढ़ाऊँ द्रव्य ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सुगंधादेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश गंधिला पूज लूँ रूपाचल जिन गेह ।
विविध ऋद्धियाँ प्राप्त हो करूँ न उनसे नेह ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेश मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

गंध मालिनी देश में है विजयार्ध अचल ।
श्रेणी पाने को जजूँ श्री जिनवर अविचल ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनी मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सुदर्शन मेरु संबंधी भरत एवं ऐरावत क्षेत्रस्थ विजयार्ध जिनालय

छंद - वीर

मेरू सुदर्शन भरत क्षेत्र में नगरी मुख्य अयोध्या जान ।
रजताचल के श्री जिन चैत्यालय को मैं पूजूँ धर ध्यान ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि भरतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेरू सुदर्शन उत्तर ऐरावत में नगर अयोध्या जान ।
रजताचल के श्री जिन चैत्यालय को मैं पूजूँ धर ध्यान ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - ताटंक

शुद्ध आत्म अनुभूति बिना श्रेयस पद सदा असंभव है ।
स्वानुभूति पाना ही सबको भली भांति से संभव है ॥
सब समान हैं सिद्धों के सम गुण अनंत के धारी हैं ।
मोह ममत्व भाव जीवों को सदा महा दुखकारी हैं ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ प्राप्त करूँ निज धर्म ।
आत्म धर्म की शक्ति से नाशूँ आठों कर्म ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत् विजयार्धजिनालयस्थ तीन हजार छह सौ बहत्तर जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद - श्रृंगार

पारिणामिक स्वभाव मेरा । भाव पंचम है महामहान ।
त्रिकाली ध्रौव्य अनादि अनंत । शाश्वत ये ही है निर्वाण ॥
सुदर्शन मेरु समान अटल । अचल है सर्वोत्तम स्वस्वरूप ।
अनंतों गुण से है सम्पन्न । शुद्ध है ज्ञानानंदी रूप ॥
रागद्वेषादिक भावों से । सदा रक्षित है तीनों काल ।
नहीं परमाणु मात्र पर का । यही है पावन परम विशाल ॥
सहज अस्तित्व युक्त जीता । सहज स्वच्छत्व शक्ति से पूर्ण ।
अनंतों काल गए फिर भी । परम जीवंत भाव आपूर्ण ॥
नहीं पर्यायों का है मोह । नहीं है इसके भीतर राग ।
तरंगें उछला करतीं ध्रुव । स्वयं से ही है बहु अनुराग ॥
नहीं है प्रातिहार्य से प्रेम । नहीं मंगल द्रव्यों से नेह ।
नहीं देवोपम अतिशय राग । सिद्धपुर से है सदा सनेह ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – वीर

मेरु सुदर्शन विजयार्धों के चैत्यालय पूजे चौंतीस ।
निज स्वरूप का ज्ञान हो गया आप कृपा से हे जगदीश ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐

गगन मण्डल में उड़ जाऊँ

तीन लोक के तीर्थ क्षेत्र सब वंदन कर आऊँ ॥ गगन॥१॥
प्रथम श्री सम्मेद शिकर पर्वत पर मैं जाऊँ ।
बीस टोंक पर बीस जिनेश्वर चरण पूज ध्याऊँ ॥गगन॥२॥
अजित आदि श्री पार्श्वनाथ प्रभु की महिमा गाऊँ ।
शाश्वत तीर्थराज के दर्शन करके हर्षाऊँ ॥ गगन॥३॥
फिर कैलाश शिखर अष्टापद आदिनाथ ध्याऊँ ।
ऋषभदेव निर्वाण धरा पर शुद्ध भाव लाऊँ ॥गगन॥४॥
फिर मंदारगिरि पावापुर वासुपूज्य ध्याऊँ ।
हुए पंच कल्याणक प्रभु के पूजन कर आऊँ ॥गगन॥५॥
उर्जयंत गिरनार शिखर पर्वत पर फिर जाऊँ ।
नेमिनाथ निर्वाण क्षेत्र को वन्दूँ सुख पाऊँ ॥गगन॥६॥
फिर पावापुर महावीर निर्वाण पुरी जाऊँ ।
जल मंदिर में चरण पूजकर नाजूँ हर्षाऊँ ॥गगन॥७॥
पंच महातीर्थों की यात्रा करके हषाऊँ ।
सिद्ध क्षेत्र अतिशय क्षेत्रों पर भी मैं हो आऊँ ॥गगन॥८॥
लगे हाथ फिर पंचमेरु नन्दीश्वर हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो यही भावना जाने की भाऊँ ॥गगन॥९॥
तीन लोक की तीर्थ वंदना कर निज घर आऊँ ।
शुद्धातम से कर प्रतीति मैं समकित उपजाऊँ ॥गगन॥१०॥
फिर रत्नत्रय धारण करके जिन मुनि बन जाऊँ ।
निज स्वभाव साधन से स्वामी शिव पद प्रगटाऊँ ॥गगन॥११॥

ॐ

श्री जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - गीता

षटकुलाचल गिरि सुदर्शन के महान सुभव्य हैं ।
महा महिमामय जिनालय श्रृंग पर दृष्टव्य हैं ॥
हिमवन महाहिमवन गिरि अरु निषध नील महान है ।
रुक्मि, शिखरी षट जिनालय बिम्ब रत्न प्रधान है ॥
सर्व प्रतिमा छह सौ अड़तालीस पूजूँ भाव से ।
भाव भव के त्याग अब तो जुड़ूँ आत्म स्वभाव से ॥
छह द्रहों पर छह कमल हैं देवियाँ छह के निवास ।
श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी के श्रेष्ठ वास ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - गीतिका

साम्यभावी नीर लाऊँ बनूँ समभावी विभो ।
रोग त्रय संसार के हर सिद्ध पद पाऊँ प्रभो ॥
षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ ।
आत्म भावी भावना भा कर्म के बंधन हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

साम्यभावी स्व चंदन का तिलक मस्तक पर करूँ।
भवातप का नाश करके सकल भव बाधा हरूँ॥
षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ।
आत्म भावी भावना भा कर्म के बंधन हरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

साम्यभावी विमल अक्षत सजाऊँ निज हृदय में।
भवोदधि को पार करके रहूँ अपने निलय में॥
षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ।
आत्म भावी भावना भा कर्म के बंधन हरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षय पदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

साम्यभावी पुष्प महिमामयी पाऊँ हे प्रभो।
शील गुण निष्काम लाऊँ आत्म सुख पाऊँ विभो॥
षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ।
आत्म भावी भावना भा कर्म के बंधन हरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

साम्यभावी सुचरु अनुभवमयी लाऊँ हे प्रभो।
अनाहारी स्वपद पाऊँ पूर्ण सुख पाऊँ विभो॥
षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ।
आत्म भावी भावना भा कर्म के बंधन हरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

साम्यभावी ज्योति जगमग जगे मेरे हृदय में।
मोह तम का नाश हो प्रभु रहूँ शिव सुख निलय में॥
षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ।
आत्म भावी भावना भा कर्म के बंधन हरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

साम्यभावी धूप लाऊँ कर्म वसु क्षय अब करूँ ।
निरंजन पद प्राप्त करके सकल निज गुण आदरूँ ॥
षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ ।
आत्म भावी भावना भा कर्म के बंधन हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

साम्यभावी सुतरु के फल प्राप्त करना है मुझे ।
मोक्ष फल की प्राप्ति के हित बंध हरना है मुझे ॥
षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ ।
आत्म भावी भावना भा कर्म के बंधन हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

साम्यभावी अर्घ्य लाकर आपकी पूजन करूँ ।
पद अनर्घ्य अभी प्रगट कर मोह का तांडव हरूँ ॥
विषम भावी भावना के दर्प सारे कुचल दूँ ।
रागद्वेषादिक विकारी भाव सारे कुचल दूँ ॥
षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ ।
आत्म भावी भावना भा कर्म के बंधन हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

सुदर्शन मेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय

छंद – वसंततिलका

तुभ्यं नमोऽस्तु हिमवन सुगिरि जिनालय ।
सद्धर्म तत्त्व का ही लूँ नाथ आश्रय ॥
आनंद सिन्धुमय हूँ गुण ज्ञान धारी ।
वैभव महान मेरा शिव सौख्यकारी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-हिमवनपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वन्दूँ महा सुहिमवन श्री जिनालय ।
वत्थु सहावो धम्मो ही धर्म आलय ॥
त्रैलोक्य पूज्य जिन चैत्य स्वध्यानमय हैं ।
जिन वीतराग मुद्रा कल्याणमय है ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-महाहिमवनपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सुन्दर निषध कुलाचल जिनगेह पूजूँ ।
जीवंत शक्ति द्वारा परभाव जीतूँ ॥
आत्म स्वभाव पर से है भिन्न निर्मल ।
नित वन्दनीय उज्ज्वल अरि रज जयी है ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-निषधपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

जिन धाम नील कुल अचल वन्दन करूँ मैं ।
संसार भाव जय कर बंधन हरूँ मैं ॥
परिपूर्ण शुद्ध होऊँ निज आत्म बल से ।
आस्रव शुभा शुभ हरूँ संवर स्वजल से ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-नीलपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

जिनगेह रुक्मि कुल अचल पूजन करूँ मैं ।
भव भाव सर्व जीतूँ भव दुख हरूँ मैं ॥
जिनबिम्ब एक शत वसु सविनय नमन है ।
आनंदघन स्वरूपी निज में मगन हैं ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-रुक्मिपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

शिखरी कुलाचल परम जिन धाम वन्दूँ ।
ले भेद ज्ञान पावन सम्यक्त्व पाऊँ ॥
शिव मार्ग पर चलूँ प्रभु व्रत पाँच धारूँ ।
अरहंत सिद्ध पद पा भव दुख निवारूँ ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-शिखरीपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

दोहा

जिन गृह पूजे षट अचल बड़े भाग्य से आज ।
आत्म शक्ति से हे प्रभो पाऊँ निज पदराज ।।

महाअर्घ्य अर्पण करूँ हे जिनेन्द्र भगवान ।
भव्य षट कुलाचल सुगृह वन्दूँ धर उर ध्यान ।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ छह सौ अड़तालीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद – विजया

तत्त्व की आज स्वामी सुनी बाँसुरी ।
तो विषय भोग माया तजी आसुरी ।।
देह पुलकित हुई गीत सम्यक्त्व सुन ।
गूँजती कर्ण में ज्ञान आसावरी ।।
इन कषायों के बादल बिखर सब गये ।
मोहमिथ्यात्व के गिर शिखर सब गए ।।
निज स्वभावों के पर्वत निखर अब गये ।
ज्ञान की खिल गई एक इक पांखुरी ।।
तत्त्व की आज स्वामी सुनी बाँसुरी ।
तो विषय भोग माया तजी आसुरी ।।
ये अनंतानुबंधी सहज उड़ गई ।
देख कुमता पिशाचिन अरे कुढ़ गई ।।
मेरी सुमता सखी मुझसे ही जुड़ गई ।
हाथ जोड़े खड़ी है बना आंजुरी ।।
तत्त्व की आज स्वामी सुनी बाँसुरी ।
तो विषय भोग माया तजी आसुरी ।।
मैंने जाना है आतम का सच्चा धरम ।
मैं हरूँगा स्वभावों से सारे करम ।।

मैंने नाशा है अज्ञान का पूर्ण भ्रम ।
मेरा यह भव है निश्चित प्रभो आखिरी ॥
तत्त्व की आज स्वामी सुनी बाँसुरी ।
तो विषय भोग माया तजी आसुरी ॥
मैं तो परिपूर्ण हूँ सुख का भंडार हूँ।
मैं चिदानंद चैतन्य अविकार हूँ ॥
बल अतुल का धनी सौख्य आगार हूँ।
मेरी आतम स्वयं ज्ञान की निर्झरी ॥
तत्त्व की आज स्वामी सुनी बाँसुरी ।
तो विषय भोग माया तजी आसुरी ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – पीयूष राशि

षट कुलाचल गेह जिन महिमा विचार।
वन्दना जिन देव कर निज को सँवार॥
शुद्ध अवसर मिला है उर ज्ञान धार।
शाश्वत सुख मिलेगा संसार पार॥
जिनालय त्रैलोक्य के पूजूँ जिनेश।
शुद्ध आत्म स्वभाव ध्याऊँ मैं हमेश॥

इत्याशीर्वादः

卐

ॐ

श्री धातकी खंड पूर्व दिशा विजयमेरु संबंधी षोडश जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - वीर

चार लाख योजन विस्तृत है खंड धातकी द्वीप महान ।
आठ लाख योजन का कालोदधि घेरे हैं इसे प्रधान ॥
खंड धातकी पूर्व दिशा में विजय मेरु सोलह जिन गेह ।
लाख चौरासी योजना ऊँचा गिरिवर निरखूँ धर उर नेह ॥
चारों वन में चार चार जिन चैत्यालय हैं शोभावान ।
इनमें एक सहस सात सौ अट्ठाईस बिम्ब भगवान ॥
अष्ट द्रव्य प्रासुक चरणों में अर्पित कर पूजूँ जिन देव ।
हो जाऊँ निर्ग्रंथ दिगम्बर मुद्रा धारी मुनि स्वयमेव ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - राधिका

संयमी भाव का शीतल सलिल चढ़ाऊँ ।
अविरति क्षय कर शिवपथ पर चरण बढ़ाऊँ ॥
मैं विजय मेरु के सोलह जिन गृह पूजूँ ।
परभावों की छलना से हे प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

संयमी भाव का चंदन तिलक लगाऊँ ।
भव ताप नाश हित विभ्रम दूर भगाऊँ ॥
मैं विजय मेरु के सोलह जिन गृह पूजूँ ।
परभावों की छलना से हे प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप-विनाशनाय चंदनं नि.।

संयमी भाव के अक्षत शालि चढ़ाऊँ ।
अक्षय पद पाने को प्रभु चरण बढ़ाऊँ ॥
मैं विजय मेरु के सोलह जिन गृह पूजूँ ।
परभावों की छलना से हे प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि. ।

संयमी भाव के कुसुम शीलमय लाऊँ ।
निष्काम भावना अपनी सफल बनाऊँ ॥
मैं विजय मेरु के सोलह जिन गृह पूजूँ ।
परभावों की छलना से हे प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

संयमी भाव के सुचरु अनुभवी लाऊँ ।
चिर क्षुधा रोग क्षय करूँ तृप्त हो जाऊँ ॥
मैं विजय मेरु के सोलह जिन गृह पूजूँ ।
परभावों की छलना से हे प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

संयमी भाव के दीपक हृदय जगाऊँ ।
मोहान्धकार क्षय करूँ ज्ञान उजियाऊँ ॥
मैं विजय मेरु के सोलह जिन गृह पूजूँ ।
परभावों की छलना से हे प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि.।

संयमी भाव की धूप दशांग बनाऊँ ।
वसु कर्मों को क्षय कर शिव पद प्रगटाऊँ ॥
मैं विजय मेरु के सोलह जिन गृह पूजूँ ।
परभावों की छलना से हे प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म-विध्वंसनाय धूपं नि.।

संयमी भाव के फल अपूर्व मैं पाऊँ ।
प्रभु महा मोक्ष फल पाकर शिवपुर जाऊँ ॥
मैं विजय मेरु के सोलह जिन गृह पूजूँ ।
परभावों की छलना से हे प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

संयमी भाव के अर्घ्य महाने बनाऊँ ।
पदवी अनर्घ्य पाऊँ आनंद मनाऊँ ॥
संयमित रहूँ जाग्रत अपने जीवन में ।
क्षय करूँ असंयम रहूँ, रहूँ सदा चिद्धन में ॥
मैं विजयमेरु के सोलह जिनगृह पूजूँ ।
पर भावों की छलना से हे प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

विजयमेरु भद्रशाल वन संबंधी चार जिनालय

छंद – शार्दूलविक्रीड़ित

व्यवहाराभासी न होऊँ स्वामी ना निश्चयाभास हो ।
निश्चय हो परिपूर्ण शुद्ध सम्यक् व्यवहार भी पास हो ॥
दोनों का ही है सुमेल सुन्दर जिनमार्ग में सर्वदा ।
निश्चय भूत पदार्थ शुद्ध आत्मा समदृष्टि को प्राप्त हो ॥

छंद – दोहा

पूर्व धातकी खंड में विजय मेरु अभिराम ।
भद्रशाल वन पूर्व दिशि जिन गृह करूँ प्रणाम ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ भद्रशालवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजय मेरु संबंधि है भद्रशाल वन नाम ।
दक्षिण दिशि जिन भवन को सादर करूँ प्रणाम ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ भद्रशालवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालय जिन-बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजय मेरु शोभा सहित भद्रशाल वन नाम ।
पश्चिम दिशि सिद्धायतन सविनय करूँ प्रणाम ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ भद्रशालवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजय मेरु सम भूमि पर भद्रशाल वन नाम ।
उत्तर दिशि जिन गेह को मन वच काय प्रणाम ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ भद्रशालवनस्थित-उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजय मेरु नन्दन वन संबंधी चार जिनालय

छंद – रोला

विजयमेरु नंदन वन पूर्व दिशा में सोहे ।
जिन मंदिर अति भव्य सभी के मन को मोहे ॥
जल फलादि वसु द्रव्य चढ़ा कर शीष झुकाऊँ ।
पर द्रव्यों से भिन्न सर्वथा निज को ध्याऊँ ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ नन्दनवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजय मेरु नंदन वन दक्षिण दिशा जानिए ।
भव्य अकृत्रिम श्री जिन चैत्यालय प्रमाणिए ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ नन्दनवनस्थित-दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयमेरु नंदन वन पश्चिम दिशा सुशोभित ।
शाश्वत जिन चैत्यालय में अरहंत विराजित ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ नन्दनवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयमेरु नन्दन वन में उत्तर दिशि सुन्दर ।
शाश्वत जिनबिम्बों से शोभित है जिन मन्दिर ॥८॥

ॐ ह्रींश्री विजयमेरौ नन्दनवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजय मेरु सौमनस वन संबंधी चार जिनालय

छंद - रोला

नन्दन वन से पचपन सहस्र योजन ऊपर ।
विजयमेरु सौमनस वनी निष्कंटक सुन्दर ॥
पूर्व दिशा में एक जिनालय शाश्वत अघहर ।
विमल भाव से पूजूँ स्वामी अर्घ्य चढ़ाकर ॥९॥

ॐ ह्रींश्री विजयमेरौ सौमनसवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

दक्षिण दिशा सौमनस वन के भीतर जाऊँ ।
जिन चैत्यालय के बिम्बों को शीष झुकाऊँ ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ सौमनसवनस्थित-दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पश्चिम दिशा सौमनस वन में जिन चैत्यालय ।
बिम्ब एक सौ आठ विराजे अति महिमामय ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ सौमनसवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

उत्तर दिशा सौमनसवन में है जिन मन्दिर ।
वन्दन करते ऋषि मुनि इन्द्रादिक विद्याधर ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ सौमनसवनस्थित-उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजय मेरु पान्डुक वन संबंधी चार जिनालय

छंद - रोला

विजयमेरु सौमनस सुवन से ऊपर पावन ।
अट्ठाईस सहस योजन ऊँचा पान्डुक वन ॥
पूर्व दिशा के जिन मंदिर को सविनय वन्दन ।
जिन पूजन से कट जाएँ मेरे भव बंधन ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ पान्डुकवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयमेरु पान्डुक वन की है शोभा न्यारी ।
तीर्थंकर अभिषेक यहाँ होता है भारी ॥
दक्षिण दिशा जिनालय को है सादर वन्दन ।
जिन पूजन से कट जाएँ मेरे भव बंधन ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ पान्डुकवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालय जिन-बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयमेरु पर पान्डुक वन अति शोभाशाली ।
पश्चिम दिशा श्री जिनमन्दिर वैभवशाली ॥
जल फलादि वसु द्रव्य अर्घ्य चरणों में अर्पण ।
जिन पूजन से कट जाएँ मेरे भव बंधन ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ पान्डुकवनस्थित-पश्चिमदिक्जिनालय जि बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयमेरु पान्डुकवन जग में सुप्रसिद्ध है ।
श्री जिनवर अभिषेक यहाँ होता प्रसिद्ध है ॥
उत्तर दिशा जिनालय के बिम्बों को वन्दन ।
जिन पूजा से कट जाएँ मेरे भव बंधन ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ पान्डुकवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

वसंततिलका

सम्पूर्ण सौख्य सागर उर में भरा है ।
शुद्धात्म तत्त्व उत्तम निर्मल खरा है ॥

ज्ञानाब्धि की तरंगे इसमें उछलती ।
मुनिराज के हृदय में प्रतिपल मचलती ॥

छंद – दोहा

महार्घ्य अर्पण करूँ विजयमेरु जिनगेह ।
आत्मतत्त्व की प्राप्ति से सुख हो निस्संदेह ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडश जिनालयस्थ एक हजार सात सौ अट्ठाईस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद –ताटंक

सिद्ध समान सदा पद अपना यह निश्चय कब लाओगे ।
द्रव्य दृष्टि बन निज स्वरूप को कब तक अरे सजाओगे ॥
सर्वज्ञेय ज्ञाता होकर जो रहते निजानंद रस लीन ।
सिद्ध शिला पर सदा विराजित निज स्वभाव में हो तल्लीन ॥
सकल कर्म मल से विमुक्त शिव नित्य निरंजन राग विहीन ।
शुद्धातम रस पान सर्वदा बजती अनुभव रस की बीन ॥
ऐसे अनुपम सिद्ध स्वपद को कब तक प्रभु प्रगटाओगे ।
सिद्ध समान सदा पद अपना यह निश्चय कब लाओगे ॥
नव ग्रैवेयक जाने वाला साधु द्रव्यलिंगी भी है ।
ग्यारह अंग पूर्व नौ तक का पाठी पर संगी भी हैं ॥
बिना आत्म अनुभव के होती सभी क्रिया भदरंगी है ।
सम्यक् दर्शन कैसे हो जब आदत ही बेढंगी है ॥
स्वपर विवेक जगा निजात्म को कब तक पार लगाओगे ।
सिद्ध समान सदा पद अपना यह निश्चय कब लाओगे ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – सोरठा

विजय जिनालय श्रेष्ठ सोलह पूजे भाव से ।
जीतूँ भव का राग यही भावना है प्रभो ॥
तीन लोक जिन चैत्य भव्य अकृत्रिम शाश्वत ।
पूजूँ निःसंदेह सम्यग्दर्शन प्राप्ति हित ॥

इत्याशीर्वादः

सकल दोष अविरति का मैं नाश कर दूँ
महाव्रत हृदय में धरूँ पूर्ण सम्यक् ।
महा मोह क्षय कर हरूँ भव की पीड़ा
करूँ आत्मा के सुदर्शन सुसम्यक् ॥
विजय मेरु गजदंत के चऊ जिनालय
विनय भक्ति से भाव पूजन करूँ मैं ।
सकल व्याधि अज्ञान की मैं विनाशूँ
निजातम के ही पास अब तो रहूँ मैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप-विनाशनाय चंदनं नि.।

प्रमादों का सागर प्रभो जय करूँ मैं
धरूँ सर्वदेशी प्रभो पूर्ण संयम ।
छठे सातवें में सहजनाथ झूलूँ
निजानंद रस लीन होऊँ बिना श्रम ॥
विजय मेरु गजदंत के चऊ जिनालय
विनय भक्ति से भाव पूजन करूँ मैं ।
सकल व्याधि अज्ञान की मैं विनाशूँ
निजातम के ही पास अब तो रहूँ मैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि. ।

करूँ शील व्रत का प्रभो पूर्ण पालन
महा शील गुण से मैं शोभित बनूँगा ।
हरूँ काम पीड़ा सदा को हे स्वामी
त्वरित पूर्ण निष्काम अविकल बनूँगा ॥
विजय मेरु गजदंत के चऊ जिनालय
विनय भक्ति से भाव पूजन करूँ मैं ।
सकल व्याधि अज्ञान की मैं विनाशूँ
निजातम के ही पास अब तो रहूँ मैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

श्री धातकी खंड पूर्व विजय मेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजन

स्थापना

वीर छंद

विजयमेरु संबंधित चारों गजदंतों पर मंदिर चार।
हस्ति दंत सम विदिशाओं में सुस्थित पर्वत बहु मनहार॥
चार शतक बत्तीस बिम्ब जिन रत्नमयी हैं श्रेष्ठ प्रधान।
इन सबकी पूजन करके प्रभु करूँ आत्मा का ही ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद – विजया

महामोह मिथ्यात्व को नाश करके
सहज नीर समकित का हे प्रभु चढ़ाऊँ।
जनम का जरा का मरण का महादुख
निजातम की महिमा से हे प्रभु मिटाऊँ॥
विजय मेरु गजदंत के चऊ जिनालय
विनय भक्ति से भाव पूजन करूँ मैं।
सकल व्याधि अज्ञान की मैं विनाशूँ
निजातम के ही पास अब तो रहूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

क्षुधा व्याधि हरने को आया शरण में
मुझे आप अनुभव के नैवेद्य दो प्रभु।
अनाहार गुण मेरा मेरे ही भीतर
उसे अब प्रकाशित करूँ हे महाविभु॥
विजय मेरु गजदंत के चऊ जिनालय
विनय भक्ति से भाव पूजन करूँ मैं।
सकल व्याधि अज्ञान की मैं विनाशूँ
निजातम के ही पास अब तो रहूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

तिमिर मोह मिथ्यात्व का सर्व जीतूँ
उजाले का सूरज ही भव के हृदय में।
परम ज्ञान कल्याण पाऊँ सदा को
निजातम हो मेरा स्वयं के निलय में॥
विजय मेरु गजदंत के चऊ जिनालय
विनय भक्ति से भाव पूजन करूँ मैं।
सकल व्याधि अज्ञान की मैं विनाशूँ
निजातम के ही पास अब तो रहूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि.।

परम शुक्ल ध्यानी सहज धूप लाऊँ
करूँ कर्म आठों विजय मैं सदा को।
अनाकुल स्वभावी निराकुल स्वरूपी
न व्याकुल बनूँ नाथ अब मैं सदा को॥
विजय मेरु गजदंत के चऊ जिनालय
विनय भक्ति से भाव पूजन करूँ मैं।
सकल व्याधि अज्ञान की मैं विनाशूँ
निजातम के ही पास अब तो रहूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म-विध्वंसनाय धूपं नि.।

महामोक्ष फल पाने का भाव जागा
स्वभावी सहज फल के दर्शन हुए हैं।
सभी आस्रव बंध जय कर लिए हैं
कभी फिर न कर्मों के बंधन हुए हैं॥
विजय मेरु गजदंत के चऊ जिनालय
विनय भक्ति से भाव पूजन करूँ मैं।
सकल व्याधि अज्ञान की मैं विनाशूँ
निजातम के ही पास अब तो रहूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

विभावों के अर्घ्यों ने मुझको भ्रमाया
भ्रमण चार गति का न क्षय कर सका हूँ।
निरंजन अनर्घ्य स्वपद प्राप्ति के हित
विभावों को अब तक न जय कर सका हूँ॥
नहीं आधि हो व्याधि हो हे प्रभो अब
पर उपाधि विनाशूँ सदा को विभो मैं।
हो समाधि परम निर्विकल्पी तपोमय
शुद्ध निज पद प्रकाशूँ सदा के लिए मैं॥
विजय मेरु गजदंत के चऊ जिनालय
विनय भक्ति से भाव पूजन करूँ मैं।
सकल व्याधि अज्ञान की मैं विनाशूँ
निजातम के ही पास अब तो रहूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

विजयमेरु गजदंत चार जिनालय

छंद - ढोहकीय आंचलीबद्ध

जिन पद पूजूँ भाव से
श्री जिन मंदिर नित जाय जिनपद पूजूँ भाव से।
विजयमेरु आग्नेय में सौमनस रजत गजदंत॥

सात कूट में एक है प्रभु सिद्ध कूट अरहंत
जिन पद पूजूँ भाव से ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ आग्नेयविदिशि सौमनसगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयमेरू नैऋत्य में विद्युत प्रभ गजदंत।
स्वर्ण मय नव कूट में इक सिद्ध कूट भगवंत॥
जिन पद पूजूँ भाव से ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ नैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयमेरू वायव्य दिशि में गंध मादन गजदंत।
सात कूट में स्वर्णमय इक सिद्ध कूट भगवंत॥
जिन पद पूजूँ भाव से ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ वायव्यविदिशि गन्धमादनाचल गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयमेरू ईशान में है माल्यवान गजदंत।
मणि वैडूर्यसु सुकूटखों में एक कूट अरहंत॥
जिन पद पूजूँ भाव से ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ ईशानविदिशि मान्यवान गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

चारों ही गजदंत के नाथ जिनालय चार।
चार शतक बत्तीस जिन प्रतिमाएँ साकार॥

छंद गीतिका

तज मनो भ्रम सदा को तू व्यर्थ की बकवास तज।
मोह का मद्यपी मत बन शुद्ध आत्म स्वभाव भज॥
दुखदायिनी परिणति विभावी है सदा ही निन्दनीय।
स्वपरिणति को दे निमंत्रण उसे उर में ला सहज॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ, करूँ तत्त्व अभ्यास।
बुझ जाएगी निमिष में आत्म ज्ञान की प्यास॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ चार सौ बत्तीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद - ताटंक

श्री जिनवर उपदेश सुन करूँ भावश्रुत ज्ञान।
निज स्वभाव को जानकर करूँ आत्मकल्याण॥

छंद - वीर

औपशमिक क्षायिक क्षयोपशम अरु जीवत्व औदयिक भाव।
भाव पारिणामिक अनादि हैं अरु अनंत है जीव स्वभाव॥
है लक्षण चेतना जीव का और अचेतन चिन्ह अजीव।
पुद्गल धर्म अधर्म काल नभ ये पाँचों हैं सदा अजीव॥
जीव और पुद्गल में होती शक्ति सदा ही क्रियावती।
शेष चार सुस्थिर हैं अपने अपने में हैं नहीं गती॥
है उपयोगमयी अमूर्तिक कर्ता देह प्रमाण प्रसिद्ध।
भोक्ता है संसार मध्य है, सहज ऊर्ध्वगतिवान सुसिद्ध॥
श्वासोच्छ्वास आयु बल इन्द्रिय प्राण जीव कहना व्यवहार।
निश्चय प्राण चेतना वाला जीव त्रिकाली उर में धार॥
आज सुअवसर मुझे मिला निज के स्वरूप को पहिचाना।
निश्चय अरु व्यवहार कथन को मैंने पृथक्-पृथक् जाना॥
है निश्चय सत्यार्थ सुपावन असत्यार्थ है सब व्यवहार।
निश्चयभूत पदार्थ आश्रय से हो जाऊँगा भव पार॥
सम्यग्दर्शन के होते ही त्वरित स्वरूपाचरण मिले।
रत्नत्रय की पावन रेखा निश्चित उर में खिले खिले॥
श्रद्धा तो पूरी होती है जैसी सिद्धों की होती।
ज्ञान अल्प होता है अरु चारित्रशक्ति निर्बल होती॥

निश्चय समकित हुआ अगर तो दर्श मोह का हुआ अभाव।
पहले उपशम होता फिर होता क्षयोपशम क्षायिक भाव ॥
क्षायिक मात्र केवली के चरणों में आकर होता है ।
उपशम अरु क्षयोपशम तो चारों गतियों में होता है ॥
ऐसा शुद्ध भाव मेरे भी उर में जागे हे भगवान ।
चिर मिथ्यात्व तिमिर हरने की कब पाऊँगा शक्ति महान ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – वीर

चारों ही गजदंत जिनेश्वर के गृह पूजे आज जिनेश।
आत्मत्व गुण प्राप्त करूँगा धारूँगा जिन मुनि का वेश॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश महान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वादः

卐

सिद्धों के दरबार में–

हमको भी बुलवालो, स्वामी, सिद्धो के दरबार में॥
जीवादिक सातों तत्त्वों की, सच्ची श्रद्धा हो जाए।
भेद ज्ञान से हमको भी प्रभु, सम्यग्दर्शन हो जाए।
मिथ्यातम के कारण स्वामी, हम डूबे संसार में॥
हमको भी बुलावालो स्वामी ॥१॥
आत्म द्रव्य का ज्ञान करें हम, निज स्वभाव में आ जाएँ।
रत्नत्रय की नाव बैठकर, मोक्ष भवन को पा जाएँ।
पर्यायों की चकाचौंध से, बहते हैं मझदार में ॥
हमको भी बुलवालों स्वामी ॥२॥

ॐ

श्री धातकी खंड विजयमेरु संबंधित धातकी शाल्मलि द्वय वृक्ष जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - वीर

खंड धातकी विजयमेरु धातकी शाल्मलि दो हैं वृक्ष ।
इन दोनों के दो चैत्यालय जिन में है जिन छवि प्रत्यक्ष ॥
उत्तर कुरु ईशान दिशा में वृक्ष धातकी पृथ्वीकाय ।
देव कुरु नैऋत्य दिशा में शाल्मलि वृक्ष परम सुखदाय ॥
दो सौ सोलह प्रतिमा पूजूँ शुद्ध भाव उर में जागे ।
प्रभु अनादि की मोह नींद अब तत्क्षण ही पूरी भागे ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्ष संबंधि द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्ष संबंधि द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्ष संबंधि द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - दिग्वधू

संसार महासागर मैं कैसे पार करूँ ।
भव रोग त्रयी हर कर कैसे भव भार हरूँ ॥
धातकी शाल्मलि तरु पर दो श्रेष्ठ जिनालय हैं ।
अरहंतों के गृह हैं मानों सिद्धालय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

भव ताप नहीं जाता पीड़ा न सही जाती ।
अनुभवमय चंदन की भी गंध नहीं भाती ॥

धातकी शाल्मलि तरु पर दो श्रेष्ठ जिनालय हैं।
अरहंतों के गृह हैं मानों सिद्धालय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

अक्षय पद पाने को आतुर अनादि से हूँ।
भव विभ्रम के चक्कर में फंसा सदा से हूँ ॥
धातकी शाल्मलि तरु पर दो श्रेष्ठ जिनालय हैं।
अरहंतों के गृह हैं मानों सिद्धालय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

निष्काम भावना का भी भाव नहीं आता।
यह दुष्ट काम हे प्रभु क्यों कभी नहीं जाता ॥
धातकी शाल्मलि तरु पर दो श्रेष्ठ जिनालय हैं।
अरहंतों के गृह हैं मानों सिद्धालय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

चिर क्षुधा रोग क्षय की अभिलाषा उर में है।
मेरा अपना घर तो हे प्रभु शिवपुर में है ॥
धातकी शाल्मलि तरु पर दो श्रेष्ठ जिनालय हैं।
अरहंतों के गृह हैं मानों सिद्धालय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

निज ज्ञान दीप पाने चरणों में आया हूँ।
मोहान्धकार द्वारा मैं सदा सताया हूँ ॥
धातकी शाल्मलि तरु पर दो श्रेष्ठ जिनालय हैं।
अरहंतों के गृह हैं मानों सिद्धालय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

निज ध्यान धूप पाऊँ स्वामी ऐसा बल दो।
कर्मों को जय कर लूँ ऐसा श्रम उज्ज्वल दो ॥

धातकी शाल्मलि तरु पर दो श्रेष्ठ जिनालय हैं।
अरहंतों के गृह हैं मानों सिद्धालय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि दो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

फल मोक्ष शीघ्र पाऊँ रत्नत्रय के द्वारा।
आगम अनुसार चलूँ काटूँ यह भवकारा ॥
धातकी शाल्मलि तरु पर दो श्रेष्ठ जिनालय हैं।
अरहंतों के गृह हैं मानों सिद्धालय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि दो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

पदवी अनर्घ्य पाने यह अर्घ्य समर्पित है।
गुण पुन्ज शुद्ध हे प्रभु चरणों में अर्पित है ॥
आकार रहित हूँ मैं निजगुणधारी स्वामी।
शिव सुख स्वरूप हूँ मैं अविकारी हूँ नामी ॥
धातकी शाल्मलि तरु पर दो श्रेष्ठ जिनालय हैं।
अरहंतों के गृह हैं मानों सिद्धालय हैं ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि दो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

दोहा

शुद्ध ज्ञान तरु छाँव में पाऊँ सम्यग्ज्ञान।
सम्यग्दर्शन पूर्वक कर लूँ प्रभु निज भान ॥

छंद – उपजाति

तरु धातकी पर जिनगेह सुन्दर।
नित भक्ति पूर्वक पूजन करूँ मैं ॥
है वृक्ष पृथ्वी कायिक निराला।
भवभार सारा पल में हरूँ मैं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखण्डद्वीपस्थ विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीवृक्षस्थितजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो ऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शाल्मलि सुतरु की गरिमा अनूठी ।
है वृक्ष पृथ्वीकायिक मनोहर ।।
जिनबिम्ब युत है जिन चैत्यालय ।
त्रय योग पूर्वक पूजन करूँ मैं ।।२।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखण्डद्वीपस्थ विजयमेरुसम्बन्धि-शाल्मलि वृक्षस्थितजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो ऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद – वीर

जो प्रमाद में रत रहते हैं शुद्ध भाव से रहते दूर ।
जो उद्यम कर निज को ध्याते वे सुख पाते हैं भरपूर ।।
नित्योद्योत प्रकाश अवस्था जिनके उर में झिल जाती ।
एकमात्र अन्तर्मुहूर्त में मुक्ति वधू की मिल जाती ।।

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ धातकी शाल्मलि गेह ।
गुण वस्तुत्व प्रकाश कर करूँ स्वयं से नेह ।।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधि दो जिनालयस्थ दो सौ सोलह जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद – दिग्पाल

जिनधर्म प्राप्त करके हिरदय उछल रहा है ।
सिद्धत्व प्राप्त करने को मन मचल रहा है ।।
अशुभाचरण के द्वारा भटका सदा कुगति में ।
शुभ आचरण का अवसर स्वयमेव मिल रहा है ।।
जितने विकल्प हैं सब दुःखमय हैं बंध कारण ।
ये रागद्वेष सारा अब मुझको खल रहा है ।।
कर्तृत्व पर का छोड़ा स्वामित्व पर का छोड़ा ।
भोक्तृत्व पर का तजकर निज दीप जल रहा है ।।
मिथ्यात्व भाव त्यागा सम्यक्त्वभाव जागा ।
जितना विभाव था अब स्वयमेव ढल रहा है ।।

चारित्र शुद्ध संयम की उठ रहीं तरंगे ।
अविरत का हिमशिखर भी चुपचाप गल रहा है ॥
अनंतानुबंधि पूरी अंतर से उड़ गई है ।
शुद्धोपयोग बंशी का स्वर सफल रहा है ॥
समता स्वभाव जागा भागी सकल विषमता ।
शुद्धत्व गीत गाने का यत्न चल रहा है ॥
पाऊँगा एकदिन मैं निर्ग्रंथ रूप अपना ।
कैवल्य का सलोना अब वृक्ष फल रहा है ॥
है वीतरागता ही परिपूर्ण सिन्धु शिवमय ।
शुद्धात्मभाव मेरा अब तो सम्हल रहा है ॥
व्यवहार हेय जाना निज ध्यान ध्येय माना ।
कोई विभाव मुझको अब तो न छल रहा है ॥
निश्चय पै दृष्टि मेरी दृढ़ता से जम गई है ।
ज्ञायकस्वभाव अपने ही आप पल रहा है ॥
संयोग पुण्य का भी मुझको नहीं सुहाता ।
इस राग रागिनी का घर आज जल रहा है ॥
अब भेदज्ञान द्वारा निज और पर को जाना ।
यह मोह शत्रु रो रो कर हाथ मल रहा है ॥
परिणाम अब सरल हैं निज का स्वभाव जागा ।
निर्मल स्वरूप का ही सूरज निकल रहा है ॥
सहजात्म भावना की लहरें उठीं हृदय में ।
सिद्धत्व रूप मेरा अब हो सरल रहा है ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्ष संबंधी द्वो जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – दोहा

धातकी शाल्मलि वृक्ष के पूजे श्री जिनबिम्ब ।
इनकी छवि में हे प्रभो देखूँ निज प्रतिबिम्ब ॥
तीन लोक के जिन भवन कृत्रिम अकृत्रिम सर्व ।
विनय सहित वन्दन करूँ तज कर पर का गर्व ॥

इत्याशीर्वादः

श्री धातकी खंड विजयमेरु संबंधित सोलह वक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - रोला

विजय मेरु संबंधी हैं वक्षार जु सोलह।
पूर्व और पश्चिम विदेह में वसु वसु गिरि सह॥
सबके जिन चैत्यालय पूजूँ स्वर्णमयी प्रभु।
एक सहस सात सौ अट्ठाईस बिम्ब विभु॥
निज से है एकत्व आत्मा का अनादि से।
पर से पूर्ण विभक्त आत्मा है अनादि से॥
निज आत्मा का शुद्ध रूप भाता न मुझे प्रभु।
इसीलिए चरणों में आया हूँ महान विभु॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - विधाता

सहज अनुभव स्वजल पीकर त्रिविध भव रोग क्षय कर लूँ।
निजातम की स्वमहिमा पा मोह मिथ्यात्व जय कर लूँ॥
श्रेष्ठ वक्षार गिरि मंदिर जजूँ सोलह सदा हे विभु।
विजयमेरु से संबंधित करूँ पूजन सदा हे विभु॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

सहज अनुभव स्वचंदन का तिलक निज शीष पर सोहे ।
विनाशूँ भाव अविरति के स्वसंयम मन मेरा मोहे ॥
श्रेष्ठ वक्षार गिरि मंदिर जजूँ सोलह सदा हे विभु ।
विजयमेरु से संबंधित करूँ पूजन सदा हे विभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरूसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

सहज अनुभव के अक्षत भाव मेरे उर में जागे हैं ।
प्रमादों के सभी साथी सदा को नाथ भागे हैं ॥
श्रेष्ठ वक्षार गिरि मंदिर जजूँ सोलह सदा हे विभु ।
विजयमेरु से संबंधित करूँ पूजन सदा हे विभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरूसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि. ।

सहज अनुभव के पुष्पों से काम की व्याधि नाशूँगा ।
वासना सब करूँगा जय शील गुण निज प्रकाशूँगा ॥
श्रेष्ठ वक्षार गिरि मंदिर जजूँ सोलह सदा हे विभु ।
विजयमेरु से संबंधित करूँ पूजन सदा हे विभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरूसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

सहज अनुभव स्वरसमय चरु सदा को प्राप्त कर लूँ मैं ।
क्षुधा का रोग जय करके व्याधियाँ सर्व हर लूँ मैं ॥
श्रेष्ठ वक्षार गिरि मंदिर जजूँ सोलह सदा हे विभु ।
विजयमेरु से संबंधित करूँ पूजन सदा हे विभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरूसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

सहज अनुभव का दीपक ले ज्ञान कैवल्य पाऊँगा ।
घातिया चार क्षय करके निजानंद उर में लाऊँगा ॥
श्रेष्ठ वक्षार गिरि मंदिर जजूँ सोलह सदा हे विभु ।
विजयमेरु से संबंधित करूँ पूजन सदा हे विभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरूसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

धूप अनुभवमयी लाऊँ कर्म वसु नाश करने को।
शुक्ल ध्यानी बनूँ स्वामी मोह की वास हरने को॥
श्रेष्ठ वक्षार गिरि मंदिर जजूँ सोलह सदा हे विभु।
विजयमेरु से संबंधित करूँ पूजन सदा हे विभु॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरूसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

सहज अनुभव के बल से मोक्ष सुख अब मुझको पाना है।
बिना झंझट के हे स्वामी मुझे शिवपुर में जाना है॥
श्रेष्ठ वक्षार गिरि मंदिर जजूँ सोलह सदा हे विभु।
विजयमेरु से संबंधित करूँ पूजन सदा हे विभु॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरूसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

सहज अनुभवमयी निज अर्घ्य हे प्रभु मैं बनाऊँगा।
स्वपद पाऊँ अनर्घ्य अपना जिसे उर में सजाऊँगा॥
परम ध्यानी बनूँगा मैं परम सुख उर में लाऊँगा।
अष्ट गुण प्राप्त कर लूँगा सिद्ध पद शुद्ध पाऊँगा॥
श्रेष्ठ वक्षार गिरि मंदिर जजूँ सोलह सदा हे विभु।
विजयमेरु से संबंधित करूँ पूजन सदा हे विभु॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरूसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

दोहा

द्वीप धातकी पूर्व में विजयमेरु वक्षार।
पूर्व और पश्चिम दिशा गिरि सोलह वक्षार॥

पूर्व विदेह सीता नदी के उत्तर तट भद्रशाल चार वक्षार

छंद – ताटंक

पूर्व विदेह नदी सीता उत्तर तट भद्रशाल वेदी।
चित्रकूट वक्षार मनोहर पर जिन मंदिर भव छेदी॥

रत्नमयी इक शत वसु श्री जिन प्रतिमाओं को करूँ प्रणाम।
परभावों से दूर रहूँ मैं त्वरित सँवारूँ निज परिणाम ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षार स्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पूर्व विदेह नदी सीता उत्तर तट पद्म कूट वक्षार।
जिन चैत्यालय की पूजन कर नाचूँ गाऊँ बारंबार ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षार स्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पूर्व विदेह नदी सीता उत्तर तट नलिन कूट वक्षार।
चार कूट में सिद्ध कूट इक वन्दन कर हो हर्ष अपार ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षार स्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पूर्व विदेह नदी सीता उत्तर तट एक शैल वक्षार।
चार कूट में एक कूट पर सिद्धायतन परम सुखकार ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे एक शैलवक्षार स्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पूर्व विदेह सीता नदी के दक्षिण तट देवारण्य मेरु के चार वक्षार

वीर छंद

पूर्व विदेह सरित सीता दक्षिण तट वेदी देवारण्य।
है त्रिकूट वक्षार निकट ही जिन मंदिर पूजूँ मैं धन्य ॥
पूजन करके निजस्वरूप की ओर लक्ष्य दूँ हे भगवान।
स्वपर भेद विज्ञान प्राप्त कर करूँ आत्मा का कल्याण ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतासरितादक्षिणतटे त्रिकूट वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

सीता सरिता के दक्षिण तट वैश्रवण वक्षार महान।
एक कूट पर प्रभु चैत्यालय भाव सहित पूजूँ धर ध्यान ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतासरितादक्षिणतटे वैश्रवण वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अंजन है वक्षार तीसरा वन सुषमाओं से सम्पन्न ।
सिद्ध कूट की पूजा कर के उर में सुख होता उत्पन्न ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतासरिताद्दक्षिणतअंजन वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अंजनात्मा चौथा है वक्षार महा शोभाशाली ।
सिद्धायतन एक मैं पूजूँ त्रिभुवन में गौरवशाली ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतासरिताद्दक्षिणतटे अंजनात्मा वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

पश्चिम विदेह सीतोदा नदी दक्षिण तट भद्रशाल वेदी के चार वक्षार

वीर छंद

सीतोदा के दक्षिण तट पर श्रद्धावान स्वर्ण वक्षार ।
चार कूट में एक कूट पर स्वर्णिम चैत्यालय सुखकार ॥
निज स्वभाव सौन्दर्य प्राप्त कर सिद्ध स्वपद पाऊँ सुविशाल।
अरहंतों की भव्य मूर्तियों को मैं वन्दन करूँ त्रिकाल ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदासरिताद्दक्षिणतटे श्रद्धावान वक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है वक्षार दूसरा अनुपम जन मनहारी विजटावान ।
चार कूट में सिद्ध कूट इक भव्य अकृत्रिम शोभावान ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदासरिताद्दक्षिणतटे विजटावान वक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है वक्षार तीसरा आशीविष सीतोदा दक्षिण ओर ।
सिद्धायतन महासुन्दर लख सुर किन्नर सब भाव विभोर ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदासरिताद्दक्षिणतटे आशीविष वक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चौथा है वक्षार सुखावह शिव सुख का देता संदेश ।
चार कूट में एक कूट पर सिद्ध कूट है श्री जिनेश ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदासरिताद्दक्षिणतटे सुखावह वक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पश्चिम विदेह सीतोदा नदी उत्तर तट देवारण्य वेदी के चार वक्षार

वीर छंद

द्वीप धातकी विजयमेरु सम्बन्धी सीतोदा सरि धन्य ।
उत्तर तट है वेदी देवारण्य निकट में पर्वत अन्य ॥
चन्द्रमाल वक्षार मनोरम स्वर्णमयी अति शोभावान ।
सिद्धायतन परम पावन है मान स्तंभ युक्त छविमान ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ-सीतोद्वानद्युत्तरतटे चन्द्रमाल वक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सूर्यमाल वक्षार दूसरा स्वर्णमयी है विश्व प्रसिद्ध ।
सिद्ध कूट है महा मनोहर पूजूँ शुद्ध भावना सिद्ध ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ-सीतोद्वानद्युत्तरतटे सूर्यमाल वक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नागमाल वक्षार तीसरा स्वर्णिम शोभा से संयुक्त ।
शाश्वत जिन चैत्यालय वन्दूँ विनय भाव से होकर युक्त ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ-सीतोद्वानद्युत्तरतटे नागमाल वक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देवमाल वक्षार चतुर्थम वन्दनीय ऋषियों द्वारा ।
शाश्वत जिन मंदिर दर्शन से कट जाती है भवकारा ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ-सीतोद्वानद्युत्तरतटे देवमाल वक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

ताटंक

विजयमेरू संबंधी सोलह वक्षारों का ज्ञान हुआ ।
शाश्वत जिनबिम्बों को अर्घ्य चढाकर हर्ष महान हुआ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

शार्दूलविक्रीडित

परभावों से भिन्न शुद्ध चेतन आनंद का कंद है ।
पर द्रव्यों से रहित द्रव्य अपना शुद्धात्मा जानिए ॥

नव तत्त्वों में श्रेष्ठ तत्त्व निज ही सबको उपादेय है ।
ये ही है आराधनीय प्रति क्षण ये ही परम श्रेष्ठ है ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ धारूँ जिन मुनि वेश।
पर कर्त्तव्य अभाव कर सफल करूँ उद्देश॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ एक हजार सात सौ अट्ठाईस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद – मानव

रवि शशि सम तेज प्रगट कर अन्तर्मन शुद्ध करो तुम ।
काषायिक भाव नष्ट कर उर उज्ज्वल अभी करो तुम ॥
इच्छाओं का निरोध कर उत्तम तप हृदय धरो तुम ।
निर्जरा शक्ति से सारे बंधों को शीघ्र हरो तुम ॥
पद नित्य निरंजन के हित इतना तो करना होगा ।
अविलंब आत्मा का ही अब निर्मल ध्यान करो तुम ॥
मिल जाए तुम्हें ध्यान फल अरहंत दशा प्रगटाओ ।
फिर ध्यान छोड़ कर चेतन उर में आनंद भरो तुम ॥
वक्षार मनोरम सोलह पूजो तुम परम विनय से ।
अंतर मन उज्ज्वल करके त्रैलोक्य विधान करो तुम ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षोडशवक्षार जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – वीर

विजय मेरु सोलह वक्षार जिनालय मैंने पूजे देव ।
आत्म ध्यान की महाशक्ति से मैं भी सिद्ध बनूँ स्वयमेव ॥
तीन लोक के जिन भवन कृत्रिम अकृत्रिम सर्व ।
विनय सहित वन्दन करूँ तज कर पर का गर्व ॥

इत्याशीर्वादः

ॐ

श्री धातकी खंड विजयमेरु चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - रोला

विजयमेरु संबंधित हैं विजयार्ध रजतमय ।
पूर्व और पश्चिम विदेह सोलह सोलह जय ॥
भरतैरावत दो रजताचल दक्षिण उत्तर ।
इन पर हैं चौंतीस जिनालय स्वर्णिम सुन्दर ॥
तीन शतक छह शतक बहत्तर जिन प्रतिमाएँ ।
विनय सहित पूजन करके हम निज को ध्याएँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - विजया

मोह की वारुणी पीके मदमत्त हो,
मैंने आस्रव के भावों से रिश्ता किया ।
अपनी शुद्धात्मा मैंने निरखी नहीं,
भव त्रिविध रोग मैंने सदा को लिया ॥
मैं विजयमेरु विजयार्ध चौंतीस गृह
पूज लूँ भाव से स्वर्णमय अकृत्रिम ।

रत्नमय बिम्ब मुद्रा परम भावमय,
पूर्ण सत्यं शिवं सुन्दरं जिनवरम् ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधी चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जीतूँ अविरति की माया सदा को प्रभो
मैंने पाया है सम्यक्त्व पावन परम।
ताप संसार का क्षय करूँगा अभी
इसमें करना पड़ेगा न कोई भी श्रम ॥
मैं विजयमेरु विजयार्ध चौंतीस गृह
पूज लूँ भाव से स्वर्णमय अकृत्रिम।
रत्नमय बिम्ब मुद्रा परम भावमय,
पूर्ण सत्यं शिवं सुन्दरं जिनवरम् ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधी चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

चिर प्रमाद विनाशूँ मुझे शक्ति दो,
मैं महाव्रत की महिमा निजंतर धरूँ।
मूल गुण सर्व पालूँ मैं अतिचार बिन
शुद्ध चारित्र धारूँ सकल दुख हरूँ ॥
मैं विजयमेरू विजयार्ध चौंतीस गृह
पूज लूँ भाव से स्वर्णमय अकृत्रिम।
रत्नमय बिम्ब मुद्रा परम भावमय,
पूर्ण सत्यं शिवं सुन्दरं जिनवरम् ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधी चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

मैं कषायों के जय का करूँ यत्न अब
प्राप्त कर लूँ महाशील गुण शाश्वत।
चौकड़ी तीन पहिले हरूँ हे प्रभो
साधु बन जाऊँ स्वामी मैं अरहंतवत् ॥

मैं विजयमेरू विजयार्ध चौंतीस गृह
पूज लूँ भाव से स्वर्णमय अकृत्रिम।
रत्नमय बिम्ब मुद्रा परम भावमय,
पूर्ण सत्यं शिवं सुन्दरं जिनवरम्॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधी चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

आत्म अनुभव से पाऊँ यथाख्यात रस
मैं अनाहारी होकर जिऊँ हे प्रभो।
रोग क्षय कर दूँ सारा क्षुधारोग का
मात्र स्वात्मानुभव रस पिऊँ हे विभो॥
मैं विजयमेरू विजयार्ध चौंतीस गृह
पूज लूँ भाव से स्वर्णमय अकृत्रिम।
रत्नमय बिम्ब मुद्रा परम भावमय,
पूर्ण सत्यं शिवं सुन्दरं जिनवरम्॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधी चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

संज्वल शेष भी अब क्षय करूँ
निष्कषायी बनूँ मैं यथाख्यात पा।
बनूँ शुक्ल ध्यानी अकामी विभो
ज्ञान कैवल्य का भी लगा लूँ पता॥
मैं विजयमेरु विजयार्ध चौंतीस गृह
पूज लूँ भाव से स्वर्णमय अकृत्रिम।
रत्नमय बिम्ब मुद्रा परम भावमय,
पूर्ण सत्यं शिवं सुन्दरं जिनवरम्॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधी चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

हृदय मेरा कलुषित रहा आज तक
पाए दुख चारों गतियों के मैंने प्रभो॥

मैं विभावों के चक्कर में ऐसा फँसा
देखी पंचम स्वगति भी न मैंने विभो ॥
मैं विजयमेरू विजयार्ध चौंतीस गृह
पूज लूँ भाव से स्वर्णमय अकृत्रिम।
रत्नमय बिम्ब मुद्रा परम भावमय,
पूर्ण सत्यं शिवं सुन्दरं जिनवरम् ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत् विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

योग भी क्षय करूँ बन अयोगी प्रभो
मोक्ष फल पाने का भाव उर में जगे।
फिर निजानंद रसलीन हो जाऊँ मैं
मेरा शुद्धात्मा में ही मन अब लगे ॥
मैं विजयमेरु विजयार्ध चौंतीस गृह
पूज लूँ भाव से स्वर्णमय अकृत्रिम।
रत्नमय बिम्ब मुद्रा परम भावमय,
पूर्ण सत्यं शिवं सुन्दरं जिनवरम् ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

ज्ञान धारा की पायी तरंगे सहज
मोह मद का किया नाश मैंने प्रभो।
शुद्ध अनुभूति पायी है अपनी सहज
किया अपने में ही वास मैंने विभो ॥
मैं तो परिपूर्ण हूँ मैं तो सम्पूर्ण हूँ
मैं तो आपूर्ण हूँ साम्यभावी हूँ मैं ॥
पद अनर्घ्य की है भावना निज हृदय
इसलिए आज से ध्रुवस्वभावी हूँ मैं ॥
मैं विजयमेरु विजयार्ध चौंतीस गृह
पूज लूँ भाव से स्वर्णमय अकृत्रिम।

रत्नमय बिम्ब मुद्रा परम भावमय,
पूर्ण सत्यं शिवं सुन्दरं जिनवरम् ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत् विजयार्धजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

छंद - उपजाति

विजयार्ध जिन गृह पूजूँ सदा मैं ।
मिथ्यात्व छोडूँ सम्यक्त्व पाऊँ ॥
शुद्धात्मा की है भावना उर ।
आनंद अतीन्द्रिय हे नाथ पाऊँ ॥

छंद - वीर

विजयमेरु के पूर्व और पश्चिम में हैं बत्तीस विदेह ।
एक एक विजयार्ध सुगिरि हैं जिन पर हैं शाश्वत जिन गेह ॥
भरत और ऐरावत में दो रूपाचल पर दो जिन धाम ।
इन चौंतीस जिनालय की जिन प्रतिमाओं को करूँ प्रणाम ॥

म्लेच्छखंड है पाँच यहाँ प्रत्येक क्षेत्र में महाप्रसिद्ध ।
आर्यखंड इक त्रेसठ पुरुष शलाका होते हैं सुप्रसिद्ध ।
तीर्थंकर चौबीस चक्रवर्ती बारह इनमें होते ।
नव नारायण नव प्रति नारायण बलभद्र सुनव होते ॥

अर्घ्यावलि

विजयमेरु पूर्व विदेहस्थ सोलह विजयार्ध जिनालय

छंद - ताटंक

कच्छा देश विदेह क्षेत्र में है विजयार्ध अचल मनहर ।
रक्ता रक्तोदा सरिताओं से छह खंड हुए सुन्दर ॥
आर्यखंड में क्षेमा नगरी तीर्थंकर विचरण करते ।
रजताचल के श्री जिन चैत्यालय को हम वंदन करते ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुकच्छा क्षेमपुरी है तीर्थंकर चक्री का धाम ।
है विजयार्ध सुगिरि पर श्री जिन चैत्यालय शाश्वत अभिराम ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महाकच्छा के भीतर नगर अरिष्टापुरी महान ।
सुन्दर रजताचल की जिन प्रतिमाओं को वन्दूँ धर ध्यान ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश कच्छाकावती मध्य में नगर अरिष्टपुरी मनहार ।
इसके रजताचल पर जिनगृह के जिनबिम्ब नमूँ सुखकार ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आवर्ता है देश अनूठा खड़गा नगरी शोभावान ।
जिनगृह है विजयार्ध शिखर पर जिन प्रतिमा पूजूँ धर ध्यान ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश लांगलावर्ता में मंजूषा नगरी अति सुन्दर ।
जिन मंदिर विजयार्ध शिखर पर भाव सहित वन्दूँ मनहर ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पुष्कला में औषध नगरी है अति वैभवशाली ।
सिद्धकूट विजयार्ध रजत गिरि को मैं पूजूँ गुणशाली ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पुष्कलावती मध्य में पुण्डरीकिणी नगरी जान ।
रूपाचल के जिन मंदिर में जिनबिम्बों को पूजूँ आन ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वत्सादेश विदेह क्षेत्र में पुरी सुसीमा शोभित मध्य ।
गिरि विजयार्ध जिनालय की प्रतिमाओं को पूजूँ दे अर्घ्य ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिद्दक्षिणतटे वत्सादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुवत्सापुरी कुन्डला आर्य खंड अति मनभावन ।
रजताचल के सिद्धकूट पर जिनवर पूजूँ अति पावन ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिद्दक्षिणतटे सुवत्सादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महावत्सा अपराजितपुरी एक रूपाचल है ।
जिन मंदिर संदेश दे रहा निज स्वरूप ही अविचल है ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिद्दक्षिणतटे महावत्सादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वत्सकावती सलोना मध्य मयंकापुरी प्रधान ।
रूपाचल के सिद्धकूट की पूजन कर लूँ ध्रुव विज्ञान ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिद्दक्षिणतटे वत्सकावती देशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

रम्या देश विदेह क्षेत्र में अंकावती नगर सुविशाल ।
गिरि विजयार्ध जिनालय शाश्वत को मैं सदा झुकाऊँ भाल ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिद्दक्षिणतटे रम्यादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुरम्या मध्य मनोहर पद्मावती नगर सुखकार ।
रजताचल के सिद्धकूट को शीष झुकाऊँ बारंबार ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिद्दक्षिणतटे सुरम्यादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है रमणीया देश अनोखा शुभापुरी रजताचल एक ।
निज स्वभाव की प्राप्ति हेतु श्री जिनवर पूजूँ मस्तक टेक ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिद्दक्षिणतटे रमणीयादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश मंगलावती मध्य में रत्न संचयापुरी सुदिव्य ।
रूपाचल के सिद्धकूट की जिन प्रतिमाएँ पूजूँ भव्य ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिद्दक्षिणतटे मंगलावती देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पश्चिम विदेहस्थ सोलह विजयार्ध जिनालय

दोहा

विजयमेरु पश्चिम दिशा हैं विदेह विजयार्ध ।
सोलह पर सोलह भवन पूजूँ आत्म हितार्थ ॥
एक देश में खंड छह रजधानी है एक ।
म्लेच्छखंड तो पाँच हैं आर्य खंड है एक ॥
पद्मादेश विदेह में अश्वपुरी अभिराम ।
रजताचल वैताढ्य पर शाश्वत जिनवर धाम ॥
रत्नमयी जिनबिम्ब सब वन्दूँ बारम्बार ।
निज पुरुषार्थ जगा करूँ प्रतिपल तत्त्व विचार ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुपद्मा मध्य में सिंहपुरी के पास ।
चैत्यालय विजयार्ध को वन्दूँ धर उल्लास ॥
उपशम भाव प्रकाश ले करूँ भाव श्रुत ज्ञान ।
पाकर क्षायिक भाव को निज में करूँ प्रमाण ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महापद्मा अचल है वैताढ्य महान ।
महापुरी नगरी सहित जिनगृह शोभावान ॥
मोहजाल में उलझ कर करूँ न भ्रम विषपान ।
राग आग को क्षय करूँ पाऊँ सम्यग्ज्ञान ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. ।

देश पद्मकावती का रजताचल सुख धाम ।
सिद्धकूट के चैत्य सब सादर करूँ प्रणाम ॥
आर्यखंड के मध्य में विजयापुरी प्रसिद्ध ।
निज स्वरूप को जान कर हो जाऊँ मैं सिद्ध ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शंखा देश विदेह में रजताचल के शीष ।
सिद्धायतन महान के वन्दूँ मैं जगदीश ॥
आर्यखंड के मध्य में अरजा नगरी जान ।
सम्यक् दर्शन प्राप्त कर मैं पाऊँ निर्वाण ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नलिना देश विदेह में गिरि विजयार्ध सुरम्य ।
सिद्धायतन महान के श्री जिन चैत्य प्रणम्य ॥
आर्य खंड के मध्य में विजया नगरी जान ।
शुक्ल ध्यान की अग्नि में करूँ कर्म अवसान ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे नलिनादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कुमुदा देश महान में रूपाचल के शीष ।
सिद्ध कूट जिन भवन में पूजूँ त्रिभुवन ईश ॥
नगर अशोकपुरी अतुल वैभव से सम्पन्न ।
जीतूँ मोह कषाय रिपु समकित कर उत्पन्न ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे कुमुदादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सरिता देश प्रसिद्ध है रजताचल छविमान ।
सिद्ध कूट जिन भवन में इकशत वसु भगवान ॥

वीत शोक नगरी महा आर्य खंड के मध्य।
मैं साधन मैं साधना मैं ही साधक साध्य ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सरितादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वप्रादेश विदेह में रूपाचल संयुक्त।
सिद्धायतन प्रधान है बिम्बों से संयुक्त ॥
आर्य खंड के मध्य में विजयापुरी सचित्र।
सम्यग्दर्शन पूर्वक हों परिणाम विचित्र ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुवप्रा मध्य में गिरि विजयार्ध अचल।
नवकूटों में एक पर सिद्ध कूट अविचल ॥
पुरी वैजयंती महा आर्य खंड अभिराम।
वीतरागता प्राप्त हो रहे भाव वसुयाम ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुवप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महावप्राविरल गिरि विजयार्ध उतंग।
जिनगृह के जिन चैत्य सब पूजूँ सहित उमंग ॥
आर्य खंड में मुख्य है नगर जयंती श्रेष्ठ।
भाव शुभाशुभ नेष्ठ है शुद्ध भाव ही श्रेष्ठ ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे महावप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वप्रकावती में रूपाचल विख्यात।
सिद्धायतन प्रसिद्ध को नित प्रति पूजूँ प्रात ॥
मुख्यपुरी अपराजिता आर्यखंड में जान।
पाँचों बंध अभाव कर पाऊँ पद निर्वाण ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

गंधादेश विदेह में चक्रापुरी महान ।
आठों मद को जीत कर क्षय कर दूँ अभिमान ॥
गिरि विजयार्ध जिनेन्द्र गृह सिद्धपुरी अभिराम ।
भक्ति भाव से युक्त हो मैं वन्दूँ वसु याम ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुगंधा मध्य में गिरि विजयार्ध महान ।
सिद्धायतन महान को मैं वन्दूँ धर ध्यान ॥
आर्य खंड के मध्य में खड्गापुरी सुनाम ।
समयसार का सार पा पाऊँ शिवपुर धाम ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुगंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश गंधिला मध्य में रूपाचल के शीष ।
सिद्धायतन प्रसिद्ध के पूजूँ नित जगदीश ॥
आर्य खंड के मध्य में नगर अयोध्या नाम ।
नियमसार अनुसार चल निज में लूँ विश्राम ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

गंध मालिनी देश में गिरि विजयार्ध महान ।
जिन चैत्यालय पूज कर करूँ कर्म अवसान ॥
आर्यखंड के बीच में नगर अयोध्या जान ।
जिनवर प्रवचन सार सुन करूँ आत्म कल्याण ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयमेरु भरतैरावत के दो विजयार्ध जिनालय

भरत क्षेत्र छह खंड में है विजयार्ध प्रधान ।
भाव सहित पूजन करूँ पाऊँ केवल ज्ञान ॥
आर्य खंड के मध्य में नगर अयोध्या जान ।
अस्तिकाय पाँचों समझ करूँ आत्म कल्याण ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-भरतक्षेत्रस्थविजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

ऐरावत के मध्य में रचताचल के शीष ।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति हित पूजूँ जिनवर ईश ॥
आर्यखंड के मध्य में नगर अयोध्या जान ।
निज परमात्म प्रकाश हित करूँ भाव श्रुत ज्ञान ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-ऐरावत क्षेत्रस्थविजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

सोरठा

संबंधित विजयार्ध चौतींसों जिनगेह सब ।
उर में धार सनेह पूजे मैंने भाव से ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ पाऊँ शुद्ध स्वभाव ।
भोक्तृत्व का भाव तज भव का करूँ अभाव ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ तीन हजार छह सौ बहत्तर जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद श्रृंगार

भव्य समकित की बेला पा । ऊषा ने गाए मंगल गान ।
ज्ञान किरणावलियों ने आ। मोह मद किया त्वरित अवसान॥

नवल कैवल्य किरण द्युति लख। घातिया कांप रहे थरथरा।
यथाख्याती आभा ने आ । किया चेतन को मुग्ध मुखर ॥

स्वपरिणति नृत्य कर रही दिव्य। गूंजते निज महिमा के गीत।
भावना सहज मुस्कुराती। मिली है ध्रुव चेतन की प्रीत॥

गगन की उज्ज्वलता धूमिल। जा रही पूर्ण विलय की ओर।
निजाभा गुण सम्पन्नित पा। हुआ है चेतन आत्म विभोर॥

कोकिला भी पंचम स्वर में। सुनाती है भव जय के गीत।
सहज चैतन्य राज प्रतिपल। सुनाता है शिव सुख संगीत॥

सिद्धपुर पाने की आशा। हो गई है चेतन की पूर्ण।
शाश्वत ध्रौव्य त्रिकाली सूर्य। मुक्ति सुख से अतिशय आपूर्ण॥

ज्ञान धारा का सलिल प्रवाह। भर रहा है उर में उत्साह।
मिला है शिव सुख सहज समुद्र। अनंतों गुण से भरा अथाह॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद - वीर

विजयमेरु विजयार्ध जिनालय पूजे हैं मैंने चौंतीस।
रत्निम प्रतिमाएँ वन्दन कर उनमें देखे हैं जगदीश॥
तीन लोक मण्डल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वादः

श्री धातकी खंड विजयमेरु षटकुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - रोला

विजयमेरु संबंधी छहों कुलाचल अनुपम ।
हिमवन महाहिमवन निषध अरु नील दिव्यतम ॥
रुक्मि और शिखरी पर्वत पर सब हैं मोहित ।
स्वर्णमयी जिन चैत्यालय इन सब पर शोभित ॥

दोहा

छह गृह की प्रतिमा गिनो छह सौ अड़तालीस ।
पूजन कर होऊँ सुखी पाऊँ जिन आशीष ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षटकुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - चौपाई

उत्तम अनुभव नीर चढ़ाऊँ । ज्ञान भाव शाश्वत प्रगटाऊँ ॥
विजय षट्कुलाचल नित वन्दूँ । छह जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

उत्तम अनुभव चंदन लाऊँ । भव आताप सर्व विनशाऊँ ।
विजय षट्कुलाचल नित वन्दूँ । छह जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि. ।

उत्तम अनुभव अक्षत लाऊँ । अपना अक्षय पद प्रगटाऊँ ॥
विजय षट्कुलाचल नित वन्दूँ। छह जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ॥
ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि.।

उत्तम अनुभव पुष्प सजाऊँ। निज निष्कामी पद प्रभु पाऊँ ॥
विजय षट्कुलाचल नित वन्दूँ। छह जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ॥
ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

अनुभव वास निर्मित चरु लाऊँ। क्षुधा रोग पर मैं जय पाऊँ ॥
विजय षट्कुलाचल नित वन्दूँ। छह जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ॥
ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

निज अनुभव के दीप जलाऊँ। महा मोह का तिमिर नशाऊँ ॥
विजय षट्कुलाचल नित वन्दूँ। छह जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ॥
ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

निज अनुभव की धूप बनाऊँ । अष्ट कर्म सम्पूर्ण नशाऊँ ॥
विजय षट्कुलाचल नित वन्दूँ। छह जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ॥
ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

निज अनुभव का फल प्रभु पाऊँ। महामोक्ष फल उत्तम पाऊँ ॥
विजय षट्कुलाचल नित वन्दूँ। छह जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ॥
ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

भव भावों के अर्घ्य न लाऊँ। पद अनर्घ्य अपना प्रभु पाऊँ ॥
विजय षट्कुलाचल नित वन्दूँ। छह जिन चैत्यालय अभिनन्दूँ॥
ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

विजय मेरु षटकुलाचल जिनालय

छंद – उपजाति

महिमामयी है हिमवान पर्वत ।
जिन चैत्य आलय स्वयमेव निर्मित ॥
जिनबिम्ब इकशत वसु अकृत्रिम हैं ।
है ध्यान श्रद्धा अरहंत छविवत ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-हिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पूजूँ महायुत हिमवान जिन गृह ।
हो जाऊँ स्वामी सबसे ही निस्पृह ॥
निज ध्यान करके भव दुख हरूँ मैं ।
निज आत्म जल से भवो दधि तरूँ मैं ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-महाहिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पर्वत निषध पर जिनगेह वन्दूँ ।
जिनबिम्ब में प्रभु निज बिम्ब जोऊँ ॥
निज ज्ञान दीपक उर में जलाऊँ ।
मिथ्यात्व जय कर शिव सौख्य पाऊँ ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-निषधपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

गिरि नील उत्तम जिन धाम वन्दूँ ।
अरहंत सम ही निज रूप समझूँ ॥
जड़ देह पुद्गल से भिन्न हूँ मैं ।
अतएव भव से हे नाथ सुलझूँ ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-नीलपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

रुक्मि कुलाचल जिन चैत्य आलय ।
पूजूँ सदा प्रभु शुभ भावना मय ॥
संसार सागर के पार जाऊँ ।
निज भावना को सफलित बनाऊँ ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-रुक्मिपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शिखरी कुलाचल महिमामयी पर ।
जिन गेह सुन्दर त्रिभुवन जयी है ॥
पूजन करूँ मैं जिन बिम्ब सब की ।
अवसर मिला यह भवदुख जयी है ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-शिखरीपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - ताटंक

भेदज्ञान की छैनी द्वारा तन से भिन्न करो आत्मा ।
अन्तरात्मा हो जाते ही दिख जाएगा परमात्मा ॥
बहिरात्मापन नहीं रहेगा नहीं रहेगा उर मिथ्यात्व ।
समकित की महिमा आते ही हो जाओगे शुद्धात्मा ॥

शुद्धात्मा ही अष्टकर्म क्षय करने में है बहु सक्षम ।
कर्मादिक के क्षय होते ही हो जाओगे सिद्धात्मा ॥
यही प्रक्रिया मोक्ष प्राप्ति की एक मात्र है ग्रहण करो ।
आत्म ज्ञान का अवलंबन ले हो जाओगे मुक्तात्मा ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ पाऊँ ज्ञान प्रकाश ।
आत्माश्रय से प्रभु करूँ रागद्वेष का नाश ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद - विधाता

स्वपरिणति रंग केशरिया लुटाती आज आयी है।
तरंगे ज्ञान की लेकर मेरे उर में समायी है॥
विभावी भाव क्षय करके स्व चेतन से ये बतियाती।
स्वभावी भाव की सरिता मनोरम लहलहायी है॥

नहीं मिथ्यात्व का रस है नहीं अविरति की है छाया।
शुद्ध संयम का रथ लेकर मुझे लेने को आयी है॥
स्वज्ञायक पा लिया मैंने निजानंदी बना हूँ अब।
मेरा अभिषेक करने को इन्द्र सुर संग लायी है॥

धर्म ध्यानी सुफल देकर शुक्ल ध्यानी बनाया है।
यथाख्याती पवन द्वारा रिझाने मुझको आयी है॥
ध्यान की अग्नि में ईंधन कर्म का ये जलाएगी।
मोह को क्षीण करने की कला निरुपम सिखायी है॥

घातिया चार जीते हैं दशा अरहंत प्रगटायी।
मुझे कैवल्य रवि का ही परम उपहार लायी है॥
हुआ निर्भार मैं तो अब इसी के संग रहने से।
सिद्ध पद से सुसज्जित कर ध्रौव्य सुख देने आयी है॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद - वीर

भव्य षट कुलाचल जिन मंदिर विजय मेरु के पूजे आज।
महिमामयी जिनेश्वर वन्दूँ भाव सहित मैं निज हित काज॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वादः

卐

श्री धातकी खंड पश्चिम दिशा
अचलमेरु षोडश जिनालय

स्थापना

छंद - वीर

खंड धातकी पश्चिम दिशि में अचलमेरु सोलह जिनधाम ।
मेरु सहस चौरासी योजन ऊँचा नभ में भव्य ललाम ॥
चारों दिशा में चार चार जिन मंदिर स्वर्णमयी पावन ।
एक शतक वसु प्रतिमा शोभित हैं चैत्यालय मनभावन ॥

विनय भक्ति से पूजन करके करूँ आत्मा का ही ध्यान ।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित पा पाऊँ अविकल पद निर्वाण ॥
इन सब पर सतरह सौ अट्ठाईस बिम्ब जिनवर वन्दूँ ।
ध्रुव स्वतत्त्व का निर्णय करके निज स्वतत्त्व नित अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - विजया

मोह बेईमान है दुष्ट है रुष्ट है,
पुष्ट है मुझको देता है यह घोर दुख ।
कोई इसको नहीं रोकता है कभी,
मैंने पाया नहीं आज तक कुछ भी सुख ॥

मैं अचलमेरु सोलह जिनालय जजूँ,
अपनी शुद्धात्मा को भजूँ हे प्रभो।
ज्ञान कैवल्य की आभा पाऊँ अचल,
दशा अरहंत सम शीघ्र पाऊँ विभो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

शुद्ध चंदन सुरभि मैंने पायी नहीं,
कैसे अविरति को हरता बताओ प्रभो।
कैसे संसार ज्वर नाश होता प्रभो,
कैसे भव पार जाता बताओ विभो॥
मैं अचलमेरु सोलह जिनालय जजूँ,
अपनी शुद्धात्मा को भजूँ हे प्रभो।
ज्ञान कैवल्य की आभा पाऊँ अचल,
दशा अरहंत सम शीघ्र पाऊँ विभो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

अक्षती भाव मैंने तो क्षय कर दिया,
अपना अक्षय स्वपद मैंने पाया नहीं।
अपनी शुद्धात्मा को न देखा कभी,
गीत उसका कभी मैंने गाया नहीं॥
मैं अचलमेरु सोलह जिनालय जजूँ,
अपनी शुद्धात्मा को भजूँ हे प्रभो।
ज्ञान कैवल्य की आभा पाऊँ अचल,
दशा अरहंत सम शीघ्र पाऊँ विभो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि.।

काम के राहु ने ग्रस लिया है मुझे,
शील गुण अपना बिलकुल सुहाता नहीं।
कैसे निष्काम पद पाऊँगा मैं प्रभो,
यह समझ में मेरे कुछ भी आता नहीं॥

अचलमेरु सोलह जिनालय जजूँ,
अपनी शुद्धात्मा को भजूँ हे प्रभो।
ज्ञान कैवल्य की आभा पाऊँ अचल,
दशा अरहंत सम शीघ्र पाऊँ विभो ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

चिर क्षुधा रोग नाशूँ विभावों को हर,
निज अनाहारी पद प्राप्त करके रहूँ।
ये परीषह व उपसर्ग जीतूँ सभी,
निज निजानंद सागर में हरदम बहूँ ॥
मैं अचलमेरु सोलह जिनालय जजूँ,
अपनी शुद्धात्मा को भजूँ हे प्रभो।
ज्ञान कैवल्य की आभा पाऊँ अचल,
दशा अरहंत सम शीघ्र पाऊँ विभो ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मैं महा मोह तम को विनाशूँ प्रभो,
ज्ञान का दीप लेके चलूँ अपने घर।
राग को मैं जला दूँ सदा के लिए,
मेरा शुद्धात्मा पूर्ण जाए निखर ॥
मैं अचलमेरु सोलह जिनालय जजूँ,
अपनी शुद्धात्मा को भजूँ हे प्रभो।
ज्ञान कैवल्य की आभा पाऊँ अचल,
दशा अरहंत सम शीघ्र पाऊँ विभो ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

शुक्ल ध्यानी मिले धूप निज ध्यान की,
आठों कर्मों के बंधन प्रभो क्षय करूँ।
मैं निरंजन बनूँ नित्य निर्भय बनूँ,
सारे संसार को हे प्रभो जय करूँ ॥

मैं अचलमेरू सोलह जिनालय जजूँ,
अपनी शुद्धात्मा को भजूँ हे प्रभो।
ज्ञान कैवल्य की आभा पाऊँ अचल,
दशा अरहंत सम शीघ्र पाऊँ विभो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

मोक्ष फल प्राप्ति का उर में उद्देश है,
बड़ी कठिनाई से मोक्षोपाय मिला।
मुक्ति का मार्ग पाया अब सम्यक् प्रभो,
ज्ञान सम्पूर्ण आकर के उर में झिला॥
मैं अचलमेरु सोलह जिनालय जजूँ,
अपनी शुद्धात्मा को भजूँ हे प्रभो।
ज्ञान कैवल्य की आभा पाऊँ अचल,
दशा अरहंत सम शीघ्र पाऊँ विभो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य अब तक बनाए हैं भव राग के,
इसलिए पद अनर्घ्य नहीं है मिला।
आज आत्मीय ज्ञान मिला है मुझे,
अब तो संसार पर्वत भी जड़ से हिला॥
ज्ञान का चंद्रमा आज उतरा हृदय,
चांदनी आत्म अनुभव की भी मिल गई।
मेरी सोई हुई आत्मा जग उठी,
मुक्ति रमणी के उर की कली खिल गई॥
मैं अचलमेरु सोलह जिनालय जजूँ,
अपनी शुद्धात्मा को भजूँ हे प्रभो।
ज्ञान कैवल्य की आभा पाऊँ अचल,
दशा अरहंत सम शीघ्र पाऊँ विभो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – शार्दूलविक्रीड़ित

अन्तर बाह्य विशुद्धि प्राप्त करके संसार को जीत लूँ।
राग द्वेष विकार भाव क्षय कर मोहादि से रीत लूँ॥
संवर पूर्वक शुद्ध निर्जरा से बंधन हरूँ पूर्व के।
अपने निज शुद्धात्म तत्त्व की ही हे नाथ मैं प्रीत लूँ॥

अचल मेरु भद्रशाल वन संबंधी चार जिनालय

छंद – उपमान (अहो जगत गुरुदेव)

मेरु अचल गिरि पास भद्रशाल वन सुन्दर।
पूर्व दिशा स्वयमेव शाश्वत श्री जिन मंदिर॥
उत्तम अर्घ्य चढ़ाय निज परिणाम सँवारूँ।
एक शतक अरु आठ श्री जिनबिम्ब निहारूँ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ भद्रशालवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

भद्रशाल वन मध्य सिद्ध कूट जिन आलय।
दक्षिण दिशि की ओर पूजूँ जिन चैत्यालय॥
एक शतक वसु चैत्य सादर शीष झुकाऊँ।
तन कारागृह त्याग मुक्ति शिला पर जाऊँ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ भद्रशालवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालय जिन-बिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

भद्रशाल वन मध्य पश्चिम दिशि में जाऊँ।
शाश्वत श्री जिन धाम पूजूँ अर्घ्य चढ़ाऊँ॥
एक शतक वसु बिम्ब गर्भालय सुखकारी।
रत्नमयी जिनबिम्ब राजत मंगलकारी॥३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ भद्रशालवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

भद्रशाल वन बीच उत्तर दिशि जिन गेहा।
एक शतक वसु चैत्य मैं पूजूँ धर नेहा॥

कीजे सुमति प्रदान मिथ्या मति हर लीजे।
तोड़ूँ सकल विभाव ऐसी बुधि कर दीजे ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ भद्रशालवनस्थित-उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरु नंदन वन संबंधी चार जिनालय

छंद - पद्धटिका

जय अचल मेरु गिरिवर महान ।
नंदनवन पूर्व दिशा प्रधान ॥
शाश्वत जिन चैत्यालय प्रसिद्ध ।
मैं पूजूँ होऊँ स्वयं सिद्ध ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ नन्दनवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नन्दन वन दक्षिण दिशा ओर ।
जिन गृह पूजूँ प्रभु हो विभोर ॥
व्रत समिति गुप्ति चारित्र धार ।
निर्ग्रंथ भावना हो अपार ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ नन्दनवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नन्दन वन पश्चिम दिशा सोह ।
जिनगृह पूजूँ हर दर्श मोह ॥
दशधर्म पलें निर्दोष नाथ ।
छूटे न कभी तुव चरण साथ ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ नन्दनवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नन्दनवन उत्तर दिशि प्रसिद्ध ।
जिनगृह इकशत वसु बिम्ब सिद्ध ॥
रत्नत्रय व्रत धारूँ जिनेश ।
लूँ जन्म जात निर्ग्रंथ वेश ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ नन्दनवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरु सौमनस वन संबंधी चार जिनालय

छंद – चौपई आंचलीबद्ध

अचल मेरु सौमनस महान। पूर्व दिशा जिन गेह प्रधान।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
जल फलादि वसु द्रव्य चढ़ाय। रत्न बिम्ब पूजूँ हर्षाय।
देखें नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महा सुख हो ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ सौमनसवनस्थित-पूर्वदिकजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद – चौपई

अचल मेरु सौमनस प्रधान। दक्षिण दिशि जिन गेह महान।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
जल फलादि वसु द्रव्य चढ़ाय रत्न बिम्ब पूजूँ मन लाय ॥
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ सौमनसवनस्थित-दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरू सौमनस प्रधान। पश्चिम दिशि जिन गेह प्रधान ॥
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
जल फलादि वसु द्रव्य चढ़ाय। रत्न बिम्ब पूजूँ मन लाय ॥
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।११॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ सौमनसवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरू सौमनस महान। उत्तर दिशि जिनगेह प्रधान ॥
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
जल फलादि वसु द्रव्य चढ़ाय। रत्न बिम्ब पूजूँ मन लाय ॥
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।१२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ सौमनसवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरु पांडुक वन संबंधी चार जिनालय

छंद - चौपई

अचल मेरु पान्डुक वन सुन्दर। वन्दूँ पूर्व दिशा जिन मन्दिर।
नाथ अनंत चतुष्टय रूपी। दर्शन सुख बल ज्ञान स्वरूपी ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ पांडुकवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचलमेरु पान्डुक वन सुन्दर। वन्दूँ दक्षिण दिशि जिन मंदिर॥
पर द्रव्यों से सदा भिन्न हूँ। निज स्वभाव से मैं अभिन्न हूँ ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ पांडुकवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरु पान्डुक वन सुन्दर। वन्दूँ पश्चिम दिशि जिन मन्दिर।
विष कर्तृत्व भाव का नाशा। निज ज्ञातृत्व भाव परकाशा ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ पांडुकवनस्थित-पश्चिमदिक जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचलमेरु पान्डुक वन सुन्दर। वन्दूँ उत्तर दिशि जिन मंदिर॥
कर्म शत्रु को क्षण में नाशा। दर्शज्ञान सुख वीर्य प्रकाशा ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ पांडुकवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - गीत

मैं अनादि से रहा निगोदादिक के भीतर,
त्रस होकर दुर्लभता से यह नर तन पाया।
जिन कुल पा तत्त्वाभ्यास में लीन हुआ मैं,
तत्त्व ज्ञान होते ही निज परिणति को भाया॥
जब सम्यग्दर्शन की महिमा मैंने पायी,
सम्यग्ज्ञान हर्ष से पुलकित भीतर आया।
त्वरित स्वरूपाचरण संग ले सम्यक् चारित्र,
अनुभव रस बरसाता निज अंतर में छाया॥

छंद - दोहा

महार्घ्य अर्पण करूँ अचलमेरु जिनराज ।
भाव भासना प्राप्त पाऊँ निज पदराज ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद - दोहा

जिन पूजन से प्राप्त हो सुमति अपूर्व महान ।
समकित की आराधना करूँ सदा भगवान ॥

छंद - मानव

अंतर मन की वीणा पर समकित रागिनी बजा दो ।
समकित की कथा सुपावन समकित के गीत गुँजा दो ॥
समकित का फागुन आए निज परिणति रंग सुहाए ।
समकित की पिचकारी से समरस के रंग बहाए ॥
समकित की ज्योति मनोरम अन्तर में जब जागेगी ।
अघ की अँधियारी भय से पलभर में तब भागेगी ॥
बहुरंगे पुष्प खिले हों निज की मनोज्ञ क्यारी में ।
निजरस की रंगबिरंगी मस्ती हो गुणधारी में ॥
समकित की गुलाल की आभा मुखड़े पर मुसकाती हो ।
सतरंगी चूनर ओढ़े निज सुमति गीत गाती हो ॥
निज रंग सुमति ने घोला समता से हुई ठिठौली ।
निज के स्वभाव से चेतन करता है आँख-मिचौली ॥
चेतन की प्रीत अनोखी मंगलमय मुक्तिरमा की ।
पूनम की उजियाली है रजनी है विनय अमा की ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद - वीर

अचलमेरु सोलह चैत्यालय की महिमा है अपरंपार ।
भाव सहित पूजन कर मैंने पाया उर में सौख्य अपार ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

ॐ

श्री धातकी खंड अचलमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - वीर

खंड धातकी अचलमेरु संबंधित चार सुगिरि गजदंत।
स्वर्णमयी चारों जिनगृह में रत्नमयी प्रतिमा अरहंत ॥
एक एक में एक शतक वसु बिम्ब श्रेष्ठ हैं शोभावान।
भेद ज्ञान विज्ञान प्राप्ति हित भाव सहित पूजूँ भगवान ॥
चार शतक बत्तीस बिम्ब जिन वन्दूँ स्वामी भली प्रकार।
विदिशाओं में हस्ति दंत सम गजदंतों की जय जय कार ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - सार (चाल-गौतम स्वामी वन्दूँ नामी)

रत्नमयी जिनबिम्ब शाश्वत की पूजन करता हूँ।
ज्ञान भाव की महा कृपा से मैं वन्दन करता हूँ ॥
अचल मेरु गजदंत जिनालय चारों भव दुखहारी।
भवदुख क्षय के हेतु सदा मैं वन्दूँ शिव सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

व्रत संयम धारण करने का भाव हृदय में जागा।
अविरति वाला भाव सदा को नाथ हृदय से भागा ॥

अचल मेरु गजदंत जिनालय चारों भव दुखहारी।
भवदुख क्षय के हेतु सदा मैं वन्दूँ शिव सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

अक्षय पद की प्राप्ति हेतु मैं अक्षत भाव जगाऊँ।
भवदधि तरकर शिवपुर जाऊँ निज की बीन बजाऊँ॥
अचल मेरु गजदंत जिनालय चारों भव दुखहारी।
भवदुख क्षय के हेतु सदा मैं वन्दूँ शिव सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि.।

काम विनाशक शील पुष्प से निज की मूर्ति सजाऊँ।
महाशील गुण वाली शुचिमय वीणा शुद्ध बजाऊँ ॥
अचल मेरु गजदंत जिनालय चारों भव दुखहारी।
भवदुख क्षय के हेतु सदा मैं वन्दूँ शिव सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

मैं तो पूर्ण अनाहारी हूँ निज की महिमा गाऊँ।
क्षुधा रोग की पीड़ा नाशूँ शाश्वत निज पद पाऊँ॥
अचल मेरु गजदंत जिनालय चारों भव दुखहारी।
भवदुख क्षय के हेतु सदा मैं वन्दूँ शिव सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

महा मोह के मद को नाशूँ राग भाव विनशाऊँ।
शुद्ध ज्ञान गुण प्रगट करूँ मैं जीवन ज्योति जगाऊँ॥
अचल मेरु गजदंत जिनालय चारों भव दुखहारी।
भवदुख क्षय के हेतु सदा मैं वन्दूँ शिव सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

अष्ट कर्म क्षय करने को प्रभु धर्म धूप उर लाऊँ।
नित्य निरंजन पद पाने को शिवपथ पर आ जाऊँ ॥
अचल मेरु गजदंत जिनालय चारों भव दुखहारी।
भवदुख क्षय के हेतु सदा मैं वन्दूँ शिव सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

सहज भाव आश्रय के फल में महा मोक्ष फल पाऊँ।
गरिमाशाली शिव सुख पाऊँ फिर न लौट कर आऊँ॥
अचल मेरु गजदंत जिनालय चारों भव दुखहारी।
भवदुख क्षय के हेतु सदा मैं वन्दूँ शिव सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य चढ़ाऊँ निज भावों के पद अनर्घ्य प्रगटाऊँ।
यह भव सागर सदा सदा को हे प्रभु मैं विघटाऊँ ॥
काम भोग की अधमाधम चिन्ताएँ नाशूँ स्वामी।
निज अनुभूति करूँ मैं प्रतिपल सुख पाऊँ अविरामी ॥
अचल मेरु गजदंत जिनालय चारों भव दुखहारी।
भवदुख क्षय के हेतु सदा मैं वन्दूँ शिव सुखकारी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

अचल मेरु गजदंत चार जिनालय

छंद - सरसी आंचलीबद्ध

अचल मेरु आग्नेय दिशा सौमनस रजत गजदंत।
सप्तकूट में एक कूट पर जिन मंदिर अरहंत ॥
श्री तीनलोक भगवन्त पूजूँ भाव से ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ आग्नेयविदिशि सौमनसगजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरु नैऋत्य कोण में विद्युत्प्रभ गजदंत ।
नव कूटों में एक कूट पर जिन मंदिर भगवंत ॥
श्री तीनलोक भगवन्त पूजूँ भाव से ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ नैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

है वायव्य कोण में स्वर्णिम गंध मादनाचल ।
सप्त कूट में एक कूट पर जिन गृह श्रेष्ठ विमल ॥
श्री तीनलोक भगवन्त पूजूँ भाव से ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ वायव्यविदिशि गंधमादनाचलपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

अचलमेरु ईशान दिशा में माल्यवान गजदंत ।
नव कूटों में एक कूट पर जिन मंदिर भगवंत ॥
श्री तीनलोक भगवन्त पूजूँ भाव से ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ ईशानविदिशि माल्यवानगजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

महार्घ्य

छंद – वीर

सोम देव ने यशस्तिलक में कहे सुमुनि तेईस प्रकार ।
इनके नाम कहे मुनिवर ने उनके गुण के ही अनुसार ॥
क्षपणक, श्रमण, नग्न, आशाम्बर, ऋषि मुनि, यति, मुमुक्षु, अनगार।
निर्मम, समधी, शांसित व्रत, निर्वाण मदमत्सर, निरहंकार ॥
अनूचान, अरु अनाश्वान, पंचाग्नि साधक, अतिथि, महान ।
शिखोच्छेदी, दीक्षितात्मा, परमहंस, श्रोत्रिय, बलवान ॥
तथा तपस्वी आदि अनेकों नाम शास्त्र विख्यात प्रधान ।
इन सबको वन्दन करता हूँ भाव भक्ति से शक्ति प्रमाण ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ पाऊँ परम समत्व ।
आत्म साधना कर प्रभो, पाऊँ ध्रुव जीवत्व ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ चार सौ बत्तीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद – वीर

धारावाही ज्ञान प्राप्त कर भावास्रव का करो निरोध ।
जब भावास्रव रहित हुए तो द्रव्यास्रव का स्वतः विरोध ॥
आस्रव जय करते ही तू पर भावों से अतिक्रान्त हुआ ।
संवर पूर्वक मिली निर्जरा फिर न कभी भी भ्रान्त हुआ ॥
इस प्रकार जिय सर्व संग से रहित स्वतः हो जाता है ।
आत्मा को आत्मा के द्वारा आत्मा ही तो ध्याता है ॥
आस्रव का निरोध होने से कर्मों का निरोध होता ।
कर्मों का निरोध होने से भव दुख का निरोध होता ॥
आस्रव भाव जिन्हें भाता है उनको कर्मास्रव होता ।
जिनको घृणा आस्रव से है उन्हें न कर्मास्रव होता ॥
जब तक ज्ञान ज्ञान में जाकर नहीं प्रतिष्ठित हो जाए ।
तब तक भेदज्ञान को भाना ज्ञान न जब तक हो जाए ॥
लोकालोक जानने वाला ज्ञान स्वयं के भीतर है ।
पर का तो परमाणु मात्र भी इसमें कहीं न कण भर है ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – वीर

अचलमेरु गजदंत जिनालय विनयपूर्वक पूजे आज ।
चार अभाव समझ कर स्वामी पाऊँ अपना ज्ञान स्वभाव ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

श्री धातकी खंड अचलमेरु धातकी शाल्मलि वृक्ष दो जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - वीर

द्वीपधातकी पश्चिम दिशि में अचल मेरु है गरिमावान ।
वृक्ष धातकी शाल्मलि दो हैं जिन पर चैत्यालय छविमान ॥
पृथ्वीकायिक वृक्ष शाश्वत मानस्तंभ निराले नित्य ।
दो सौ सौलह प्रतिमाओं की पूजन का है दृढ़ मंतव्य ॥
उत्तर कुरु ईशान दिशा में वृक्ष धातकी शोभावान ।
देवकुरू नैऋत्य कोण में शाल्मलि तरु सुन्दर द्युतिवान ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - विधाता

ज्ञान आया ध्यान आया हृदय वैराग्य भी आया ।
स्वसंयम पा लिया मैंने हृदय आनंद अब छाया ॥
अचल के धातकी शाल्मलि जिनालय शाश्वत वंदन ।
शुद्ध सम्यक्त्व गुण प्रगटा विनाशूँ सर्व भव बंधन ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

विभावों से हुई बातें उन्हें मैंने किया निर्बल ।
ताप संसार के क्षय हित लिया है मैंने दृढ़ निज बल ॥

अचल के धातकी शाल्मलि जिनालय शाश्वत वंदन।
शुद्ध सम्यक्त्व गुण प्रगटा विनाशूँ सर्व भव बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

भवोदधि पार करके अब मुझे लेना है अक्षय पद।
मुझे भाता न अब स्वामी निमिष को भी अरे पर पद॥
अचल के धातकी शाल्मलि जिनालय शाश्वत वंदन।
शुद्ध सम्यक्त्व गुण प्रगटा विनाशूँ सर्व भव बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

काम के भाव से पीड़ित नहीं निज को कभी निरखा।
अकामी मैं सदा से हूँ नहीं इस बात को परखा॥
अचल के धातकी शाल्मलि जिनालय शाश्वत वंदन।
शुद्ध सम्यक्त्व गुण प्रगटा विनाशूँ सर्व भव बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

तृप्ति का मार्ग पाकर भी क्षुधा को जय न कर पाया।
अनाहारी सदा से हूँ स्वपद फिर भी नहीं भाया॥
अचल के धातकी शाल्मलि जिनालय शाश्वत वंदन।
शुद्ध सम्यक्त्व गुण प्रगटा विनाशूँ सर्व भव बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोह की नींद सोता था सुगुरु ने जगाया तत्क्षण।
सबल मिथ्यात्व क्षय कर दूँ दिया उपदेश यह क्षण क्षण॥
अचल के धातकी शाल्मलि जिनालय शाश्वत वंदन।
शुद्ध सम्यक्त्व गुण प्रगटा विनाशूँ सर्व भव बंधन॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

कर्म आठों जलाऊँगा यही निश्चय किया मैंने ।
ध्यान निज आत्मा का ही करूँगा व्रत लिया मैंने ॥
अचल के धातकी शाल्मलि जिनालय शाश्वत वंदन ।
शुद्ध सम्यक्त्व गुण प्रगटा विनाशूँ सर्व भव बंधन ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

मोक्ष फल प्राप्त करने को मुक्ति का मार्ग पाऊँगा ।
परम सिद्धात्मा बन मैं स्वयं के गीत गाऊँगा ॥
अचल के धातकी शाल्मलि जिनालय शाश्वत वंदन ।
शुद्ध सम्यक्त्व गुण प्रगटा विनाशूँ सर्व भव बंधन ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

न लेना है न देना है जगत के अर्घ्य पुन्जों से ।
स्वपद पाऊँ अनर्घ्य अपना जूड़ूँ निज पुष्प कुन्जों से ।
ज्ञान जल शुद्ध पाकर मैं करूँ अभिषेक प्रभु अपना ।
सदा को ही निरंजन बन करूँ संसार यह सपना ॥
अचल के धातकी शाल्मलि जिनालय शाश्वत वंदन ।
शुद्ध सम्यक्त्व गुण प्रगटा विनाशूँ सर्व भव बंधन ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – उपजाति

तरु धातकी पर जिनगेह पूजूँ । चारों कषायें प्रभु जय करूँ मैं ॥
पाकर यथाख्यात चारित्र पावन । संसार के दुख सारे हरूँ मैं ॥१॥

ॐ ह्रींश्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ-अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीवृक्षस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शाल्मलि सुतरु भी है पृथ्वी कायिक। जिन गेह पूजूँ सविनय प्रभो मैं॥
रागादि भावों से दूर रह कर । पद वीतरागी पाऊँ विभो मैं ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ-अचलमेरुसम्बन्धि-शाल्मलि वृक्षस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अर्ध्यावलि

छंद - हरिगीतिका

अतिक्रमण का निवारण प्रतिक्रमण बिन होता नहीं।
अतिक्रमण ही नहीं हो तो प्रतिक्रमण होता नहीं ॥
मुनि बनूँ निर्ग्रंथ व्रतधारी यही है भावना ।
भाव लिंग महान पाऊँ करूँ ऐसी साधना ॥

छंद - दोहा

महा अर्घ्य अर्पण करूँ, धातकी शाल्मलि गेह ।
आत्म तत्त्व निर्णय करूँ निश्चित निःसंदेह ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्य नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद - ताटंक

वीतराग अरहंत को वन्दूँ बारम्बार ।
चार अभाव स्वरूप लख करूँ आत्मउद्धार ॥

छंद - वीर

चार अभाव जान लूँ स्वामी प्रागभाव प्रध्वंसाभाव ।
अरु अन्योन्याभाव जान लूँ, जानूँ मैं अत्यन्ताभाव ॥
प्राक् अभाव पूर्व पर्यय का वर्तमान में पूर्ण अभाव ।
वर्तमान में आगामी पर्यय अभाव प्रध्वंस अभाव ॥

पुद्गल की पर्यायों का आपस में है अन्योन्य-अभाव ।
एक द्रव्य में सदा दूसरे का अभाव अत्यन्त अभाव ॥
प्रागभाव को अगर न माना कार्य अनादि कहायेगा ।
यदि प्रध्वंसाभाव न माना कार्य अनंत कहायेगा ॥

यदि अनन्योन्याभाव न माना अणु जान न पायेगा ।
यदि अत्यन्ताभाव न माना जड़ चेतन मिल जायेगा ॥
किन्तु न ऐसा हुआ कभी भी और नहीं आगे होगा ।
तेरी ही मति उल्टी है तो सोच स्वयं का क्या होगा ॥

चार अभाव स्वरूप जानकर अभी धर्म का कर आरंभ ।
व्यय अज्ञान दशा का करके ज्ञान दशा करले प्रारंभ ॥
लख स्वतंत्र पर्याय द्रव्य की इसमें है अनंत पुरुषार्थ ।
महा मोक्ष पाने को अब आश्रय में ले निश्चय भूतार्थ ॥

भाव द्रव्य नो कर्म अचेतन जड़ पुद्गल की है पर्याय ।
इससे तू अत्यन्त निराला चेतन द्रव्य परम सुखदाय ॥
यदि अत्यन्ताभाव न माना तो फिर द्रव्य स्वतंत्र नहीं ।
किन्तु द्रव्य पूरे स्वतंत्र हैं कोई भी परतंत्र नहीं ॥

यह अत्यन्ताभाव द्रव्य सब पृथक्-पृथक् बतलाता है ।
जो जैसा गुणशाली है उसको वैसा दिखलाता है ॥
इसे समझकर आत्मध्यान का ही पुरुषार्थ करूँ स्वामी ।
निज स्वभाव का अवलंबन ले मुक्ति वधू वर लूँ स्वामी ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि धातकीशाल्मलिवृक्षस्थितद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा ।

आशीर्वाद

छंद – वीर

अचल मेरु धातकी शाल्मलि तरु पर दो मंदिर जिनराज।
भाव सहित पूजे हैं मैंने प्राप्त करूँगा निज पदराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

श्री अचलमेरु संबंधी षोडश वक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छन्द – रोला

अचल मेरु वक्षार आठ पूरव विदेह में ।
अचल मेरु वक्षार आठ पश्चिम विदेह में ॥
इन पर सोलह स्वर्णमयी चैत्यालय पावन ।
हैं सतरह सौ अट्ठाईस बिम्ब मन भावन ॥
कर्म नष्ट हित सब सिद्धों की करूँ वन्दना ।
द्वादश तप के द्वारा कर लूँ आत्म साधना ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद – दिग्पाल

जन्मादि रोग नाशूँ निज आत्मा प्रकाशूँ ।
भव भाव हे प्रभो अब शुभ अशुभ सर्व नाशूँ ॥
वक्षार अचल जिन गृह सोलह सदैव ध्याऊँ ।
आत्मोन्मुखी बन कर अविलम्ब मोक्ष पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

भव राग सर्व नाशूँ भव ताप सर्व नाशूँ ।
संसार पार करके शुद्धात्मा प्रकाशूँ ॥

वक्षार अचल जिन गृह सोलह सदैव ध्याऊँ ।
आत्मोन्मुखी बन कर अविलम्ब मोक्ष पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

बंधों से मित्रता तज निर्बंध बनूँ स्वामी ।
अक्षय स्वभाव पाऊँ शिव पद वरूँ मैं नामी ॥
वक्षार अचल जिन गृह सोलह सदैव ध्याऊँ ।
आत्मोन्मुखी बन कर अविलम्ब मोक्ष पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि. ।

संवर का सहारा ले आस्रव सदा को रोकूँ ।
निष्काम बनूँ स्वामी चिर काम बाण रोकूँ ॥
वक्षार अचल जिन गृह सोलह सदैव ध्याऊँ ।
आत्मोन्मुखी बन कर अविलम्ब मोक्ष पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

मैं हूँ अतृप्त स्वामी स्वर्गों के सुख भी पाए ।
पर क्षुधा रोग क्षय के अवसर कभी न आए ॥
वक्षार अचल जिन गृह सोलह सदैव ध्याऊँ ।
आत्मोन्मुखी बन कर अविलम्ब मोक्ष पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोहान्धकार नाशूँ वसु कर्म सर्व नाशूँ ।
पाकर निरंजनी पद सम्पूर्ण सुख प्रकाशूँ ॥
वक्षार अचल जिन गृह सोलह सदैव ध्याऊँ ।
आत्मोन्मुखी बन कर अविलम्ब मोक्ष पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

निज ध्यान धूप लाऊँ वसु कर्म सर्व नाशूँ ।
परिपूर्ण सौख्य पाऊँ निज आत्मा विकासूँ ।
वक्षार अचल जिन गृह सोलह सदैव ध्याऊँ ।
आत्मोन्मुखी बन कर अविलम्ब मोक्ष पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

फल मोक्ष अभी पाऊँ निज मोक्ष मार्ग पाकर ।
रत्नत्रयी स्वरथ पर चढ कर बनूँ प्रभाकर ॥
वक्षार अचल जिन गृह सोलह सदैव ध्याऊँ ।
आत्मोन्मुखी बन कर अविलम्ब मोक्ष पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

यह अर्घ्य भव मयी तज पदवी अनर्घ्य पाऊँ ।
आत्मत्व शक्ति प्रगटा निज आत्मा जगाऊँ ॥
अन्तमुहुर्त में ही निज सिद्ध स्वपद पाऊँ ।
फिर लौट कर न स्वामी संसार मध्य आऊँ ॥
वक्षार अचल जिन गृह सोलह सदैव ध्याऊँ ।
आत्मोन्मुखी बन कर अविलम्ब मोक्ष पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

अचलमेरु सीता सरिता उत्तर तट चार वक्षार जिनालय

छंद - वीर

खंड धातकी अचलमेरु संबंधी पूर्व विदेह महान ।
सीता सरिता उत्तर तट पर भद्रशाल वेदी छविमान ॥
वेदी के हैं निकट चार वक्षार स्वर्णमय सुगिरि महान ।
चार चार हैं कूट मनोहर एक एक पर जिन गृह जान ॥

रोला

चित्रकूट वक्षार मनोहर अति सुन्दर है ।
इस पर भव्य अकृत्रिम पावन जिन मन्दिर है ॥
भाव सहित मैं अर्घ्य चढ़ा कर शीष झुकाऊँ ।
स्वपर भेद विज्ञान शक्ति से शिवसुख पाऊँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पद्म कूट वक्षार दूसरा कंचन द्युति मय ।
इस पर सिद्धकूट अति सुन्दर है मंगलमय ॥
भाव सहित मैं अर्घ्य चढ़ा कर शीष झुकाऊँ ।
स्वपर भेद विज्ञान शक्ति से शिवसुख पाऊँ ॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

नलिन कूट वक्षार तीसरा है मनहारी ।
भव्य शाश्वत सिद्ध कूट है जग हितकारी ॥
भाव सहित मैं अर्घ्य चढ़ा कर शीष झुकाऊँ ।
स्वपर भेद विज्ञान शक्ति से शिवसुख पाऊँ ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

एक शैल वक्षार स्वर्णमय आभाशाली ।
सिद्धायतन चतुर्थम शाश्वत वैभवशाली ॥
भाव सहित मैं अर्घ्य चढ़ा कर शीष झुकाऊँ ।
स्वपर भेद विज्ञान शक्ति से शिवसुख पाऊँ ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे एकशैलकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

अचल मेरु सीता सरिता दक्षिण तट चार वक्षार जिनालय

अचलमेरु सीता सरिता के दक्षिण तट पर ।
वेदी देवारण्य निकट है पर्वत सुन्दर ॥
है त्रिकूट वक्षार मनोहर रत्नों का घर ।
चार कूट में एक कूट पर पूजूँ जिनवर ॥

भाव सहित मैं अर्घ्य चढ़ा कर शीष झुकाऊँ ।
स्वपर भेद विज्ञान शक्ति से शिवसुख पाऊँ ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतासरिद्दक्षिणतटे त्रिकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

वैश्रवण वक्षार दूसरा जय ध्वनि गुंजित ।
शाश्वत जिन चैत्यालय पूजूँ सुरपति पूजित ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतासरिद्दक्षिणतटे वैश्रवणवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

आत्मांजन वक्षार तीसरा ऋषि मुनि आते ।
हम भी जिनवर की पूजन कर बहु हर्षाते ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतासरिद्दक्षिणतटे अंजनवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

है अंजन वक्षार चतुर्थम महा मनोहर ।
चार कूट में एक कूट पर पूजूँ जिनवर ॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतासरिद्दक्षिणतटे अंजनात्मा वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. ।

अचल मेरु सीतोदा सरिता तट चार वक्षार

छंद - वीर

अचलमेरू संबंधी सीतोदा सरिता दक्षिण तट चार ।
भद्रशाल वेदी समीप है महामनोहर गिर वक्षार ॥
चार कूट में तीन कूट पर व्यंतरादि का सदा निवास ।
एक कूट पर श्री जिन मंदिर पूजूँ पाऊँ ज्ञान प्रकाश ॥

छंद - सरसी

स्वर्णमयी वक्षार प्रथम है उत्तम श्रद्धावान ।
सिद्ध कूट हैं एक मनोहर शाश्वत वैभववान ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरिद्दक्षिणतटे श्रद्धावान वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. ।

विजटावान नाम दूसरा है वक्षार महान ।
सिद्धायतन महान मनोहर जिन मंदिर भगवान ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरिद्दक्षिणतटे विजटा वानवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं. नि. ।

विविध वृक्ष संयुक्त स्वर्णमय आशीविष वक्षार।
सिद्ध कूट जिन भवन पूज कर गाएँ जय जयकार॥११॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरिदक्षिणतटे आशीविष वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

नाम सुखावह बहु तरु शोभित स्वर्णमयी वक्षार।
सिद्ध कूट जिनगृह वंदन कर करें पाप मल क्षार॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरिदक्षिणतटे सुखावह वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अचल मेरु सीतोदा सरिता तट चार वक्षार

दोहा

सीतोदा उत्तर सुतट श्रेष्ठ चार वक्षार।
भाव सहित पूजन करूँ हो जाऊँ भव पार॥
वेदी भूतारण्य तट चंद्रमाल वक्षार।
विनय पूर्वक वंदिए चैत्यालय सुखकार॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे चन्द्रमाल वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

सूर्यमाल वक्षार पर सिद्धकूट है एक।
जिन बिम्बों को पूज कर तजूँ भव की टेक॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमाल वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

नागमाल वक्षार पर सिद्धकूट जिनधाम।
इकशत वसु प्रतिमा जजूँ पाऊँ पूर्ण विराम॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे नागमाल वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

देवमाल वक्षार पर शाश्वत श्री जिनगेह।
अष्ट द्रव्य से पूज कर त्यागूँ भव का नेह॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे देवमाल वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

महार्घ्य

छंद – वीर

बार बार तत्त्वाभ्यास कर तत्त्वों का निर्णय कर लूँ।
निज स्वभाव साधन के द्वारा अष्टकर्म बंधन हर लूँ॥
अचलमेरु संबंधी पूरव पश्चिम के सोलह वक्षार।
शाश्वत सोलह जिनगृह की प्रतिमाएँ पूजूँ बारंबार॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ तजूँ नाथ मिथ्यात्व।
भाव भासना प्राप्त कर प्राप्त करूँ सम्यक्त्व॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

सोरठा

अचलमेरु वक्षार मैंने पूजे भाव से।
सुख हो अपरंपार रत्नत्रय की शक्ति से॥

छंद – वीर

ज्ञायक भाव स्वरूप आत्मा कभी नहीं पर्याय स्वरूप।
पर्यायों से सदा रहित है अपना ज्ञायक भाव अनूप॥
भेद नहीं होता अभेद में अरु अखंड में खंड नहीं।
मोक्ष नहीं करता है ज्ञायक तथा कर्म का बंध नहीं॥

ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प से रहित सदा है ज्ञायक भाव।
है प्रमत्त भी नहीं तथा है अप्रमत्त भी नहीं स्वभाव॥
श्रद्धा तो अखंड होती है लक्ष्य शुद्ध आत्मा होता।
ज्ञान सदा अखंड होता है तभी शुद्ध आत्मा होता॥

राग द्वेष परिणाम नहीं है अरु कषाय परिणाम नहीं।
स्व में सक्रिय पर में अक्रिय कृतकृत्य कुछ काम नहीं॥

निज प्रकाश को भूल गया है पर प्रकाश में ही रत है ।
निज के प्रति तो क्रूर बना है पर के प्रति ही तू नत है ॥

परिणामों की ओर देख मत देख परिणामिक निज भाव ।
सर्व शक्ति सम्पन्न आत्मा से शोभित है आत्म स्वभाव ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद - वीर

अचलमेरु वक्षार जिनालय सोलह मैंने पूजे आज ।
ज्ञान भाव की भव्य भावना भाऊँ पाऊँ निज पद राज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

भजन

करलो जिनवर का गुणगान, आई सुखद घड़ी।
आई सफल घड़ी, देखो मंगल घड़ी॥ कर लो०॥
वीतराग का दर्शन पूजन भव-भव को सुखकारी।
जिन प्रतिमा की प्यारी छवि लख मैं जाऊँ बलिहारी ॥ कर लो०॥
तीर्थंकर सर्वज्ञ हितंकर महा मोक्ष के दाता।
जो भी शरण आपकी आता, तुम सम ही बन जाता ॥ कर लो०॥
सम्यग्दर्शन हो जाता है मिथ्यातम मिट जाता।
रत्नत्रय की दिव्य शक्ति से कर्म नाश हो जाता॥ कर लो०॥
निज स्वरूप का दर्शन होता, निज की महिमा आती।
निज स्वभाव साधन के द्वारा सिद्ध स्वगति मिल जाती॥ कर लो०॥

ॐ

श्री अचलमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन

स्थापना

छन्द - रोला

अचल मेरु विजयार्ध जिनालय हैं विदेह में ।
सोलह सोलह पूरव पश्चिम गिरि विदेह में ॥
भरतैरावत एक एक हैं अति मन भावन ।
इन सब पर चौंतीस जिनालय उत्तम पावन ॥
जिन प्रतिमाएँ तीन शतक छह सौ बहत्तर ।
भाव सहित पूजूँ हे स्वामी सभी जिनेश्वर ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - चौपई

अब भव जल सम्पूर्ण सुखाऊँ । जन्मादिक त्रय रोग नशाऊँ ॥
अचल सुगिरि विजयार्ध हमारे । चौंतीसों जिन मंदिर न्यारे ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

भव ज्वर नाश करूँ हे स्वामी । अजर अमर पद पाऊँ नामी ॥
अचल सुगिरि विजयार्ध हमारे । चौंतीसों जिन मंदिर न्यारे ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि. ।

अक्षय पद पाऊँ हे स्वामी । है अक्षय स्वभाव अभिरामी ॥
अचल सुगिरि विजयार्ध हमारे । चौंतीसों जिन मंदिर न्यारे ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

काम बाण दुखमयी विनाशूँ । निज निष्काम स्वरूप प्रकाशूँ ॥
अचल सुगिरि विजयार्ध हमारे । चौंतीसों जिन मंदिर न्यारे ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

क्षुधा व्याधि जय करूँ नाथ अब । स्वपद निराहारी पाऊँ अब ॥
अचल सुगिरि विजयार्ध हमारे । चौंतीसों जिन मंदिर न्यारे ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

दीप जलाऊँ ज्ञान भाव के । नाशूँ दुख सारे विभाव के ॥
अचल सुगिरि विजयार्ध हमारे । चौंतीसों जिन मंदिर न्यारे ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

धूप ध्यान मय लाऊँ स्वामी । अष्ट कर्म क्षय कर दूँ नामी ।
अचल सुगिरि विजयार्ध हमारे । चौंतीसों जिन मंदिर न्यारे ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

महा मोक्ष फल पाना है प्रभु । शिवपुर में जाना है हे विभु ॥
अचल सुगिरि विजयार्ध हमारे । चौंतीसों जिन मंदिर न्यारे ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य राग के अब न चढ़ाऊँ । पद अनर्घ्य शाश्वत निज पाऊँ ॥
भव पीड़ा सम्पूर्ण मिटाऊँ । शाश्वत ध्रुव स्वभाव प्रगटाऊँ ॥
कर्मों की माया जय कर लूँ । अब संसार भाव क्षय कर लूँ ॥
अचल सुगिरि विजयार्ध हमारे । चौंतीसों जिन मंदिर न्यारे ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद - चौपई

तृतीय मेरु के पूर्व विदेह । अरु पश्चिम विदेह जिनगेह ॥
हैं बत्तीस विदेह सुजान । रूपाचल विजयार्ध महान ॥
एक सुदक्षिण भरत सुजान । इक ऐरावत उत्तर मान ॥
ये वैताढ्य कहे चौंतीस । विनय सहित वन्दूँ जगदीश ॥
एक एक गिरि पर नव कूट । नव नव में इक सिद्ध सुकूट ॥
सिद्ध कूट पर जिन भगवंत । इक शत वसु प्रतिमा अरहंत ॥

अचलमेरु पूर्व विदेह संबंधी सोलह विजयार्ध जिनालय

छंद - दिग्पाल

पूरव विदेह अनुपम कच्छा सुदेश भीतर ।
विजयार्ध के शिखर पर जिनराज गृह मनोहर ॥
पूजूँ सदा विनय से मैं भक्ति भाव उर धर ।
चैतन्य तत्त्व ध्याऊँ सर्वोत्कृष्ट सुख कर ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशेविजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

सीता नदी के उत्तर है देश इक सुकच्छा ।
विजयार्ध रजत गिरि पर जिन भवन एक अच्छा ॥
पूजूँ सदा विनय से मैं भक्ति भाव उर धर ।
चैतन्य तत्त्व ध्याऊँ सर्वोत्कृष्ट सुख कर ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे सुकच्छा देशेविजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

है देश महाकच्छा में आर्य खंड अनुपम ।
विजयार्ध शीर्ष पर है जिनगेह इक अकीर्तम ॥
पूजूँ सदा विनय से मैं भक्ति भाव उर धर ।
चैतन्य तत्त्व ध्याऊँ सर्वोत्कृष्ट सुख कर ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे महाकच्छा देशेविजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

है कच्छकावती में विजयार्ध गिरि रजत सम ।
जिनगेह अकृत्रिम है शाश्वत सुश्रेष्ठ अनुपम ॥
पूजूँ सदा विनय से मैं भक्ति भाव उर धर ।
चैतन्य तत्त्व ध्याऊँ सर्वोत्कृष्ट सुख कर ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छकावती देशेविजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पूरव विदेह आवर्ता देश है निराला ।
शाश्वत जिनेन्द्र गृह है जो स्वर्ण रत्न वाला ॥
पूजूँ सदा विनय से मैं भक्ति भाव उर धर ।
चैतन्य तत्त्व ध्याऊँ सर्वोत्कृष्ट सुख कर ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशे विजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

है लांगलावर्ता में विजयार्ध तुंग उज्ज्वल ।
जिनबिम्ब रत्नमय है जिनगेह में समुज्ज्वल ॥
पूजूँ सदा विनय से मैं भक्ति भाव उर धर ।
चैतन्य तत्त्व ध्याऊँ सर्वोत्कृष्ट सुख कर ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेशे विजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

है देश पुष्कला में वैताढ्य चंद्रिका मय ।
अति शोभनीक सुन्दर जिन देव का जिनालय ॥
पूजूँ सदा विनय से मैं भक्ति भाव उर धर ।
चैतन्य तत्त्व ध्याऊँ सर्वोत्कृष्ट सुख कर ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशे विजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

विजयार्ध मध्य में है इक पुष्कलावती के ।
जिनगेह देखते ही बंधन कटें कुगति के ॥
पूजूँ सदा विनय से मैं भक्ति भाव उर धर ।
चैतन्य तत्त्व ध्याऊँ सर्वोत्कृष्ट सुख कर ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशे विजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

छंद - वीर

खंड धातकी पश्चिम में गिरि अचलमेरु के पूर्व विदेह।
देवारण्य समीप नदी सीता के दक्षिण वसु जिनगेह ॥
वत्सा देश मध्य में हैं विजयार्ध सुगिरि पर चैत्यालय ।
जिनबिम्बों से मुक्त गूँजती अरहंतों की जय जय जय ॥
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ श्री जिन प्रतिमाओं को बारंबार ।
देहव्यवस्थित ब्रह्म तत्त्व निज की पहिचान करूँ अविकार॥९॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेशे विजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरु के पूर्व सुवत्सा देश मध्य विजयार्ध महान ।
गिरि पर शाश्वत जिन मंदिर है सुर गण गाते जय जय गान॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेशे विजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरु के पूर्व महावत्सा है देश सहित छह खंड ।
आर्य खंड के रजताचल पर है जिनेन्द्र गृह एक अखंड ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेशे विजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वत्सकावती अनूठा दर्शनीय बहु शोभावान ।
रजताचल के सिद्धकूट की पूजन कर मैं बनूँ महान ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावती देशे विजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरु पूरब विदेह में रम्यादेश मध्य विजयार्ध ।
इस पर सिद्ध कूट चैत्यालय जहाँ सिद्ध होता पुरुषार्थ ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशे विजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुरम्या अचलमेरु की पूर्व दिशा में है विजयार्ध ।
इस पर सिद्ध कूट वन्दन कर पाऊँ मैं निश्चय भूतार्थ ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेशे विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीता दक्षिण तट पर है रमणीया देश मध्य वैताढ्य ।
जिन गृह पूजन से होते हैं निज वैभव पा सभी धनाढ्य ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेशे विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश मंगलावती मध्य में सुर गिरि पूर्व रजत गिरि एक ।
शाश्वत चैत्यालय पूजन करते हैं सब सुर मस्तक टेक ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचल मेरु पश्चिम विदेह सोलह विजयार्ध जिनालय

पश्चिम धातकी अचलमेरु के पश्चिम सीतोदा दक्षिण।
भद्रशाल वेदी के सनिकट आठ देश शोभित जन गण ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत् विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

चौपाई

पद्मा देश निराला सुन्दर । इसमें है विजयार्ध मनोहर ॥
पूजूँ शाश्वत जिन चैत्यालय। निज पद पाऊँ प्रभु शिवसुखमय ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे पद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुपद्मा शोभाशाली । रूपाचल की छटा निराली ।
पूजूँ शाश्वत जिन चैत्यालय। निज पद पाऊँ प्रभु शिवसुखमय ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुपद्मा देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महापद्मा शोभायुत । है विजयार्ध जिनालय संयुत ।
पूजूँ शाश्वत जिन चैत्यालय। निज पद पाऊँ प्रभु शिवसुखमय ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महापद्मा देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पद्मकावती सुहाना। गिरि विजयार्ध रजत सम जाना।
पूजूँ शाश्वत जिन चैत्यालय। निज पद पाऊँ प्रभु शिवसुखमय ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे पद्मकावती देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

शंखादेश विदेह पूर्व में। इसके ही विजयार्ध अपूर्व में॥
पूजूँ शाश्वत जिन चैत्यालय। निज पद पाऊँ प्रभु शिवसुखमय ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे शंखादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नलिनादेश अचल गिरि पश्चिम। रूपाचल जिनगेह अकृत्रिम।
पूजूँ शाश्वत जिन चैत्यालय। निज पद पाऊँ प्रभु शिवसुखमय ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे नलिनादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

कुमुदा के सीतोदा तट पर। चाँदी सम विजयार्ध मनोहर।
पूजूँ शाश्वत जिन चैत्यालय। निज पद पाऊँ प्रभु शिवसुखमय ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे कुमुदादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सरिता देश मध्य रूपाचल। शाश्वत जिनगृह सुस्थित अविचल।
पूजूँ शाश्वत जिन चैत्यालय। निज पद पाऊँ प्रभु शिवसुखमय ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सरितादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद - चान्द्रायण (अडिल्ल)

सीतोदा के उत्तर तट पर जाइये।
वप्रादेश रजत गिरि जिनगृह ध्याइये॥
इकशत वसु जिनबिम्ब शाश्वत पूजिये।
सम्यग्दर्शन प्रगटा श्रावक हूजिए ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुवप्रा में विदेह के जाइये।
रजताचल का जिन चैत्यालय ध्याइये॥

इकशत वसु गर्भालय में जिन पूजिए ।
सम्यग्ज्ञान प्राप्त कर ज्ञानी हूजिए ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुवप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महावप्रा विदेह के जाइये ।
रजताचल की जिन प्रतिमाएँ ध्याइये ॥
मानस्तंभ सहित चैत्यालय पूजिये ।
ले सम्यक् चारित्र भाव मुनि हूजिये ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे महावप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वप्रकावती विदेह सुजानिए ।
गिरि विजयार्ध अपूर्व जिनालय मानिए ॥
रत्नत्रय पालन हित जिन पद पूजिए ।
मोक्षमार्ग पर आकर जिन मुनि हूजिए ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रकावती देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

गंधादेश विदेह सुरों को मोहता ।
गिरि वैताढ्य जिनालय पावन सोहता ॥
अष्ट प्रातिहार्यों से भूषित बिम्ब सब ।
दर्शन से ही मुक्ति हुई सन्निकट अब ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुगंधा का विजयार्ध महान है ।
इक शत वसु जिनबिम्ब युक्त जिनधाम है ॥
शुक्ल ध्यान धर यथाख्यात चारित्र लूँ ।
मोह क्षीण कर पद अरहंत पवित्र लूँ ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुगंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश गंधिला में विजयार्ध प्रधान है ।
शाश्वत जिन चैत्यालय महा महान है ॥

रत्नमयी जिनबिम्ब भजूँ मैं भाव से ।
मोक्षमार्ग पर चल कर बचूँ विभाव से ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

गंधमालिनी देश मध्य विजयार्ध गिरि ।
इस पर श्री जिन भवन शाश्वत है सुथिर ॥
उपशम भावों से पाऊँ सम्यक्त्व को ।
दर्श मोह जय कर जीतूँ मिथ्यात्व को ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनी देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अचलमेरु भरतैरावत दो विजयार्ध जिनालय

छंद – वीर

द्वीप धातकी अचल मेरू दक्षिण में भरत क्षेत्र छविमान ।
गंगा सिन्धु नदी दोनों के कारण है छह खंड महान ॥
आर्य खंड में है विजयार्ध रजत गिरि नवकूटों से युक्त ।
एक कूट पर सिद्ध कूट पूजूँ मैं जिन प्रतिमा संयुक्त ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-भरत क्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

खंड धातकी अचलमेरु उत्तम में ऐरावत छविमान ।
रक्ता रक्तोदा सरिताओं के कारण छह खंड वितान ॥
एक शतक वसु जिन चैत्यों से युक्त सुगिरि विजयार्ध ललाम।
मन वच तन से नमन करूँ प्रभु मैं पाऊँ सिद्धों का धाम॥३४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-ऐरावत क्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद – गीतिका

लक्ष्य में हो ध्रुव त्रिकाली कृत्य हो निज ध्यान का।
हृदय में श्रद्धान हो अरु ज्ञान सम्यग्ज्ञान का ॥
अहंकारी अहं तट से दूर रह बहु विनय हो ।
कषायों से रीत जाऊँ स्वच्छ अपना हृदय हो ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूं गिरि विजयार्ध जिनेश ।
अंतरंग हो शुद्ध प्रभु सुनूँ तत्त्व उपदेश ।।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

सोरठा

पूजे मैंने आज अचलमेरु विजयार्ध गृह ।
पाऊँ आत्म स्वभाव बनूँ अकिंचन हे प्रभो ।।

छंद – माधवमालती

मैं विभावों की तपन में रात दिन जलता रहा हूँ ।
स्वयं अपने आपको ही रात दिन छलता रहा हूँ ।।
भवभ्रमण के चक्र में प्रभु रात दिन जलता रहा हूँ ।
कर्म अरि के उदय में, निजभाव को दलता रहा हूँ ।।

भव अनंतानंत मैंने जन्म और मरण किया प्रभु ।
स्व-पर ज्ञान बिना सदा ही पर विभाव ग्रहण किया प्रभु ।।
निज स्वरूप महान सुखमय तो कभी न वरण किया प्रभु ।
रागद्वेषादिक कषायों का कभी न क्षरण किया प्रभु ।।

नाश कर संकल्प और विकल्प के भ्रमजाल को प्रभु ।
वीतरागी भावना से लूँ सजा निज भाव को प्रभु ।।
गुण अनंतानंत निधि युत देख मूर्ति विशाल निज प्रभु ।
दृष्टि पर से हटा अपनी बदल लूँ निज चाल को प्रभु ।।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – ताटंक

अचलमेरु विजयार्ध जिनालय हैं चौंतीस महासुन्दर ।
इनकी रत्निम प्रतिमाओं को मैंने पूजा है सादर ।।
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ।।

इत्याशीर्वादः

ॐ

श्री धातकीखंड अचलमेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छन्द - रोला

अचल मेरु संबंधी षटकुल अचल जिनालय।
छह सौ अड़तालीस बिम्ब जिनवर की जय जय॥
पूजन करके शुद्ध आत्मा को ही ध्याऊँ।
अब तो अंतिम केवलि समुद्घात ही पाऊँ॥
आठों समुद्घात में उत्तम समुद्घात यह।
मंगलमय सर्वोत्कृष्ट भावना हृदय यह॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - सखी

रवि सम्यग्ज्ञान सजाऊँ। निज अनहद वाद्य बजाऊँ॥
पूजूँ षट भव्य कुलाचल। पाऊँ निज पद ध्रुव अविचल॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जीवंत प्रकाश करूँगा। संसारी ताप हरूँगा॥
पूजूँ षट भव्य कुलाचल। पाऊँ निज पद ध्रुव अविचल॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

अक्षत स्वरूप ही ध्याऊँ । अक्षय पद निज प्रगटाऊँ ॥
पूजूँ षट भव्य कुलाचल । पाऊँ निज पद ध्रुव अविचल ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि. ।

कामाग्नि बुझाऊँ नामी। गुण पुष्प सजाऊँ स्वामी ॥
पूजूँ षट भव्य कुलाचल । पाऊँ निज पद ध्रुव अविचल ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

चिर क्षुधा रोग विनशाऊँ । निज निराहार पद पाऊँ ॥
पूजूँ षट भव्य कुलाचल । पाऊँ निज पद ध्रुव अविचल ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

दीपक स्वज्ञान के जोऊँ । मद मोह रहित में होऊँ ॥
पूजूँ षट भव्य कुलाचल । पाऊँ निज पद ध्रुव अविचल ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

निज धूप ध्यानमय लाऊँ । वसु कर्म सर्व विनशाऊँ ॥
पूजूँ षट भव्य कुलाचल । पाऊँ निज पद ध्रुव अविचल ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

ध्रुव महामोक्ष फल पाऊँ । अविलम्ब मुक्तिपुर जाऊँ ॥
पूजूँ षट भव्य कुलाचल । पाऊँ निज पद ध्रुव अविचल ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

पदवी अनर्घ्य पाऊँगा । शिव सौख्य पूर्ण लाऊँगा ॥
भव भाव अभाव करूँगा । मिथ्या भ्रम पूर्ण हरूँगा ॥
सम्यक्त्व पूर्ण मैं पाऊँ । संयम से हृदय सजाऊँ ॥
पूजूँ षट भव्य कुलाचल । पाऊँ निज पद ध्रुव अविचल ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

अचल मेरु षटकुलाचल जिनालय

छंद - हरिगीत

मंगलं हिमवान पर्वत मंगलं चैत्यालयम् ।
मंगलं जिन चैत्य पूजन आत्मा मंगलमयम् ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-हिमवानपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंगलं हिमवान महागिरि मंगलं श्री जिनगृहम् ।
मंगलं जिनबिम्ब पावन ध्यान मुद्रा मंगलम् ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-महाहिमवानपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंगलं पर्वत निषध जिनराज गृह मंगलमयम् ।
आत्मीय स्वभाव पावन सर्व श्रेष्ठ सुमंगलम् ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-निषधपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नील पर्वत पर जिनालय श्रेष्ठ है मंगलमयम् ।
भाव से पूजन करूँ मैं ज्ञान गुण निज मंगलम् ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-नीलपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

रुक्मि पर्वत कुलाचल जिनगेह उत्तम मंगलम् ।
भेद ज्ञान महान मंगल स्वपर ज्ञान सुमंगलम् ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-रुक्मिपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कुलाचल शिखरी जिनालय सौख्य दाता मंगलम् ।
ज्ञान ध्यान विरागमय निज आत्मा मंगलमयम् ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-शिखरीपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद – वीर

मिथ्या भ्रम से जो अंधा है उसकी औषधि समकित है।
अन्य नहीं है कोई औषधि यह त्रिकाल ही निश्चित है ॥
समकित की औषधि पीते ही निज बन्द आँख खुल जाती है।
मिथ्या भ्रम पल में उड़ जाता शाश्वत निधि मिल जाती है ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ भव्य कुलाचल गेह ।
सिद्ध समान महान हूँ मैं भी निःसंदेह ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद – मानव

संसार घोर दुख सागर में प्राणी बहता आया ।
मिथ्यात्व मोह मद पीकर बहु भव दुख सहता आया ॥
अविरति की मदिरा पीता रहता प्रमाद के घर में ।
रस सतत कषायों का पी चहुँ गति मैं बहता आया ॥

मिथ्यात्व भाव यदि छोड़े निज से ही नाता जोड़े ।
तो समकित उर में होगा आगम में यह बतलाया ॥
तत्त्वों का निर्णय करके यदि स्वपर विवेक जगाए ।
संयम की द्युति पाएगा ऋषि मुनियों ने यह गाया ॥

अब तो सम्यग्दर्शन लो अपने अनंत गुण गुन लो ।
षड् ऋतुओं में सर्वोत्तम समकित का मौसम आया ॥
ज्ञाता दृष्टा चेतन ने जब निज को देखा भाला ।
मिथ्यात्व भाव को इसने पल भर में क्षय कर डाला ॥

सम्यक्त्व भाव की महिमा जब इसके उर को भाई ।
तब निज परिणति से इसने की अपनी त्वरित सगाई ॥

परिणति ने रत्नत्रय की महिमा अनुपम समझाई।
तो इसको संयम धारण करने की सुरुचि सुहाई॥

चल पड़ा मुक्ति के पथ पर रागाविभाव सब छोड़े।
अपने स्वभाव से अपने सारे अनंत गुण जोड़े॥
श्रेणी चढ़ते ही इसने चारों कषाय जय कर लीं।
जिनती भव बाधाएँ थीं सारी की सारी हर लीं॥

केवल बस योग शेष था उसको भी विदा कर दिया।
अपने भीतर में अपना सिद्धत्व स्वरूप वर लिया॥
पा मुक्ति वधु का वैभव निज परिणति संग रहता है।
आनंद अतीन्द्रिय सागर में ही प्रति पल बहता है॥

आशीर्वाद

वीर छंद

अचलमेरु के दिव्य षटकुलाचल की महिमा बहु विख्यात।
इनके चैत्यालय पूजे हैं खंड धातकी में प्रख्यात॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वाढः

卐

रंग मा रंग मा रंग मा रे,
प्रभु थारा ही रंग मा रंगि गयो रे।
आया मंगल दिन मंगल अवसर, भक्ति मां थारी हूँ नाच रह्यो रे...।
गाओ रे गाना आज ध्रुवधाम का, आतमदेव बुलाय रह्यो रे....।
आतमदेव को अंतर में देख्या, सुख-सरोवर उछल रह्यो रे।
भाव भरीने हम भावना ये भायें, आप समान बनाय लीज्यो रे...।
समयसार में कुन्द कुन्द देव, भगवान कहकर जगाय रह्यो रे...।
आज हमारो उपयोग पलट्यो, चैतन्य-चैतन्य भास रह्यो रे....।

श्री धातकी खंड अचलमेरु संबंधी दो इष्वाकार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – वीर

द्वीप धातकी दक्षिणोत्तर अचलमेरु द्वय इष्वाकार ।
द्वय पर्वत पर द्वय चैत्यालय पूजन से होता भ्रम क्षार ॥
दोनों के दो सौ सोलह जिनबिम्ब रत्नमय महिमावान ।
आत्म स्वभाव अचल ध्रुव अविनाशी का गाऊँ जय जय गान ॥

चार लाख योजन लंबा गिरि एक सहस योजन विस्तृत ।
चार शतक योजन ऊँचाई इष्वाकार श्रेष्ठ पर्वत ॥
लवणोदधि अरु कालोदधि दोनों के तट को चूम रहा ।
तरु अशोक सप्तच्छद चंपक आम्र वनों से झूम रहा ॥

दक्षिण उत्तर इक इक पर्वत चऊ चऊ सिद्ध कूट हैं भव्य ।
इक इक सिद्ध कूट पर श्री जिन मंदिर त्रिभुवन वन्दित दिव्य ॥

दोहा

भाव द्रव्य पूजन करूँ द्वय गृह इष्वाकार ।
अनुभव रस का पान कर करूँ आत्म उद्धार ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद – चौपई (आंचलीबद्ध)

सम्यग्जल पाऊँ अमलान। त्रिविध रोग नाशूँ भगवान।

परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।

जिन गृह इष्वाकार महान। वन्दन करूँ बनूँ गुणवान।

महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

सम्यक् चंदन लाऊँ नाथ। भव ज्वर नाशूँ बनूँ सनाथ।

परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।

जिन गृह इष्वाकार महान। वन्दन करूँ बनूँ गुणवान।

महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

सम्यक् अक्षत धवल महान। चरण चढ़ाऊँ हे भगवान।

परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।

जिन गृह इष्वाकार महान। वन्दन करूँ बनूँ गुणवान।

महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षय पदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

सम्यक् पुष्पों की ध्रुव वास। निष्कामी पद मेरे पास।

परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।

जिन गृह इष्वाकार महान। वन्दन करूँ बनूँ गुणवान।

महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

सम्यक् सुचरु करूँ प्रभु भेंट। क्षुधा रोग हो मटियामेट।

परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।

जिन गृह इष्वाकार महान। वन्दन करूँ बनूँ गुणवान।
महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

सम्यग्दीप जगाऊँ आज। बन जाऊँ मैं लघु जिनराज।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
जिन गृह इष्वाकार महान। वन्दन करूँ बनूँ गुणवान।
महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

सम्यग्धूप ध्यानमय लाय। अष्टक कर्म सम्पूर्ण जलाय।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
जिन गृह इष्वाकार महान। वन्दन करूँ बनूँ गुणवान।
महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥

ॐ ह्रींश्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

सम्यक् फल पा बनूँ स्वनाथ। महा मोक्ष फल पाऊँ नाथ।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
जिन गृह इष्वाकार महान। वन्दन करूँ बनूँ गुणवान।
महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

सम्यक् अर्घ्य चढ़ाऊँ देव। पद अनर्घ्य पाऊँ स्वयमेव॥
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
आश्रय लूँ निश्चय भूतार्थ। हे प्रभु पाऊँ परम पदार्थ।
महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥
आत्म स्वभाव जगा जीवंत। हो जाऊँ मैं भी भगवंत।
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो।
जिन गृह इष्वाकार महान। वन्दन करूँ बनूँ गुणवान।
महा सुख हो पूजे नाथ परम सुख हो॥

ॐ ह्रींश्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद - शार्दूलविक्रीड़ित

पहला इष्वाकार महान् श्रेष्ठ सुन्दर जिनराज गृह युक्त है।
इक शत वसु प्रतिमा महान शोभित वन्दन करूँ भाव से॥
रोकूँ सारे पुण्य पाप आस्रव लूँ भाव संवर हृदय।
बंधों का भी सर्वनाश कर दूँ बल निर्जरा प्राप्त कर॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि दक्षिणदिशि इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दूजा इष्वाकार श्रृंग उत्तम जिन चैत्य युत गेह है।
शोभित हैं वसु प्रातिहार्य निरूपम वसु द्रव्य मंगल सहित॥
पूजूँ भाव सहित महान जिनगृह नाशूँ प्रमादी दशा।
अविरति का भी सर्वनाश करके संयम लहूँ भावमय॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि उत्तरदिशि इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - मत्त सवैया

धन वैभव यौवन परिजन सब विद्युत सम क्षण भंगुर चंचल।
निज आत्म तत्व ही ध्रुव शाश्वत त्रैकालिक ध्रुव सदैव अविचल॥
सुत मात पिता भ्राता भगिनी मित्रादि शत्रु हैं दुखदायी।
मेरे तो मित्र अनंत स्वगुण जो सदा सदा को सुखदायी॥
दुखदायी से बचना है तो आश्रय में लूँ अपना स्वभाव।
संसार भ्रमण मिट जाएगा भव दुख हो जाएगा अभाव॥
निज निराबाध दैदीप्यमान निर्मल स्वज्योति मिल जाएगी।
निज अनुभव में रस आएगा निज ज्ञान कली खिल जाएगी॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ इष्वाकार जिनेन्द्र।
हो जाऊँ तुम सम प्रभो निरखूँ निज आत्मेन्द्र॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ दो सौ सोलह जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद - वीर

देव वंदना गुरु उपासना स्वाध्याय संयम तप दान ।
षट् आवश्यक कर्म नित्य से श्रावक की होती पहचान ॥
अणुव्रत पंच अहिंसा सत्य अचौर्य शील अरु अपरिग्रह ।
यथाशक्ति से अणुव्रत पालूँ हे प्रभु शुभ भावों में रह ॥
संकल्पी हिंसा को त्यागूँ पूर्णतया अब मन वच काय ।
आरंभी हिंसा को त्यागूँ यथाशक्ति कर विविध उपाय ॥
आरंभी उद्यमी विरोधी अरु संकल्पी हिंसा जान ।
अहिंसाणुव्रत की मर्यादा पालन कर लूँ श्रेष्ठ महान ॥
गुणव्रत दिग्व्रत देशविरत अरु अनर्थ दंडव्रत तीनों जान ।
दु:श्रुति हिंसादान प्रमादचर्या पापोपदेश अपध्यान ॥
सामायिक प्रोषध भोगोपभोग परिणाम हृदय लूँ धार ।
तथा अतिथि संविभाग जानूँ चारों शिक्षाव्रत सुखकार ॥
उत्तम मध्यम जघन्य पात्रों को पहचान सदा दूँ दान ।
जो अपात्र हैं उनको भी मैं भावसहित दूँ करुणादान ॥
ये द्वादशव्रत निरतिचार पालन का अब उद्यम करलूँ ।
अशुभ भाव को शुभ भावों से बुद्धिपूर्वक मैं हर लूँ ॥
ये द्वादशव्रत धारण कर क्रम क्रम ग्यारह प्रतिमा धारूँ ।
निरतिचार पालन करके प्रभु फिर जिन मुनिपद स्वीकारूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद - ताटंक

अचलमेरु के इष्वाकार जिनालय पूजे भाव सहित ।
तत्त्वों का सम्यक् निर्णय कर हो जाऊँ मैं राग रहित ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

ॐ

श्री पुष्करार्ध द्वीप संबंधी पूर्व मंदरमेरु सोलह जिनालय पूजन

स्थापना

चांद्रायण

पुष्करार्ध में मंदर मेरु महान है ।
पूर्व दिशा में सुरगिरि श्रेष्ठ प्रधान है ॥
गिरि के सोलह जिनगृह मैं वन्दन करूँ ।
सतरह सौ अट्ठाईस जिन अर्चन करूँ ॥
भव भावों से बचूँ सदा ही हे प्रभो ।
ज्ञान भावना भाऊँ उर में हे विभो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद – गीत

जब भी शुभ भाव निजंतर में नाथ होता है ।
स्वर्ग सुख पा के अंत में ये जीव रोता है ॥
मेरु मंदर के इन सोलह जिनालयों की जय ।
ज्ञान की भव्य किरण का हुआ है आज उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

शुभ अशुभ आस्रव सदा ही कष्ट देते हैं ।
राग का गरल पिला ज्ञान सब हर लेते हैं ॥

मेरु मंदर के इन सोलह जिनालयों की जय ।
ज्ञान की भव्य किरण का हुआ है आज उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

बंध भावों से बचूँ कैसे बताओ स्वामी ।
स्वपद अक्षय मिले यह युक्ति सिखा दो नामी ॥
मेरु मंदर के इन सोलह जिनालयों की जय ।
ज्ञान की भव्य किरण का हुआ है आज उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

पुष्प निष्काम भाव के ही मुझे लेना है ।
काम की पीर मुझे नाश अब कर देना है ॥
मेरु मंदर के इन सोलह जिनालयों की जय ।
ज्ञान की भव्य किरण का हुआ है आज उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

शुद्ध नैवेद्य मुझे मिल नहीं पाए अब तक ।
क्षुधा का रोग मेरा क्षय नहीं हुआ अब तक ॥
मेरु मंदर के इन सोलह जिनालयों की जय ।
ज्ञान की भव्य किरण का हुआ है आज उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

ज्ञान की दीप ज्योति मुझे नहीं भाती है ।
जागता हूँ तो मोह नींद बहुत आती है ॥
मेरु मंदर के इन सोलह जिनालयों की जय ।
ज्ञान की भव्य किरण का हुआ है आज उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

ध्यान की धूप मुझे क्यों नहीं सुहाती है ।
जलती रहती है सतत अष्ट कर्मबाती है ॥

मेरु मंदर के इन सोलह जिनालयों की जय ।
ज्ञान की भव्य किरण का हुआ है आज उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

मोक्ष फल पाने का पुरुषार्थ नहीं कर पाता ।
अपनी निज आत्मा को देख भी नहीं पाता ॥
मेरु मंदर के इन सोलह जिनालयों की जय ।
ज्ञान की भव्य किरण का हुआ है आज उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य अपने ही गुणों का मुझे बनाना है ।
मुझे बस मात्र निज अनर्घ्य पद ही पाना है ॥
कोई भी राग मेरे पास अब न आएगा ।
शुद्ध निज भाव ही तो मोक्ष में ले जाएगा ॥
मेरु मंदर के इन सोलह जिनालयों की जय ।
ज्ञान की भव्य किरण का हुआ है आज उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

मंदरमेरु भद्रशाल वन चार जिनालय

छंद – राधिका

मंदर सुमेरु भू भद्रशाल वन पावन ।
पूजूँ पूरव दिशि चैत्यालय मनभावन ॥
कर्तृत्व भाव का विष ही भाव मरण है ।
निज अप्पा सो परमप्पा परम शरण है ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ भद्रशालवनस्थित-पूर्वदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदर सुमेरु भू भद्रशाल वन पावन ।
पूजूँ दक्षिण दिशि चैत्यालय मन भावन ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ भद्रशालवनस्थित-दक्षिणदिक्-जिनालय

जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदर सुमेरु भू भद्रशाल वन पावन।
पूजूँ पश्चिम दिशि चैत्यालय मनभावन ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ भद्रशालवनस्थित-पश्चिमदिक्-जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदर सुमेरु भू भद्रशाल वन पावन।
पूजूँ उत्तर दिशि चैत्यालय मनभावन ॥४॥

ॐ ह्रींश्रीमंदरमेरौभद्रशालवनस्थित-उत्तरदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदर मेरु नंदन वन चार जिनालय

छंद उपमान (अहो जगत गुरु ....)

मंदर मेरु महान पूर्व दिशा नंदन वन।
जिनगृह एक प्रधान पूजूँ मैं मन वच तन॥
सर्व कषाय निवार अकषायी बन जाऊँ।
सम्यग्ज्ञान सँवार केवल रवि प्रगटाऊँ ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ नंदनवनस्थित-पूर्वदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पुष्कर मंदर मेरु दक्षिण दिशि नंदन वन।
पूजूँ श्री जिनगेह नाशूँ भव दुख क्रन्दन ॥६॥

ॐ ह्रींश्रीमंदरमेरौनंदनवनस्थित-दक्षिणदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पुष्कर मंदर मेरु पश्चिम दिशि नंदन वन।
मन वच काय सँवार पूजूँ जिनगृह पावन ॥७॥

ॐ ह्रींश्रीमंदरमेरौनंदनवनस्थित-पश्चिमदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पुष्कर मंदर मेरु उत्तर दिशि नंदन वन।
वन्दूँ मैं जिनगेह पुलकित है अन्तर्मन ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ नंदनवनस्थित-उत्तरदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदरमेरु सौमनस वन चार जिनालय

छंद – गीतिका

मेरु मंदर सौमनस वन भाव पूर्वक आइए।
पूर्व दिशि में जिन भवन के जिनवरों को ध्याइए॥
आस्रव का कर निरोध अपूर्व अवसर पाइए।
कर्म बंधन तोड़कर अब शिवपुरी में जाइए॥९॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ सौमनसवनस्थित-पूर्वदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेरु मंदर सौमनस वन दिशा दक्षिण जानिए।
एक शत वसु बिम्ब श्री जिन भवन के अब ध्याइये॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ सौमनसवनस्थित-दक्षिणदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेरु मंदर सौमनसवन दिशा पश्चिम जाइए।
रत्नमय जिन मूर्तियाँ श्री जिन भवन की ध्याइये॥११॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ सौमनसवनस्थित-पश्चिमदिक्-जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेरू मंदर सौमनस वन द्दिशा उत्तर जाइए।
शाश्वत श्री जिन भवन के जिनवरों को ध्याइये॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ सौमनसवनस्थित-उत्तरदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदर मेरु पान्डुक वन चार जिनालय

छंद – राधिका

पांडुक वन मंदर मेरु जिनालय शोभित।
लख पूर्व दिशा में सुर नर मुनि सब मोहित॥
पूजन करते ही हृदय हुआ आनंदित।
आस्रव बंधों के हुए विभाव तिरोहित॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ पांडुकवनस्थित-पूर्वदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पांडुक वन मंदर मेरु दिशा दक्षिण में ।
शाश्वत जिनगृह वन्दूँ स्वामी प्रति क्षण में ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ पांडुकवनस्थित-दक्षिणदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पांडुक वन मंदर मेरु दिशा पश्चिम की ।
जय जय ध्वनि गूँज रही जिनगृह अनुपम की ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ पांडुकवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पांडुक वन मंदर मेरु दिशा उत्तर में ।
जिनगृह की महिमा आयी निजअंतर में ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ पांडुकवनस्थित-उत्तरदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - शिखरिणी

मेरु मंदर पुष्कर जिनालय सोलह जानिये ।
स्वर्णमय अकृत्रिम बिम्ब रत्नों के मानिये ॥
पाँच सौ धनुकाया सहज पद्मासन सुन्दरम् ।
विरागी जिनमुद्रा विनय से नितप्रति वंदिए ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ मंदर मेरू जिनेश ।
ज्ञात हो गया मुझे अब मेरा शिवपुर देश ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ एक हजार सात सौ अट्ठाईस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

सोरठा

मंदर मेरू महान सोलह गृह पूजे प्रभो ।
मिला तत्त्व उपदेश जिन श्रुत के स्वाध्याय से ॥

छंद - मत्त सवैया

समकित न लिया संयम न लिया, मैंने न कभी प्रभु नाम लिया ।
परभावों के चक्कर में आ, झूठे जप तप का काम किया ॥

मिथ्या भ्रम की बातों में आ, भव भव में कितना कष्ट सहा।
पर में अपना पन मान अरे, मैंने तो खोटा दाम लिया॥

जब जब अवसर पाया मैंने चिन्ता न कभी की शिव सुख की।
जड़ के पीछे पीछे भागा निज में न कभी विश्राम लिया॥
निज रूप में अनूप नहीं देखा पर के पीछे पागल होकर।
रागों के एक इशारे पर हर वक्त जहर का जाम पिया॥

माँगी है भीख बहुत मैंने पंचेन्द्रिय सुख के भोगों की।
सच्चे मन से न कभी अरहंतों का भी नाम लिया॥
जब जब भी ध्यान किया मैंने मन को न किया बिल्कुल वश में।
माला फेरी पर मन न फिरा ऐसे ही ध्यान तमाम किया॥

मैं ही ज्ञाता मैं ही ज्ञायक मैं ही सागर हूँ अनुभव का।
जिसने निज को पहचान लिया, उसने सिद्धों का धाम लिया॥
जब मैंने पाया सम्यक् पथ विश्वास जगा निज अंतर में।
सर्वज्ञ जिनेश्वर चरणों में सम्यग्दर्शन अविराम लिया॥
सर्वज्ञ का लघुनंदन हूँ मैं स्वर गूँज उठे जिन आगम के।
रत्नत्रयधारी बनते ही निज पद में सहज विराम लिया॥

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधी षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – वीर

मंदर मेरू जिनालय सोलह मैंने पूजे भक्ति प्रमाण।
सम्यग्दर्शन प्रगटा कर मैं हे प्रभु पाऊँ सम्यग्ज्ञान॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वादः

卐

श्री पुष्करार्ध संबंधी मंदरमेरू चार गजदंत जिनालय

स्थापना

छंद – चांद्रायण

मंदर मेरू निकट चारों गजदंत हैं।
इन पर चार जिनालय श्री भगवंत हैं॥
चारों दिशि की विदिशाओं में जानिए।
हस्ति दंत सम सुन्दर पर्वत मानिए॥
चार शतक बत्तीस बिम्ब पूजन करूँ।
निज स्वरूप जप कर्मों के बंधन हरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद – चाल– म्हारी दीन तणी सुन वीनती

प्राणी मोह भाव निरवारिए जा से समकित उर में भव्य हो।
प्राणी भव जल पूर्ण सुखाइये ध्रुव शिव सुख ही उर मध्य हो॥
प्राणी चार जिनालय पूजिए मेरु मंदर के गजदंत हो।
प्राणी आत्म स्वभाव जगाइए जासे प्राप्त स्वपद अरहंत हो॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

प्राणी भव भावों को जीतिए भव ज्वर का कीजे नाश हो।
अब तो भव ताप विनाशिए तब होवे ज्ञान प्रकाश हो॥

प्राणी चार जिनालय पूजिए मेरू मंदर के गजदंत हो।
प्राणी आत्म स्वभाव जगाइए जासे प्राप्त स्वपद अरहंत हो॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

प्राणी भव सागर तर जाइए तब अक्षय पद निज प्राप्त हो।
निज शिव सुखो दधि में आइए फिर बनिए शाश्वत आप्त हो॥
प्राणी चार जिनालय पूजिए मेरू मंदर के गजदंत हो।
प्राणी आत्म स्वभाव जगाइए जासे प्राप्त स्वपद अरहंत हो॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि.।

प्राणी दुख कंदर्प विनाशिए फिर हो जाइए निष्काम हो।
गुणशील महा उर धारिए फिर लीजे निज ध्रुव धाम हो॥
प्राणी चार जिनालय पूजिए मेरू मंदर के गजदंत हो।
प्राणी आत्म स्वभाव जगाइए जासे प्राप्त स्वपद अरहंत हो॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

प्राणी क्षुधा व्याधि विनशाइए पद लीजे अनाहार रूप हो।
फिर अव्यावाधी सुख पाइए बन अजर अमर चिद्रूप हो॥
प्राणी चार जिनालय पूजिए मेरू मंदर के गजदंत हो।
प्राणी आत्म स्वभाव जगाइए जासे प्राप्त स्वपद अरहंत हो॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

प्राणी दीप ज्ञान उजियारिये उर लीजे केवल ज्ञान हो।
झट कर्म घातिया नाशिए फिर कीजे भव अवसान हो॥
प्राणी चार जिनालय पूजिए मेरू मंदर के गजदंत हो।
प्राणी आत्म स्वभाव जगाइए जासे प्राप्त स्वपद अरहंत हो॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

प्राणी आत्म सुगंधित धूप ला शुक्ल ध्यान अपूर्व सुध्याइये।
श्रेणी क्षायिक पा चढ़ जाइए आठों कर्मों की पीर नशाइये॥
प्राणी चार जिनालय पूजिए मेरू मंदर के गजदंत हो।
प्राणी आत्म स्वभाव जगाइए जासे प्राप्त स्वपद अरहंत हो॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अष्ट कर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

प्राणी मोक्ष महा फल पाइए कर भव भावों का घात हो।
निश्चल निज पद ही पाइए ध्रुव मुक्ति भवन कर प्राप्त हो॥
प्राणी चार जिनालय पूजिए मेरू मंदर के गजदंत हो।
प्राणी आत्म स्वभाव जगाइए जासे प्राप्त स्वपद अरहंत हो॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

प्राणी अर्घ्य अपूर्व बनाइए पद शुद्ध अनर्घ्य स्व प्राप्त हो।
अब निज पुरुषार्थ जगाइए जासे शिवसुख उर में व्याप्त हो॥
प्राणी आत्म स्वरूप स्व पाइए ध्रुव दर्शन ज्ञान अनूप हो।
प्राणी सीधे शिवपुर जाइए प्रगटा निज शुद्ध स्वरूप हो॥
प्राणी चार जिनालय पूजिए मेरू मंदर के गजदंत हो।
प्राणी आत्म स्वभाव जगाइए जासे प्राप्त स्वपद अरहंत हो॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

मंदर मेरु चार गजदंत जिनालय

छंद –गीतिका

मेरु मंदर आग्नेय दिशा इक गजदंत हैं।
रजतमय सौमनस पर जिनगेह श्री भगवंत हैं॥१॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ आग्नेयविदिशि सौमनसगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेरु के नैऋत्य में गजदंत स्वर्ण विहान है ।
नाम विद्युत्प्रभ अनूठा हस्तिदंत समान हैं ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ नैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेरु के वायव्य में गिरि गंध मादन स्वर्णमय ।
है सुगिरि गजदंत जिनगृह चैत्य सब ही रत्नमय ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ वायव्यविदिशि गन्धमादनाचलगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेरु के ईशान में वैडूर्य मणि सम माल्यवान ।
भव्य सुन्दर सुगिरि पर जिन भवन अनुपम कीर्तिमान॥४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ ईशानविदिशि माल्यवानगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - चांद्रायण

मंदरमेरु महान चार गजदंत हैं ।
हस्तिदंत सम पर्वत महिमावंत हैं ॥
इनके चार जिनालय पूजे भाव से ।
पर अवलंबन तज कर जुडूँ स्वभाव से ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ श्री जिनेन्द्र गजदंत ।
आप कृपा से हे प्रभो हो जाऊँ भगवंत ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ चार सौ बत्तीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

सोरठा

पूजे गृह गजदंत मंदरमेरू महान के ।
पाऊँ सम्यग्ज्ञान मात्र आत्म कल्याण हित ॥

छंद – गीतिका

परिस्थिति को मत बदल तू मनः स्थिति को ही बदल।
ज्ञान का ही आश्रय ले स्वयं में हो जा अचल ॥
नहीं कोई परिस्थिति को बदलने में है समर्थ ।
मनः स्थिति को बदलने में मात्र ज्ञानी ही समर्थ ॥

तू न पर में कर सकेगा पर नहीं परिवर्तनीय ।
किन्तु तेरा भाव खोटा सर्वथा ही निन्दनीय ॥
नहीं कोई कर सका है द्रव्य पर में आज तक ।
किन्तु थोथे भाव कर के श्रम किए सबने अथक ॥

सफल होता नहीं कोई कभी भी पर भाव में ।
सफलता पूरी भरी है मात्र आत्म स्वभाव में ॥
मनः स्थिति अपनी बदल ले प्राप्त कर सन्मार्ग तू ।
इसी क्षण से त्याग दे अब सदा को उन्मार्ग तू ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा ।

आशीर्वाद

छंद – ताटंक

पूजे हैं गजदंत जिनालय मंदर मेरू निकट सविनय ।
छह सामान्य गुणों को जानूँ करूँ आत्मा का निर्णय ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

ॐ

श्री पुष्करार्ध मंदर मेरू पुष्कर शाल्मलि वृक्ष जिनालय

स्थापना

छंद - चौपाई (चाल - निर्वाण कांड की)

खंड धातकी द्वीप प्रधान। पूरव मंदर मेरु महान ॥
पुष्कर शाल्मलि दो हैं वृक्ष। दो जिन मंदिर हैं प्रत्यक्ष ॥
उत्तर कुरू में दिशि ईशान। पुष्कर तरु है शोभावान।
देव कुरू शाल्मलि तरु जान। है नैऋत्य कोण छविमान॥
जिन मन्दिर में रत्निम बिम्ब। इक शत वसु प्रतिगृह जिनबिम्ब॥
विनय सहित पूजूँ जिनराज। पाऊँ शाश्वत निज पदराज॥
स्वयं भूल से पर आधीन। अब प्रभु होऊँगा स्वाधीन ॥
ज्ञान सूर्य का अमित विकास। अब निजगृह में करूँ निवास॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधिद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधिद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधिद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद -मत्त सवैया

नैराश्य गगन से बाहर आ मैंने स्वरूप निज पहिचाना।
देखा आनंद अतीन्द्रिय के सागर का उर में लहराना ॥
मंदर सुमेरु पुष्कर शाल्मलि तरुओं पर दो जिनगृह पावन।
रत्निम जिन प्रतिमाएँ पूजूँ त्रिभुवन में सबको मन भावन॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधीद्वय जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जड़ चंदन घिस घिस कर मैंने प्रति पल भव ताप बढ़ाया है।
संसार भाव क्षय करने का अवसर न कभी भी पाया है ॥
मंदर सुमेरु पुष्कर शाल्मलि तरुओं पर दो जिनगृह पावन।
रत्निम जिन प्रतिमाएँ पूजूँ त्रिभुवन में सबको मन भावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

अक्षय स्वरूप की महिमा से मैं तो शोभित अनादि से हूँ।
भव वन का भ्रमण मिटा दूँगा जिससे पीड़ित अनादि से हूँ॥
मंदर सुमेरु पुष्कर शाल्मलि तरुओं पर दो जिनगृह पावन।
रत्निम जिन प्रतिमाएँ पूजूँ त्रिभुवन में सबको मन भावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

चिर काम व्याधि बहु दुखदायी कामाग्नि बढ़ाती है प्रतिपल।
निष्काम बनूँगा अब प्रभु मैं गुणशील पुष्प लूँगा तत्क्षण ॥
मंदर सुमेरु पुष्कर शाल्मलि तरुओं पर दो जिनगृह पावन।
रत्निम जिन प्रतिमाएँ पूजूँ त्रिभुवन में सबको मन भावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

अब क्षुधा रोग हरने का ही उत्साह हृदय को भाया है।
ध्रुव परम तृप्त निज पद अपूर्व पाने का अवसर आया है ॥
मंदर सुमेरु पुष्कर शाल्मलि तरुओं पर दो जिनगृह पावन।
रत्निम जिन प्रतिमाएँ पूजूँ त्रिभुवन में सबको मन भावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोहान्धकार अब नाशूँगा निज ज्ञान दीप ज्योतिर्मय से।
व्याधियाँ सकल अज्ञानमयी क्षय कर छूटूँगा भव भय से ॥
मंदर सुमेरु पुष्कर शाल्मलि तरुओं पर दो जिनगृह पावन।
रत्निम जिन प्रतिमाएँ पूजूँ त्रिभुवन में सबको मन भावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

ध्यानाग्नि बीच वसुकर्मों को धू धू कर नाथ जलाऊँगा।
हिम पर्वत मोह महा भ्रम का पूरा ही प्रभो गलाऊँगा ॥
मंदर सुमेरु पुष्कर शाल्मलि तरुओं पर दो जिनगृह पावन।
रत्निम जिन प्रतिमाएँ पूजूँ त्रिभुवन में सबको मन भावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

फल महामोक्ष निर्वाणमयी पाने का प्रभु अवसर पाया।
मैं ज्ञानानंद स्वभावी हूँ यह ज्ञान आज उर को भाया ॥
मंदर सुमेरु पुष्कर शाल्मलि तरुओं पर दो जिनगृह पावन।
रत्निम जिन प्रतिमाएँ पूजूँ त्रिभुवन में सबको मन भावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्यों के ढेर लगाए बहु फिर भी अनर्घ्य पद मिला नहीं।
मैं नित्य निरंजन चेतन हूँ यह ज्ञान अभी उर झिला नहीं ॥
सिद्धत्व शक्ति जागे उर में ऐसा प्रयत्न अब करना है।
पाँचों प्रत्यय के बंधन को हे नाथ मुझे अब हरना है ॥
मंदर सुमेरु पुष्कर शाल्मलि तरुओं पर दो जिनगृह पावन।
रत्निम जिन प्रतिमाएँ पूजूँ त्रिभुवन में सबको मन भावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – उपजाति

है अर्ध पुष्कर में वृक्ष पुष्कर।
स्वर्णिम जिनालय ध्वज पंक्ति युत है।
पूजन करूँ मैं वन्दन करूँ मैं।
अरहंत चरणों में शीष नत है ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थ-मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करवृक्ष स्थित जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है वृक्ष शाल्मलि जिनगेह पावन ।
अरहंत बिम्बों से है सुशोभित ॥
बन भेद ज्ञानी सम्यक्त्व पाऊँ ।
पाऊँ सदा को प्रभु सुख अपरिमित ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थ-मंदरमेरुसम्बन्धि-शाल्मलिवृक्षस्थित जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - ताटंक

चित्स्वरूप आत्म स्वभाव से कर्ता भोक्ता कभी नहीं।
जो कर्ता भोक्ता बनता है वह तो ज्ञानी कभी नहीं ॥
अज्ञानी तो कर्ता भोक्तावेदक सब कुछ बन जाता ।
आत्म तेज रस पीने का भी भाव न उसके उर रहता ॥
ज्ञानी अपने आत्म तेज रस के संग संग निश्चल बहता।
एक शुद्ध परिपूर्ण ज्ञान रस का ही नित सेवन करता ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ शुद्ध भावमय आज।
पंच महाव्रत धार उर बन जाऊँ मुनिराज ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधिद्वयजिनालयस्थ दो सौ सोलह जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

सोरठा

मंदर मेरू पवित्र पुष्कर शाल्मलि वृक्ष दो ।
पूजे दो जिनगेह शुद्ध भाव से हे प्रभो ॥

दोहा

अब तो बरस मेरे समकित सावन मोह कलुषता धुल जाए।
तत्त्वों का सम्यक् निर्णय हो अनुभव रस उर घुल जाए ॥
जय तप व्रत संयम यम पायें नियम सुनिर्मल हो जाएँ ।
यथाख्यात के अवसर पावन शुक्ल ध्यान लेकर आएँ ॥

अरि रज रहस धातिया क्षय हों छवि सर्वज्ञ सहज दमके।
हो जाए अरहंत अवस्था केवल ज्ञान सूर्य चमके ॥

निजानंद रस लीन स्वज्ञायक ज्ञान लोक में रहे सदा।
स्व पर प्रकाशक द्युति आलोकित हो अंतर में ध्रुव सुखदा ॥

सावन भादों जैसी रस वर्षा अंतर में प्रतिपल हो।
हो स्वाधीन स्वज्ञान विकासित अन्तर्मन अति उज्ज्वल हो ॥

शेष अधाति चार भी जाएँ पा अयोग केवली दशा।
नयातीत पक्षातिक्रान्त हो पाऊँ मैं ध्रुव सिद्ध दशा ॥

समकित की ऊष्मा को पाकर मिथ्यातम गल जाए नाथ।
भेदज्ञान उर में प्रगटित हो मोह सर्व जल जाए नाथ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि धातकीपुष्करवृक्षसंबंधिद्वयजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – वीर

मंदर गिरि संबंधी पुष्कर शाल्मलि तरु गृह पूजे आज।
षटकारक को समझ सर्व कर्तृत्व भाव छोडूँ जिनराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

श्री पुष्करार्ध मंदर मेरू संबंधी षोडश वक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - सोरठा

खंड धातकी द्वीप मंदर मेरु सुगिरि निकट ।
गिरि सोलह वक्षार जिन मंदिर पूजूँ सदा ॥
प्रति जिन मंदिर बिम्ब एक शतक अरु आठ हैं ।
एक सहस्र अरु सात शतक बीस अरु आठ सब ॥
प्रातिहार्य वसु दिव्य हैं वसु मंगल द्रव्य युत ।
ध्वज पर अंशुक चिन्ह शिखर कलश हैं स्वर्णमय ॥
ज्ञान भाव का स्वाद अब मैं भी पाऊँ प्रभो ।
मोक्ष मार्ग की ओर जाना है निज भाव से ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - चौपई - आंचलीबद्ध (चाल पंचमेरू की)

रत्नत्रय जल कर के पान । पाऊँ शाश्वत पद निर्वाण ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो ।
मंदर मेरु सुगिरि वक्षार । सोलह चैत्यालय सुखकार ।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महासुख हो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

निज ध्रुव चंदन गंध महान। देती मुक्ति सौख्य अमलान ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो ॥
मंदर मेरु सुगिरि वक्षार। सोलह चैत्यालय सुखकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महासुख हो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

निज गुण अक्षत ध्रुव अविकार। ले जाते भव सागर पार ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो।
मंदर मेरु सुगिरि वक्षार। सोलह चैत्यालय सुखकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महासुख हो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि.।

शील पुष्प की सुरभि प्रसिद्ध। पाकर प्राणी होता सिद्ध ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो।
मंदर मेरु सुगिरि वक्षार। सोलह चैत्यालय सुखकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महासुख हो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

निराहार पद ही सुखकार। क्षुधा रोग करता संहार ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो।
मंदर मेरु सुगिरि वक्षार। सोलह चैत्यालय सुखकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महासुख हो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

ज्ञान दीप का अमित प्रकाश। मोह महा भ्रम करता नाश ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो।
मंदर मेरु सुगिरि वक्षार। सोलह चैत्यालय सुखकार।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महासुख हो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

ध्यान धूप का धूम्र महान । अष्ट कर्म करता अवसान ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो ।
मंदर मेरु सुगिरि वक्षार । सोलह चैत्यालय सुखकार ।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महासुख हो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

महा मोक्ष फल की है चाह । उर में मेरे ज्ञान अथाह ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो ।
मंदर मेरु सुगिरि वक्षार । सोलह चैत्यालय सुखकार ।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महासुख हो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य बनाऊँ गुणमय पूर्ण । पद अनर्घ्य प्रगटे सम्पूर्ण ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो ।
दर्शन ज्ञान स्वरूप स्वभाव । प्रगटा करूँ विभाव अभाव ॥
परम प्रभु हो जय जिनदेव महा विभु हो ।
मंदर मेरु सुगिरि वक्षार । सोलह चैत्यालय सुखकार ।
देखे नाथ परम सुख हो पूजे नाथ महासुख हो ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – वीर

पुष्करार्ध है द्वीप मनोहर मानुषोत्तर के इस ओर ।
पूर्व दिशा में स्वर्णमयी है मंदर मेरु सूर्य सम कोर ॥
पूर्व और पश्चिम सीता सीतोदा सरिताएं सुप्रसिद्ध ।
इन के दोनों तट पर हैं सोलह वक्षार महान प्रसिद्ध ॥
एक एक वक्षार चार कूटों से युक्त स्वर्णमय हैं ।
चार चार में एक एक पर श्री जिनगृह महिमामय हैं ॥

मंदरमेरु सीता नदी उत्तर तट चार वक्षार जिनालय

छंद – सरसी

सीता के उत्तर तट पर है चित्रकूट वक्षार।
भद्रशाल वेदी के सुनिकट जिन गृह इक सुखकार॥
भाव सहित मैं पूजूँ ध्याऊँ गाऊँ मंगलाचार।
निज स्वभाव साधन के द्वारा पाऊँ पद अविकार॥१॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पद्म कूट वक्षार द्वितिय का जिनगृह पूजूँ आज।
अर्घ्य चढ़ा निज ध्यान करूँ मैं महामोक्ष के काज॥२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नलिन कूट वक्षार सदा ही अतिशय शोभावान।
शाश्वत जिनगृह एक मनोरम मैं पूजूँ धर ध्यान॥३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

एक शैल वक्षार स्वर्णमय शुद्ध सिद्ध जिनधाम।
अर्घ्य चढ़ाकर जजूँ भाव से प्रतिमाएँ अभिराम॥४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे एकशैलकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदर मेरु सीता नदी दक्षिण तट चार वक्षार जिनालय

सीता नदी के दक्षिण तट पर देवारण्य निकट।
है त्रिकूट वक्षार मनोहर सिद्ध कूट जिनमठ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे त्रिकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वैश्रवण वक्षार छठा है स्वर्णमयी लो जान।
सिद्ध कूट पर इकशत वसु प्रतिमाएँ छविमान॥६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वैश्रवणवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है अंजन वक्षार सातवाँ शाश्वत चैत्यालय ।
पूजन करके निज को ध्याऊँ पाऊँ सिद्धालय ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे अंजनवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आत्मांजन वक्षार आठवाँ इन्द्रादिक पूजित ।
शाश्वत जिनगृह पूजन करके मैं पाऊँ समकित ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे आत्मांजन वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदरमेरु सीतोदा दक्षिण तट चार वक्षार जिनालय

है पश्चिम विदेह सीतोदा दक्षिण दिशि वक्षार ।
भद्रशाल सन्निकट नाम है श्रद्धावान विचार ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे श्रद्धावान वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है वक्षार सलोना पर्वत सुन्दर विजटावान ।
इन्द्रादिक सुर पूजन करते होता हर्ष महान ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे विजटावान वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीष विष वक्षार मनोहर पर जिन भवन प्रधान ।
ऋषि मुनि विद्याधर सुर आते करते जय जय गान॥११॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे आशीविष वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है वक्षार सुखावह सुन्दर जिस पर है जिनगेह ।
ऋद्धि धारि मुनि वंदन करते आते धरे सनेह ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सुखावह वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदर मेरु सीतोदा उत्तर तट चार वक्षार जिनालय

सीतोदा के उत्तर तट पर चन्द्रमाल वक्षार ।
भूतारण्य निकट शोभित है जिन मंदिर सुखकार॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे चन्द्रमाल वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सूर्यमाल वक्षार स्वर्णमय पर जिन भवन प्रधान ।
देव देवियाँ नृत्य गीतमय गाते मंगलगान ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमाल वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नागमाल वक्षार भव्य अति कंचन द्युति छविमान ।
दर्शन करते ही हो जाता पापों का अवसान ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे नागमाल वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देवमाल वक्षार सोलवाँ श्री जिन भवन प्रसिद्ध ।
नर किन्नर गंधर्व आदि सुर करते भाव विशुद्ध ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे देवमाल वक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - शार्दूलविक्रीडित

पुष्कर अर्ध सुमेरु श्रेष्ठ मंदर वक्षार षोडश जजूँ ।
सम्यग्दर्शन प्राप्ति हेतु जिनवर दिनरात तुमको भजूँ ॥
त्रैलोक्येश्वर वन्दनीय प्रतिमा वन्दूँ सभी रत्नमय ।
निज चैतन्य स्वरूप शुद्ध ध्याऊँ पर भाव सारे तजूँ ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ गृह सोलह वक्षार ।
शुद्धात्मा का ज्ञान कर पाऊँ ज्ञान अपार ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ एक हजार सात सौ अट्ठाईस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

सोरठा

पूजे मैंने आज सोलह गृह वक्षार के।
सम्यग्दर्शन प्राप्त अब तो करना है मुझे ॥

वीर छंद

धर्म आचरण हो जाता है शुद्ध स्वरूपाचरण महान ।
धर्म यहाँ से ही होता प्रारम्भ समझ लो चतुर सुजान ॥
बिन समकित के कभी स्वरूपाचरण नहीं होता आरम्भ ।
बिन समकित के संयम धारण करना तो है खोटा दंभ ॥
बिन समकित जो संयम लेते उन्हें धर्म होता न कभी ।
बिना स्वरूपाचरण किसी का कर्म नष्ट होता न कभी ॥
थोड़ा सा भी यदि विवेक है तो सम्यग्दर्शन पाओ ।
फिर संयम की पवन प्राप्त कर मोक्षमार्ग पर आ जाओ ॥
सम्यग्दर्शन के पाने में अब मत देरी करो कभी ।
बिन समकित कल्याण न होगा यह दृढ़ निश्चय करो अभी ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद - वीर

मंदर मेरु निकट सोलह वक्षार जिनालय पूजे आज ।
पर कर्तृत्व भाव दुखमयी त्यागूँ यह बल दो जिनराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

ॐ

श्री पुष्करार्ध मंदर मेरु चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - चौपई (चाल - निर्वाण काण्ड)

द्वीप धातकी खंड महान। मंदर मेरु पूर्व में जान॥
है विजयार्ध सुगिरि चौंतीस। जिन चैत्यालय में जगदीश॥
तीन सहस छह शतक सुजान। तथा बहत्तर बिम्ब महान॥
विनय सहित नित करूँ प्रणाम। जिन प्रतिमा रत्निम अभिराम॥
पूजूँ भाव पूर्वक नाथ। तजूँ न तुम चरणों का साथ॥
करूँ आत्मा का ही ध्यान। निज बल से पाऊँ निर्वाण॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - मानव

भव राग जीतने को मैं अविकारी जल उर लाऊँ।
त्रय रोग सर्वथा नाशूँ भव पर्वत पर जय पाऊँ॥
मंदर सुमेरु संबंधित विजयार्ध सुगिरि मन भावन।
चौंतीस जिनालय वन्दूँ पाऊँ निज शिव पद पावन॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भव भाव न उर में जागे अविकल चंदन उर लाऊँ।
भव ज्वर की पीड़ा क्षय कर आनंद अतीन्द्रिय पाऊँ॥

मंदर सुमेरु संबंधित विजयार्ध सुगिरि मन भावन ।
चौंतीस जिनालय वन्दूँ पाऊँ निज शिव पद पावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

भव अटकी में भटका हूँ चारों गति में अटका हूँ ।
निर्मल अक्षय पद पाने बिन ज्ञान सदा भटका हूँ ॥
मंदर सुमेरु संबंधित विजयार्ध सुगिरि मन भावन ।
चौंतीस जिनालय वन्दूँ पाऊँ निज शिव पद पावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षय पदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

भव दोष काम पीड़ा का मैं क्षय न कभी कर पाया ।
निष्काम भावना को भी हे नाथ न मैंने भाया ॥
मंदर सुमेरु संबंधित विजयार्ध सुगिरि मन भावन ।
चौंतीस जिनालय वन्दूँ पाऊँ निज शिव पद पावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

भव भावी भावों से ही पीड़ित हूँ क्षुधा रोग से ।
हूँ नाथ निराहारी पर जुड़ सका न ज्ञान योग से ॥
मंदर सुमेरु संबंधित विजयार्ध सुगिरि मन भावन ।
चौंतीस जिनालय वन्दूँ पाऊँ निज शिव पद पावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

भव भावों की लहरों ने इत उत मुझको भटकाया ।
निज ज्ञान दीप ज्योतिर्मय मैंने न कभी भी पाया ॥
मंदर सुमेरु संबंधित विजयार्ध सुगिरि मन भावन ।
चौंतीस जिनालय वन्दूँ पाऊँ निज शिव पद पावन ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

भव भावी धूप सुहायी रत आर्त्तरौद्र ध्यानों में ।
कर्मों को कब क्षय करता आगम न पड़ा कानों में ।।
मंदर सुमेरु संबंधित विजयार्ध सुगिरि मन भावन ।
चौंतीस जिनालय वन्दूँ पाऊँ निज शिव पद पावन ।।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्ट कर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

जब श्रेष्ठ मोक्ष फल पाने की बारी मेरी आयी ।
तब घोर मोह निद्रा ने मेरी सुध बुध बिसरायी ।।
मंदर सुमेरु संबंधित विजयार्ध सुगिरि मन भावन ।
चौंतीस जिनालय वन्दूँ पाऊँ निज शिव पद पावन ।।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

भव भावी अर्घ्य बनाए भव तरु पर उलटा लटका ।
पदवी अनर्घ्य कब पाता मैं तो विभाव में अटका ।।
अब आज सुअवसर आया भवदुख अभाव करने का ।
शिव सौख्य पूर्ण पाने का संसार भाव हरने का ।।
मंदर सुमेरु संबंधित विजयार्ध सुगिरि मन भावन ।
चौंतीस जिनालय वन्दूँ पाऊँ निज शिव पद पावन ।।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – चौपई (चाल – निर्वाण काण्ड)

मेरू सुदर्शन पूर्व विदेह । अरु विदेह पश्चिम जिनगेह ।।
हैं बत्तीस विदेह सुजान । रूपाचल विजयार्ध महान ।।
एक भरत में दक्षिण जान । इक ऐरावत उत्तर मान ।।
ये विजयार्ध सुगिरि चौंतीस । भाव सहित वन्दूँ जगदीश ।।
इक इक गिरि पर नव नव कूट । नव नव में इक सिद्ध सुकूट ।।
सिद्ध कूट जिनगृह भगवंत । इक शत वसु प्रतिमा अरहंत ।।

मंदर मेरु पूर्व विदेह सोलह विजयार्ध जिनालय

छंद - ताटंक

मंदर गिरि पूरव विदेह में सीता सरि उत्तर तट पर।
भद्रशाल वन के समीप है कच्छा देश महा सुन्दर ॥
छह खंडों से शोभित है विजयार्ध मध्य में मन भावन।
नव कूटों में एक कूट पर पूजूँ जिन मंदिर पावन ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुकच्छा मध्य एक विजयार्ध अचल उत्तम छविवंत।
नव कूटों में एक कूट पर पूजूँ जिन मंदिर अरहंत ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महाकच्छा में है विजयार्ध रजत गिरि अति सुन्दर।
इसके ऊपर जिन चैत्यालय भाव सहित पूजूँ अघ हर ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश कच्छकावती मनोहर पूर्व विदेह क्षेत्र सुन्दर।
गिरि वैताढ्य जिनेन्द्र भवन को अर्घ्य चढ़ाऊँ कल्मष हर॥४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

छह खंडों से युक्त देश आवर्ता में विजयार्ध महान।
सिद्ध कूट पर जिन बिम्बों को अर्घ्य चढ़ा गाऊँ जयगान ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश लांगलावर्ता मनहर में वैताढ्य रजतगिरि नाम।
वन्दवारों से शोभित हैं तोरण द्वार श्री जिनधाम ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पुष्कला का विजयार्ध सुशोभित है जिन मंदिर से।
जल फलादि वसु द्रव्य चढ़ाऊँ करूँ भावना अंतर से ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पुष्कलावती मध्य में रजत वर्णमय है विजयार्ध।
पूजा कर तत्त्वों के निर्णय से पाऊँ निश्चय भूतार्थ ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वत्सादेश मध्य में है विजयार्ध शीर्ष पर सिद्ध भवन।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं पाऊँगा शुद्ध भाव से मुक्ति सदन ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुवत्सा के सुमध्य में गिरि वैताढ्य जिनालय ज्ञेय।
जिन पूजन से उपादेय निज हो जाता पर होता हेय ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महावत्सा रूपाचल पर जिनगेह अकीर्तम है।
जिन दर्शन से एक समय में क्षय होता भव विभ्रम है ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वत्सकावती अनूठा है विजयार्ध जिनालय सार।
जिन पूजन का सच्चा फल है सम्यग्दर्शन ज्ञान अपार ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावती देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रम्या देश मध्य में है विजयार्ध शिखर जिन भवन प्रधान।
अर्घ्य समर्पित करके स्वामी करूँ आत्मा का कल्याण ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुरम्या रजताचल है गिरि विजयार्ध शीर्ष जिन धाम।
इक शत वसु जिन बिम्ब रत्नमय सादर सविनय करूँ प्रणाम ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रमणीया शुभदेश अनोखा है विजयार्ध शिखर जिनगेह।
रत्नमयी जिन प्रतिमा पूजूँ भक्ति भाव से जजूँ सनेह ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश मंगलावती जिनेश्वर के होते पाँचों कल्याण।
गिरि वैताढ्य रजत पर जिन चैत्यालय पूजूँ भगवान ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि, स्वाहा।

मंदर मेरु पश्चिम विदेह सोलह विजयार्ध जिनालय

छंद - रोला

भद्रशाल के निकट देश पद्मा रूपाचल।
भव्य जीव जिनगृह दर्शन कर होते निर्मल ॥
निरतिचार अणुव्रत पालूँ ले सम्यग्दर्शन।
फिर मैं निश्चय पंच महाव्रत धारूँ भगवन ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मा देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुपद्मा मध्य रजत गिरि शुभ छवि वाला।
सिद्ध कूट पर जिन मंदिर है एक निराला ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मा देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महापद्मा विदेह में अति मन भावन।
सिद्धकूट जिन चैत्यालय प्रतिमाएँ पावन ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मा देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पद्माकावती मध्य विजयार्ध मनोरम ।
सिद्ध कूट जिन मंदिर में जिनवर छवि अनुपम ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मावती देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

शंखादेश विदेह मध्य विजयार्ध अनूठा ।
जिनगृह दर्शन करते ही मिथ्या भ्रम टूटा ॥२१।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानदीदक्षिणतटे शंखा देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नलिना देश विदेह मध्य रूपाचल भारी ।
जिनगृह जिन प्रतिमाएँ रत्नमयी अविकारी ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानदीदक्षिणतटे नलिन देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

कुमुदा देश विदेह मध्य विजयार्ध सलोना ।
जिनगृह लख हर्षित है मन का कोना कोना ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानदीदक्षिणतटे कुमुदा देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सरिता देश विदेह मध्य विजयार्ध रजतमय ।
जिनगृह वन्दन से मिट जाते हैं सातों भय ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानदीदक्षिणतटे सरिता देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीतोदा उत्तर में वप्रादेश सुहाना ।
रजताचल पर चैत्यालय का वैभव जाना ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे वप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुवप्रा मध्य एक रूपाचल पावन ।
जिनगृह के प्रांगण में पूजन करते सुरगण ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे सुवप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महावप्रा में है विजयार्ध रजतमय ।
भव्य जीव प्रभु पूजन कर होते हैं निर्भय ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे महावप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वप्रकावती रजत गिरि शोभाशाली ।
जिनबिम्बों की जिनगृह में है छटा निराली ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे वप्रकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

गंधादेश विदेह मध्य वैताढ्य एक है ।
जिनगृह दर्शन कर जागा उर में विवेक है ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे गंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुगंधा मध्य एक रूपाचल सुन्दर ।
जिनगृह में जिन मुद्रामय जिनबिम्ब मनोहर ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे सुगंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश गंधिला मध्य रजत विजयार्ध जाऊँगा ।
शाश्वत जिन चैत्यालय के जिनबिम्ब ध्याऊँगा ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे गंधिलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश गंधमालिनी बीच रूपाचल ध्याऊँ ।
जिन चैत्यालय के बिम्बों को अर्घ्य चढ़ाऊँ ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे गंधमालिनी देशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदर मेरू भरतैरावत दो विजयार्ध जिनालय

मंदर मेरू सुदक्षिण में है भरत मनोहर ।
काल चतुर्थम में होते हैं प्रभु तीर्थंकर ॥
रजताचल वैताढ्य जिनालय नमन करूँ मैं ।
पाप ताप संताप दोष सब शमन करूँ मैं ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-भरतक्षेत्रस्थ-विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंदरमेरू सुउत्तर में ऐरावत अनुपम ।
छह कालों में सर्वोत्तम है काल चतुर्थम् ॥

इसी काल में होते हैं चौबीस जिनेश्वर ।
मैं पूजूँ विजयार्ध जिनालय अर्घ्य चढ़ाकर ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-ऐरावतक्षेत्रस्थ-विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

सवैया

मंदर मेरु सुमेरु महागिरि लाख चुरासी योजन बारे ।
पुष्कर अर्घ्य सुपूर्व दिशा मधि स्वर्णमयी बहु वैभव धारे ॥
चारों दिशा विजयार्ध जिनालय संख्या में चौंतीस हमारे ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजत हैं हम आज मनो सब संकट टारे ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ गिरि विजयार्ध सुनेह ।
भेद ज्ञान की विधि पले बरसे समकित नेह ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद – दोहा

श्री जिनेन्द्र भगवान को मैं वंदूँ धर ध्यान ।
अनेकांत संदेश दे, किया विश्व कल्याण ॥

छंद – ताटंक

अनेकांत ही श्रेष्ठ मंत्र है परम शान्ति सुख पाने का ।
अनेकांत ही श्रेष्ठ तंत्र है, बस एकान्त मिटाने का ॥
है अनन्त धर्मात्मक वस्तु यह निर्णय उर में धारा ।
एक धर्म है अन्य नहीं है यह दुरनिश्चय निर्वारो ॥

एक काल में दोनों धर्म के बराबर इसमें रहते हैं ।
एक दूसरे में न कहीं अपने अपने में बहते हैं ॥
है स्वद्रव्य से, किन्तु नहीं परद्रव्य आदि से वस्तु कभी ।
है स्वक्षेत्र से, किन्तु नहीं पर क्षेत्र आदि से वस्तु कभी ॥

है स्वकाल से, किन्तु नहीं परकाल आदि से वस्तु कभी।
है स्वभाव से, किन्तु नहीं परभाव आदि से वस्तु कभी॥
यही वस्तु का स्वचतुष्टय है इसमें ही इसका अस्तित्व।
पर का नहीं चतुष्टय इसमें पर से है पूरा नास्तित्व॥

इसे जानकर हृदय उतारूँ निज स्वद्रव्य पर ही दूँ लक्ष्य।
निजस्वतत्त्व का आश्रय लेकर केवलज्ञान वरूँ प्रत्यक्ष॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – वीर

मंदर मेरु सुगिरि विजयार्ध जिनालय पूजे प्रभु चौंतीस।
प्राप्त करूँ कैवल्य महानिधि दो आशीर्वाद हे ईश॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वादः

卐

अब प्रभु चरण छोड़ कित जाऊँ

ऐसी निर्मल बुद्धि दो शुद्धातम को ध्याऊँ॥ अब.॥१॥
सुर नर पशु नारक दुख भोगे कब तक तुम्हें सुनाऊँ।
वैरी मोह महा दुख देवे कैसे याहि भगाऊँ॥ अब.॥२॥
सम्यग्दर्शन की निधि दे दो तो भव भ्रमण मिटाउँ।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति करूँ मैं परम शान्त रस पाऊँ॥अब.॥३॥
भेद ज्ञान का वैभव पाऊँ निज के ही गुण गाऊँ।
तुव प्रसाद से वीतराग प्रभु भव सागर तर जाऊँ॥अब.॥४॥

ॐ

श्री पुष्करार्ध मंदर मेरु षटकुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - हरिगीतिका

षटकुलाचल द्वीप पुष्कर मेरु मंदिर के महान ।
जिनालय हर एक पर हैं बिम्ब जिन इनमें प्रधान ॥
रास आया है मुझे अब जिनागम का स्वाध्याय ।
ज्ञान की महिमा झिली है हृदय में शिव सौख्यदाय ॥
करूँ पूजन भाव से प्रभु विनय भाव महान युत ।
स्वरूपाचरणी बनूँ मैं ज्ञान ध्यान विराग युत ॥
बिम्ब सब छह शतक अड़तालीस प्रभु वन्दन करूँ ।
सुमुनि होकर राग जीतूँ कर्म के बंधन हरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - पंच चामर

नीर सम्यक्त्व बिन न रोग भव का जाएगा ।
ज्ञान भाव यदि नहीं तो घोर कष्ट पाएगा ॥
गेह षटकुलाचलों को भाव से मैं जजूँ ।
भव्य अकृत्रिम जिनेश विनय सहित मैं भजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

ज्ञान चंदन नहीं तो ताप भव न जाएगा ।
विशाल संसार का पार नहीं पाएगा ॥
गेह षटकुलाचलों को भाव से मैं जजूँ ।
भव्य अकृत्रिम जिनेश विनय सहित मैं भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरूसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

ज्ञान अक्षत बिना स्वपद अक्षय नहीं ।
यहाँ वहाँ भ्रमेगा भाव मरण कर कहीं ॥
गेह षटकुलाचलों को भाव से मैं जजूँ ।
भव्य अकृत्रिम जिनेश विनय सहित मैं भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरूसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि. ।

ज्ञान पुष्प की सुगंध प्राप्त नहीं हो सकी ।
शान्त सौख्य भावना व्याप्त नहीं हो सकी ॥
गेह षटकुलाचलों को भाव से मैं जजूँ ।
भव्य अकृत्रिम जिनेश विनय सहित मैं भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरूसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

क्षुधा रोग नाश को मैं स्वयं समर्थ हूँ ।
बिना ज्ञान सुचरु के पूर्ण असमर्थ हूँ ॥
गेह षटकुलाचलों को भाव से मैं जजूँ ।
भव्य अकृत्रिम जिनेश विनय सहित मैं भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरूसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोह जाल छिन्न भिन्न करना ही श्रेष्ठ है ।
ज्ञान दीप एकमात्र योग्य परम ज्येष्ठ है ॥
गेह षटकुलाचलों को भाव से मैं जजूँ ।
भव्य अकृत्रिम जिनेश विनय सहित मैं भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरूसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

ध्यान धूप का अभाव आज तक रहा सदा।
कर्म नाश का उपाय व्यर्थ ही रहा सदा॥
गेह षटकुलाचलों को भाव से मैं जजूँ।
भव्य अकृत्रिम जिनेश विनय सहित मैं भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरूसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

मोक्ष फल की प्राप्ति का उपाय नहीं कर सका।
विभाव भाव को भी नाथ आज तक न हर सका॥
गेह षटकुलाचलों को भाव से मैं जजूँ।
भव्य अकृत्रिम जिनेश विनय सहित मैं भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरूसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य बनाए अपूर्व पद अनर्घ्य के लिए।
भाव शुद्ध आपको नाथ समर्पित किए॥
मोह क्षीण करूँ नाथ यथाख्यात शक्ति से।
पूर्ण मोक्ष पाऊँ नाथ मात्र आत्म शक्ति से॥
गेह षटकुलाचलों को भाव से मैं जजूँ।
भव्य अकृत्रिम जिनेश विनय सहित मैं भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरूसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद - सोरठा

पूजूँ गृह हिमवान भक्ति भाव से हे प्रभो।
रत्निम चैत्य महान आत्म ध्यान मुद्रा परम॥१॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-हिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भव्य महाहिमवान चैत्यालय जिनराज का।
सुरपति पूजित देव मैं भी पूजूँ भक्ति से॥२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-महाहिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पर्वत निषध प्रसिद्ध जिनगृह है पावन परम ।
वन्दूँ मन वच काय तीनों योग सँवार के ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-निषिधपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पर्वत नील प्रधान अरहंतालय जानिए ।
पूजन कीजे आज विनय भाव से नमित हो ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-नीलपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पर्वत रुक्मि महान चैत्यालय वन्दूँ सदा ।
यथाख्यात चारित्र शुक्ल ध्यान से प्राप्त हो ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-रुक्मिपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पर्वत शिखरी भव्य श्रेष्ठ कुलाचल गेह जिन ।
करूँ आत्म कल्याण पूजन करके हे प्रभो ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-शिखरीपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - एक इक शीष पर एक जिन मंदिरम्

अपनी स्व परिणति ही दर्शनीय शालिनी ।
पुण्य पाप रूप सर्व आस्रव दुख हारिणी ॥
पूर्ण ज्ञान मयी है पूर्ण ध्यान मयी है ।
वीतराग परिणति है भव समुद्र तारिणी ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ गेह कुलाचल श्रेष्ठ ।
अपने ही भीतर रहूँ तजूँ वासना नेष्ठ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ छह सौ अड़तालीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद – पीयूष राशि

षटकुलाचल गेह जिन पूजे प्रभो ।
ज्ञान का सौन्दर्य उर भाया विभो ॥
शुद्ध ज्ञान स्वभाव निज चैतन्य का ।
हुआ दृष्टित ध्रौव्य सुखदाता प्रभो ॥

छंद – ताटंक

पूर्ण ज्ञानधन निज आत्मा की श्रद्धा ही सम्यग्दर्शन ।
निज का ज्ञान यही है सम्यग्ज्ञान परम निर्मल पावन ॥
निज में ही चर्या करना सम्यक् चारित्र कहाता है ।
इन तीनों की पूर्ण एकता रत्नत्रय विख्याता है ॥

सम्यग्दर्शन के बिन सच्ची भक्ति नहीं हो सकती है ।
रत्नत्रय की भक्ति न हो तो मुक्ति नहीं हो सकती है ॥
आत्म ज्योति परिपूर्ण निरंतर महिमामयी स्वघट होती ।
सब द्रव्यों से भिन्न शुद्धनय के आधीन प्रगट होती ॥

केवल ज्ञान चक्षु के धारी श्री सर्वज्ञ देव अरहंत ।
सकल ज्ञेय ज्ञायक होकर भी निजानंद रस मय भगवंत ॥
इनकी पावन शरण प्राप्त कर सम्यग्दर्शन प्रगटाऊँ ।
शुद्ध ज्ञान चारित्र सजाकर रत्नत्रय निधि उर लाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – वीर

भव्य जिनालय मंदर मेरु छहों कुलाचल पूजे देव ।
पर भोक्तृत्व सदा को छोड़ूँ वीतराग होऊँ स्वयमेव ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

ॐ

श्री पुष्करार्ध पश्चिम विद्युन्माली मेरु सोलह जिनालय

स्थापना

छंद - वीर

पुष्करार्ध की पश्चिम दिशि में विद्युन्माली मेरु महान ।
इस पर चारों ओर सुवन हैं सुषमाशाली शोभावान ॥
सब में चार चार चैत्यालय कुल सोलह स्वर्णिम जिनधाम ।
रत्नबिम्ब सतरह सौ अट्ठाईस भावमय करूँ प्रणाम ॥
यह सब अकृत्रिम रचना है मैं भी अकृत्रिम भगवान ।
स्वयंसिद्ध हूँ बना बनाया ध्रौव्य त्रिकाली महिमावान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - मानव

संसार बंध का कारण मिथ्यात्व महादुखदायी ।
संसार भाव क्षयकर्ता सम्यक्त्व परम सुखदायी ॥
विद्युन्माली संबंधित पूजूँ सोलह चैत्यालय ।
रत्नत्रय का संबल ले पाऊँ प्रभु निज सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

अविरति भी भव बंधक है चारों गति भ्रमण कराती ।
जब संयम उर में जगता तब निज की सुधि उर आती।

विद्युन्माली संबंधित पूजूँ सोलह चैत्यालय ।
रत्नत्रय का संबल ले पाऊँ प्रभु निज सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

जब तक प्रमाद है उर में संयम न पूर्ण प्रभु होता।
बंधन का यह कारण भी समकित बिन क्षय ना होता॥
विद्युन्माली संबंधित पूजूँ सोलह चैत्यालय ।
रत्नत्रय का संबल ले पाऊँ प्रभु निज सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि.।

चारों कषाय भव बंधनमय चार चौकड़ी वाली ।
यह अनंतानुबंधी है भव भव तक विपदा वाली ॥
विद्युन्माली संबंधित पूजूँ सोलह चैत्यालय ।
रत्नत्रय का संबल ले पाऊँ प्रभु निज सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

जब अनंतानुबंधी का क्षय होता समकित होता ।
भव सागर सीमित होता आगे सुख शाश्वत होता ॥
विद्युन्माली संबंधित पूजूँ सोलह चैत्यालय ।
रत्नत्रय का संबल ले पाऊँ प्रभु निज सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

अप्रत्याख्यानी जाए तो व्रत धारण करता है प्रिय ।
सन्मार्ग प्राप्त कर लेता हर लेता पर की द्युति जिय ॥
विद्युन्माली संबंधित पूजूँ सोलह चैत्यालय ।
रत्नत्रय का संबल ले पाऊँ प्रभु निज सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

जब प्रत्याख्यानावरणी जाती तब मुनि व्रत होता ।
आनंद अतीन्द्रिय सागर उर झरता दृष्टित होता ॥
विद्युन्माली संबंधित पूजूँ सोलह चैत्यालय ।
रत्नत्रय का संबल ले पाऊँ प्रभु निज सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

जाती संज्ज्वलन तभी तो उर यथाख्यात होता है।
परिपूर्ण ज्ञान होता है घातिया नाश होता है ॥
विद्युन्माली संबंधित पूजूँ सोलह चैत्यालय ।
रत्नत्रय का संबल ले पाऊँ प्रभु निज सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

जब योग क्षीण हो जाता तब सिद्ध स्वपद उर भाता।
आते ही भव दुख क्षय कर परिपूर्ण सौख्य उर पाता॥
हैं नोकषाय भी दुखमय इनको भी क्षय करता है ।
अकषायी होकर स्वामी भव सागर दुख हरता है ॥
विद्युन्माली संबंधित पूजूँ सोलह चैत्यालय ।
रत्नत्रय का संबल ले पाऊँ प्रभु निज सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

भद्रशाल वन चार जिनालय

छंद – रोला

पंचम स्वर्ण मेरु विद्युन्माली अति मनहर ।
भू पर भद्रशाल वन इस जगती में सुन्दर ॥
पूर्व दिशा जिन मंदिर पूजूँ अर्घ्य चढ़ाऊँ ।
कर्म पंक प्रक्षालन हित निज में रम जाऊँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ भद्रशालवनस्थित-पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पंचम स्वर्ण मेरु विद्युन्माली मन भावन ।
भद्रशाल वन दक्षिण में है जिनगृह पावन ॥
जल फलादि वसु द्रव्य अर्घ्य ले नित्य जजूँ मैं ।
पर विभाव तज निज स्वभाव को सदा भजूँ मैं ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ भद्रशालवनस्थित-दक्षिणदिक्‌जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचम स्वर्ण मेरु अति उत्तम विद्युन्माली ।
पश्चिम दिशि में जिन चैत्यालय शोभाशाली ॥
जिनबिम्बों की पूजन कर भवदुख सब नाशूँ ।
निज सहजात्म स्वरूप शक्ति से कर्म विनाशूँ ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ भद्रशालवनस्थित-पश्चिमदिक्‌जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचम स्वर्ण मेरु विद्युन्माली की भू पर ।
भद्रशाल वन उत्तर दिशि में है जिन मंदिर ॥
इक शत वसु बिम्बों को पूजूँ अर्घ्य चढ़ाऊँ ।
मोक्ष मार्ग पर आऊँ सर्व विभाव हटाऊँ ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ भद्रशालवनस्थित-उत्तरदिक्‌जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नंदन वन चार जिनालय

छंद - चौपई

विद्युन्माली नंदन वन । पूर्व दिशा अरहंत भवन ॥
जिन मंदिर अति उच्च महान। ज्ञानालोक मिले भगवान ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ नंदनवनस्थित-पूर्वदिक्‌ जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विद्युन्माली नंदन वन । दक्षिण दिशा जिनेन्द्र भवन ॥
जिन मंदिर अति उच्च महान। ज्ञानालोक मिले भगवान ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ नंदनवनस्थित-दक्षिणदिक्‌जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विद्युन्माली नंदन वन । पश्चिम दिशा जिनेन्द्र सदन ।
जिनगृह के जिनबिम्ब जजूँ। विषय वासना त्वरित तजूँ ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ नंदनवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

विद्युन्माली नंदन वन । उत्तर दिशि जिनराज भवन ॥
पूजूँ गाऊँ मंगल गान । निज पद पाऊँ जिन भगवान ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ नंदनवनस्थित-उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

सौमनस वन चार जिनालय

छंद गीतिका

सुगिरि पंचम सौमनस वन पूर्व में जिनवर भवन ।
भाव पूर्वक मैं चढ़ाऊँ अर्घ्य श्री जिनवर चरण ॥
भावना भव नाशिनी भाऊँ प्रभो यह शक्ति दो ।
मुक्ति पद जब तक न पाऊँ नाथ अपनी भक्ति दो ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ सौमनसवनस्थित-पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

सुगिरि पंचम सौमनस वन दिशा दक्षिण जिन भवन ।
भाव पूर्वक मैं चढ़ाऊँ अर्घ्य श्री जिनवर चरण ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ सौमनसवनस्थित-दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

सुगिरि पंचम सौमनस वन दिशा पश्चिम जिन भवन ।
भाव पूर्वक मैं चढ़ाऊँ अर्घ्य श्री जिनवर चरण ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ सौमनसवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

सुगिरि पंचम सौमनस वन दिशा उत्तर जिन भवन ।
भाव पूर्वक मैं चढ़ाऊँ अर्घ्य श्री जिनवर चरण ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ सौमनसवनस्थित-उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।

पान्डुक वन चार जिनालय

छंद - सोरठा

विद्युन्माली मेरु पान्डुक वन पूरव दिशा ।
वन्दूँ उर धर नेह रत्न जड़ित सिद्धायतन ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ पान्डुकवनस्थित-पूर्वदिक्‌जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विद्युन्माली मेरु पान्डुक वन दक्षिण दिशि ।
वन्दूँ उर धर नेह रत्नमयी जिनबिम्ब सब ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ पान्डुकवनस्थित-दक्षिणदिक्‌जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विद्युन्माली मेरु पान्डुक वन पश्चिम दिशा ।
वन्दूँ उर धर नेह शाश्वत जिन सिद्धायतन ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ पान्डुकवनस्थित-पश्चिमदिक्‌जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचम स्वर्ण सुमेरु पान्डुक वन उत्तर दिशा ।
वन्दूँ उर धर नेह शाश्वत जिन सिद्धायतन ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ पान्डुकवनस्थित-उत्तरदिक्‌जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - पंच चामर

ज्ञान चेतना की गंध सौख्य दायिनी महान ।
कर्म चेतना की गंध दुक्ख दायिनी प्रधान ॥
मोह की चुनौतियों का सामना करो अभी ।
मोह क्षीण दशा ही मोक्ष दायिनी सुजान ॥

छंद - सोरठा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ विद्युन्माली गेह ।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति का जागा उर में नेह ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशजिनालयस्थ एक हजार सात सौ अट्ठाईस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद - सरसी

समभावों की सामायिक से आप हुए भगवान ।
मैं भी ऐसी सामायिक से पाऊँ पद निर्वाण ॥

छंद - वीर

यह संसार असार विनश्वर क्षणभंगुर अशरण दुःखरूप ।
इन्द्रिय भोग विलास क्षोभ वैराग्यभावना ही सुखरूप ॥
जड़ चेतन के यथातथ्य निर्णय का साधन सामायिक ।
दर्शन ज्ञान चारित्र साधनामयी सुपावन सामायिक ॥
शंका कांक्षा विचिकित्सा अनउपगूहन मूढ़त्वरहित ।
अस्थितिकरण अवात्सल्य अप्रभावना विहीन समकित ॥
ज्ञान जाति कुल तप बल पूजा राज्यरूप मद से विरहित ।
छह अनायतन तीन मूढ़ता सर्व शल्य से हो वर्जित ॥
लोकेषणा सांसारिकता स्वच्छंदता संयमित हो ।
दीर्घ महत्त्वाकांक्षा विषमय अपने आप संतुलित हो ॥
प्राणिमात्र पर समभावों से परम अहिंसा विकसित हो ।
शुद्धात्मानुभूति की वीणा शुद्ध हृदय से झंकृत हो ॥
तज प्राणातिप्राणमय हिंसा मृषावाद से रहता दूर ।
ग्रहण अदत्ता दान न कर तज मैथुन त्याग परिग्रह क्रूर ॥
क्रोध मान माया लोभादिक रागद्वेष पैशून्य कलह ।
परपरिवाद अरति रति अभ्याख्यान मृषा माया बिन रह ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधी षोडश जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद - ताटंक

विद्युन्माली मेरु जिनालय सोलह पूजे विनय सहित ।
रत्नत्रय की परम कृपा से राग द्वेष से बनूँ रहित ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

श्री पुष्करार्ध विद्युन्माली चार गजदंत जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - वीर

विद्युन्माली हस्तिदंत सम चार सुगिरि गजदंत महान ।
विदिशाओं में ये सुस्थित हैं सब पर इक इक जिनगृह जान ॥
चार शतक बत्तीस श्रेष्ठ जिनबिम्ब रत्नमय शोभावान ।
इनके दर्शन करते ही जगता निज रवि तेज महान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधी चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधी चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधी चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - मानव

मोहादि भाव से तो प्रभु नाता न कभी भी तोड़ा ।
मिथ्यात्व भाव को मैंने हे स्वामी कभी न छोड़ा ॥
विद्युन्माली गजदंतों की मैं पूजन करता हूँ ।
चारों जिनगृह वन्दन कर पाँचों प्रत्यय हरता हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

रागादि गरल पी पीकर भव ज्वर की पीड़ा पायी ।
लाखों मुहूर्त खो डाले पर निज की सुधि ना आयी ॥
विद्युन्माली गजदंतों की मैं पूजन करता हूँ ।
चारों जिनगृह वन्दन कर पाँचों प्रत्यय हरता हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि. ।

प्रति क्षण विभाव ने घेरा मूर्छित ही सदा रहा हूँ ।
पर भावों के ही कारण भव सर में सतत बहा हूँ ॥
विद्युन्माली गजदंतों की मैं पूजन करता हूँ ।
चारों जिनगृह वन्दन कर पाँचों प्रत्यय हरता हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षय पदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

कामाग्नि जलाती क्षण क्षण निष्काम न होने देती ।
भव दुख कालुषता विषमय यह कभी न धोने देती ।
विद्युन्माली गजदंतों की मैं पूजन करता हूँ ।
चारों जिनगृह वन्दन कर पाँचों प्रत्यय हरता हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

जठराग्नि दुष्ट जलती है दुख सहता क्षुधा रोग का ।
निज स्वपद अनाहारी है दाता है ज्ञान भोग का ॥
विद्युन्माली गजदंतों की मैं पूजन करता हूँ ।
चारों जिनगृह वन्दन कर पाँचों प्रत्यय हरता हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोहाग्नि भस्म करती है मेरे स्वभाव को पल पल ।
निज ज्ञान दीप ज्योतित हो तो होता जीव समुज्ज्वल॥
विद्युन्माली गजदंतों की मैं पूजन करता हूँ ।
चारों जिनगृह वन्दन कर पाँचों प्रत्यय हरता हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

कर्माग्नि ज्वाल से व्याकुल प्रभु दुखिया सदा रहा हूँ।
निज ध्यान धूप को भूला भवोदधि के मध्य बहा हूँ॥
विद्युन्माली गजदंतों की मैं पूजन करता हूँ ।
चारों जिनगृह वन्दन कर पाँचों प्रत्यय हरता हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्ट कर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

जगदाग्नि जलाती आयी शाश्वत स्वभाव सुखदायी।
फल मोक्ष प्राप्त हो तो प्रभु नाशूँ यह भवदुखदायी॥
विद्युन्माली गजदंतों की मैं पूजन करता हूँ।
चारों जिनगृह वन्दन कर पाँचों प्रत्यय हरता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

भव ज्वाला में जल जल कर पदवी अनर्घ्य खोयी है।
निज गुणमय अर्घ्य न पाया निज की छवि ना जोयी है॥
उपशम श्रेणी चढ़ता हूँ तो झट नीचे गिर जाता।
क्षायिक श्रेणी चढ़ जाऊँ जो है शाश्वत सुखदाता॥
विद्युन्माली गजदंतों की मैं पूजन करता हूँ।
चारों जिनगृह वन्दन कर पाँचों प्रत्यय हरता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद - वीर

विद्युन्माली आग्नेय दिशि गिरि गजदंत रजतमय एक।
नाम सौमनस सप्त कूट में सिद्ध कूट पूजूँ सविवेक॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ-आग्नेयविदिशि सौमनसगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सुरगिरि की नैऋत्य दिशा में स्वर्णमयी गजदंत प्रसिद्ध।
विद्युत्प्रभ के नवकूटों में एक जिनालय अति सुप्रसिद्ध॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ-नैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विद्युन्माली के वायव्य कोण में गंधमादनाचल।
स्वर्णिम सप्त कूट में इक पर जिन चैत्यालय परमाचल॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ-वायव्यविदिशि गंधमादनाचल गजदन्त पर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विद्युन्माली की ईशान दिशा में माल्यवान गजदंत ।
है वैडूर्य सुमणि सम नव में एक कूट पर गृह अरहंत ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ-ईशानविदिशि माल्यवानगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

मत्त सवैया

कल तक तो था मैं अज्ञायक पर आज एक ध्रुव ज्ञायक हूँ।
कल तक तो सतत असंयत था पर आज हो गया संयत हूँ॥
जब सकल कर्म फल त्याग दिया तब हुआ सदा को मैं ज्ञायक।
बंधन से पूरा हुआ मुक्त पाकर अनंत गुणपति नायक ॥

छंद - दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ चारों गृह गजदंत ।
निज स्वभाव को प्राप्त कर हो जाऊँ भगवंत॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ चार सौ बत्तीस जिनबिम्बेभ्यो महाअर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद - सोरठा

विद्युन्माली मेरु गजदंतों के चार गृह ।
पूजे मैंने आज भाव भक्ति से हे प्रभो ॥

छंद - सार (जोगीरासा) (गौतम स्वामी वन्दूँ नामी)

निज परिणति के नयनों से चेतन के नयन मिले हैं।
तत्क्षण ही तो अन्तर्मन के कमल महान खिले हैं।
लिया कंठ से लगा सुचेतन को परिणति मुसकायी।
बोली बहुत दिनों के बाद सुचेतन निज सुधि आयी॥

मुझे मोह परिणति ने घेरा अतः तुम्हें बिसराया।
अब तुमको पाकर सचमुच में हुआ प्रसन्न सवाया॥
मोह अभाव हुआ है अब समकित का वैभव पाया।
संयम रथ भी आज अचानक मेरे द्वारे आया॥

चलो चलें हम मोक्षमार्ग पर बेला पायी पावन ।
गुण अनंत प्रगटे हैं उर में प्रतिभामय मन भावन ॥
मोह क्षीण हो रहा स्वयं ही यथाख्यात दरशाया ।
स्वपर प्रकाशक ज्ञान स्वयं ही हे प्रभु मैंने पाया ॥

सकल ज्ञेय झलके स्वज्ञान में दशा सर्वज्ञ मिली है ।
उर अरहंत अवस्था मेरी आकर स्वयं झिली है ॥
नयातीत पक्षातिक्रान्त हो गया सहज ही चेतन ।
सिद्ध दशा पायी पल भर में मुक्त हो गया धन धन ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुर्गजदंतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्य नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – वीर

विद्युन्माली गिरि गजदंत जिनालय मैंने पूजे चार ।
सैंतालीस शक्ति प्रगट कर हो जाऊँगा भव के पार ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

अब तो ऋषभनाथ लौ लागी

वीतराग मुद्रा दर्शन कर ज्ञान ज्योति डर जागी ॥ अब. ॥
ज्ञानानंदी शुद्ध स्वभावी निज परिणति अनुरागी ।
भव भोगन से ममता त्यागी भये नाथ वैरागी ॥ अब. ॥१॥

अष्टापद कैलाश शिखर से कर्म धूल सब त्यागी ।
अनुपम सुख निर्वाण प्राप्ति से भव बाधा सब भागी ॥ अब. ॥२॥

मेरो रोग मिटा दो स्वामी मैं अनादि को रागी ।
वीतरागता जागे उर में बन जाऊँ बड़ भागी ॥ अब. ॥३॥

श्री पुष्करार्ध विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – रोला

विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि वृक्ष जिनालय ।
दो सौ सोलह प्रतिमा पूजूँ लूँ निज आश्रय ॥
पश्चिम में स्वर्णिम सुमेरु है महिमाशाली ।
उत्तर कुरु में भोग भूमि उत्तर दिशि वाली ॥

है ईशान कोण में पुष्कर वृक्ष मनोहर ।
जिनगृह पृथ्वी कायिक तरु की शोभा उत्तर ॥
भोग सुभूमि देव कुरु दक्षिण दिशा जानिए ।
आग्नेय दिशि शाल्मलि तरु अति दिव्य मानिए ॥

तरु की दक्षिण शाखा पर जिन भवन मनोरम ।
जिनबिम्बों की पूजन का फल पाऊँ अनुपम ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद – सार (जोगी रासा)

महा मोह रिपु जय करने को प्रज्ञा जल निज लाऊँ ।
तीन लोक के दिव्य शिखर पर बिन बाधा चढ़ जाऊँ ॥

विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो तरु जिनगृह पूजूँ।
आस्रव बंध महादुखदायी से अब तो प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

अव्रत सारे क्षय कर डालूँ पंच महाव्रत पाऊँ।
अट्ठाईस मूल गुण धारूँ सम्यक् मुनि बन जाऊँ ॥
विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो तरु जिनगृह पूजूँ।
आस्रव बंध महादुखदायी से अब तो प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

अक्षत भाव हृदय में लाऊँ अक्षय पद उपजाऊँ।
भव समुद्र को तर कर स्वामी शाश्वत शिव सुख पाऊँ॥
विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो तरु जिनगृह पूजूँ।
आस्रव बंध महादुखदायी से अब तो प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

निष्कामी पद मेरा उलझा कामबाण के कारण।
शील भाव का किया निरादर पाया भवदुख दारुण॥
विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो तरु जिनगृह पूजूँ।
आस्रव बंध महादुखदायी से अब तो प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

क्षुधा रोग पर जय पाऊँ मैं सुचरु चढ़ा मन भावन।
तृप्त अनाहारी पद पाऊँ बन जाऊँ आनंदघन ॥
विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो तरु जिनगृह पूजूँ।
आस्रव बंध महादुखदायी से अब तो प्रभु धूजूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मोह भ्रान्ति के धुंधलेपन को मैंने कभी न नाशा।
केवल ज्ञान स्वरूप आपना अब तक नहीं विकासा॥
विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो तरु जिनगृह पूजूँ।
आस्रव बंध महादुखदायी से अब तो प्रभु धूजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

अष्ट कर्म की पीर सुहायी नाशी निज तरुणायी।
महा महिम निज ध्यान धूप की महिमा नाथ न भायी॥
विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो तरु जिनगृह पूजूँ।
आस्रव बंध महादुखदायी से अब तो प्रभु धूजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

महा मोक्ष फल पाने को प्रभु निज का ध्यान करूँगा।
कर्म आवरण सारे क्षय कर भवोदधि कष्ट हरूँगा॥
विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो तरु जिनगृह पूजूँ।
आस्रव बंध महादुखदायी से अब तो प्रभु धूजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य बनाऊँ निज भावों के पद अनर्घ्य प्रगटाऊँ।
अपनी शाश्वत निधि पाने को भव दुख सब विघटाऊँ॥
ज्ञानपयोनिधि मैं पाऊँगा रत्नत्रय उर धर कर।
बिना रुके शिवपुर जाऊँगा संयम रथ पर चढ़कर॥

विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि दो तरु जिनगृह पूजूँ।
आस्रव बंध महादुखदायी से अब तो प्रभु धूजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – उपजाति

पुष्कर सुतरु की शोभा महा लख।
जिनगेह पूजूँ सविनय प्रभो मैं।
रागादि भावों को नष्ट करके
पद वीतरागी पाऊँ सदा मैं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पुष्करवृक्षस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शाल्मलि सुतरु पर जिनगेह निरूपम।
सादर विनय से पूजन करूँ मैं॥
ज्ञानाब्धि में ही अब तो न्हवन् कर।
संसार सागर के दुख हरूँ मैं ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि शाल्मलिवृक्षस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महाअर्घ्य

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ पुष्कर शाल्मलि वृक्ष।
जिन चैत्यालय पूज कर होउँ निज में दक्ष ॥

छंद – मानव

सम्यग्दर्शन पाया है मिथ्यात्व भाव को हर के।
धरती स्वज्ञान की पायी अज्ञान भाव को हर के॥
सम्यक् चारित्र सु पाऊँ मैं एक देश संयम ले।
संयम की आभा पाऊँ अविरति प्रमाद को हर के॥

दृढ़ यथाख्यात को पाकर मैं मोह क्षीण थल पाऊँ।
अरहंत दशा पाऊँगा चारों कषाय को हर के॥
अब सिद्ध स्वपद पाना है अपने ज्ञायक के बल से।
मैं महा मोक्ष पाऊँगा त्रय योग दोष को हर के॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करतरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद – सरसी

एक समय की सामायिक में कितनी शक्ति भरी ।
अल्प काल में मुक्ति प्राप्त हो ऐसी युक्ति खरी ॥
पुण्य पाप से रहित ज्ञान का अनुभव सामायिक ।
शुभ भावों का राग न किंचित वह है सामायिक ॥

ज्ञान स्वरूप आत्मा के बिन कैसी सामायिक ।
राग द्वेष की छाया में कब होती सामायिक ॥
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरितमय अनुपम विमल तरी ।
एक समय की सामायिक में कितनी शक्ति भरी ॥

वीतराग विज्ञान ज्ञान का रस पीलो तत्काल ।
पाप पुण्य शुभ अशुभ आस्रव के हर डालो जाल ॥
समता का सागर निज में भर निज की करो संभाल ।
ध्रुव चैतन्य लक्ष में लेकर हरो जगत जंजाल ॥

वह सामायिक सच्ची जिसमें निज की भक्ति भरी ।
एक समय की सामायिक में कितनी शक्ति भरी ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि पुष्करशाल्मलितरुजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – वीर

विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजे नाथ ।
शुद्ध ज्ञान की महिमा पाकर तजूँ न तुव चरणों का साथ ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

श्री पुष्करार्ध विद्युन्माली मेरु सोलह वक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – सरसी

विद्युन्माली संबंधित सोलह वक्षार महान ।
पूर्व और पश्चिम विदेह में आठ आठ गृह जान ॥
सब पर एक एक जिन मंदिर स्वर्णिम शोभावान ।
रत्नबिम्ब सतरह सौ अट्ठाईस प्रसिद्ध प्रधान ॥
भाव सहित पूजन करता हूँ जय जिनेन्द्र भगवान ।
आत्मोत्थ सुख पाऊँ स्वामी दो आशीष महान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद – मत्त सवैया

भवदधि दुख पाए हैं अनंत भव सागर तल में डूबा हूँ ।
अपने स्वभाव से रहा विमुख भवदुख से कभी न ऊबा हूँ ॥
विद्युन्माली वक्षार सुगिरि सोलह जिनगृह की कर पूजन ।
अन्याय अनाचारों को तज अपने स्वरूप में रहूँ मगन ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

मिथ्यात्व मोह की छलना ने मेरे स्वभाव को छला सदा ।
सुख शान्ति न पाने दी मुझको भव अग्नि ज्वाल में जला सदा ॥

विद्युन्माली वक्षार सुगिरि सोलह जिनगृह की कर पूजन ।
अन्याय अनाचारों को तज अपने स्वरूप में रहूँ मगन ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

ज्ञानावरणीय आवरण ने गुण ज्ञान ढका मेरा नामी ।
दर्शन आवरणी ने भी प्रभु दर्शन गुण सर्व ढका स्वामी ॥
विद्युन्माली वक्षार सुगिरि सोलह जिनगृह की कर पूजन ।
अन्याय अनाचारों को तज अपने स्वरूप में रहूँ मगन ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षय पदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

साता व असाता वेदनीय अव्याबाधी सुख घातक है ।
कैसे इसको क्षय करूँ नाथ यह आस्रव सुत है पातक है ॥
विद्युन्माली वक्षार सुगिरि सोलह जिनगृह की कर पूजन ।
अन्याय अनाचारों को तज अपने स्वरूप में रहूँ मगन ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

मैं मोहनीय से ग्रसित सदा मोहान्धकार में जीता हूँ ।
सम्यक्त्व स्वचरु की महिमा से हे स्वामी अब तक रीता हूँ ॥
विद्युन्माली वक्षार सुगिरि सोलह जिनगृह की कर पूजन ।
अन्याय अनाचारों को तज अपने स्वरूप में रहूँ मगन ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

यह आयु कर्म है महा प्रबल चारों गति दुख का दाता है ।
जब आयु कर्म क्षय होता है तब पंचम गति सुख पाता है ॥
विद्युन्माली वक्षार सुगिरि सोलह जिनगृह की कर पूजन ।
अन्याय अनाचारों को तज अपने स्वरूप में रहूँ मगन ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

यह गोत्र कर्म ऊँचा नीचा कुल दुख देता आया स्वामी ।
नारक पशु कुल है नीच उच्च नर सुर कुल भी है दुखधामी ॥

विद्युन्माली वक्षार सुगिरि सोलह जिनगृह की कर पूजन।
अन्याय अनाचारों को तज अपने स्वरूप में रहूँ मगन॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

इस नाम कर्म के कारण प्रभु जड़ पुद्गल में निज छवि पायी।
मैं भ्रमा शरीर पंच धारण कर निज की सुधि भी बिसरायी॥
विद्युन्माली वक्षार सुगिरि सोलह जिनगृह की कर पूजन।
अन्याय अनाचारों को तज अपने स्वरूप में रहूँ मगन॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

यह अन्तराय दुख का समुद्र नव लब्धि न पाने देता है।
चौदहवें में क्षय होता है तब शाश्वत सुख जिय लेता है॥
विद्युन्माली वक्षार सुगिरि सोलह जिनगृह की कर पूजन।
अन्याय अनाचारों को तज अपने स्वरूप में रहूँ मगन॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – वीर

पुष्करार्ध की पश्चिम दिशि में विद्युन्माली मेरु महान।
मेरु पूर्व सीता सरिता के उत्तर तट वेदिका प्रधान॥
पूर्व विदेह सुभद्रशाल वेदी के निकट चार वक्षार।
एक एक गिरि चार कूट में सिद्ध कूट इक मंगलकार॥

सीता सरिता उत्तर तट चार वक्षार

चित्रकूट वक्षार स्वर्णमय पर जिन मंदिर प्रभा अपार।
विनय सहित प्रतिमाएँ वन्दूँ मन वच काय त्रियोग सँवार॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पद्मकूट वक्षार मनोरम जिन चैत्यालय अनुपम है ।
वन्दन करते ही क्षय होता महारोग मिथ्यातम है ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नलिन कूट वक्षार जिनालय स्वर्णिम एक शाश्वत है ।
जिनगृह ध्वज दर्शन करते ही हो जाता मस्तक नत है ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे नलिन कूटवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

एक शैल वक्षार कांचन द्युति मय पर जिन मंदिर है ।
रत्नमयी जिन बिम्बों से शोभित गर्भालय सुन्दर है॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे एकशैलकूट वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीता सरिता दक्षिण तट चार वक्षार

सीता सरिता के दक्षिण तट देवारण्य वेदिका पास ।
अति सुन्दर वक्षार चार हैं जिनपर हैं देवों का वास ॥
एक एक पर चार कूट हैं जिनमें एक कूट जिन धाम ।
जिनसे पूर्व विदेह क्षेत्र की शोभा है द्विगुणित अभिराम ॥
है चित्रकूट वक्षार अनोखा चार कूट से शोभावान ।
एक कूट पर जिन चैत्यालय बार बार में करूँ प्रणाम ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे त्रिकूट वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वैश्रवण वक्षार अनूठा सिद्धकूट है एक ललाम।
रत्नमयी प्रभु प्रतिमाओं को भक्तिपूर्वक करूँ प्रणाम ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतट वैश्रवण वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

है अंजन वक्षार स्वर्णमय एक कूट पर श्री जिन धाम।
एक शतक वसु जिनबिम्बों को विनयपूर्वक करूँ प्रणाम ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे अंजन वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

आत्मांजन वक्षार कनकमय जिन मंदिर शोभा से युक्त।
बार बार जिन प्रतिमा पूजूँ शुद्ध भाव से हो संयुक्त ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे आत्मांजन वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीतोदा सरिता दक्षिण तट चार वक्षार

पंचम सुरगिरि पश्चिम दिशि में है पश्चिम विदेह छविमान।
सीतोदा सरिता के दक्षिण भद्रशाल वेदिका महान ॥
इसके निकट चार वक्षारों पर हैं चार चार शुभ कूट।
इनमें इक इक सिद्धकूट लख मिथ्या भ्रम जाता है छूट ॥
जिनगृह से शोभित स्वर्णिम वक्षार नाम है श्रद्धावान।
दर्शन करते ही हो जाता तत्क्षण स्वपर भेद विज्ञान ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे श्रद्धावान वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

कनक प्रभा सम द्वितीय दिव्य वक्षार नाम है विजटावान।
चार कूट में एक कूट पर चैत्यालय वन्दूँ धर ध्यान ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे विजटावानवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीविष वक्षार स्वर्णमय सिद्धकूट पर जिन मंदिर।
जिन प्रतिमाएँ वन्दन कर रत्नत्रय धारूँ भवदुख हर ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे आशीविषवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

बारहवाँ वक्षार सुखावह सिद्धायतन श्रेष्ठ छविमय।
रत्नमयी जिनबिम्ब पूज कर निश्चय नय का लूँ आश्रय ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सुखावह वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

है पश्चिम विदेह अति पावन सीतोदा उत्तर तट पर।
वेदी भूतारण्य निकट है गिरि वक्षार चार मनहर ॥
स्वर्णमयी पर्वत हैं चारों चार चार कूटों से युक्त।
एक एक पर श्री जिन मंदिर रत्निम बिम्बों से संयुक्त ॥

सीतोदा सरिता उत्तर तट चार वक्षार जिनालय

चंद्रमाल वक्षार मनोहर सिद्धकूट पर श्री जिनधाम ।
एक शतक वसु प्रतिमाओं को विनय सहित मैं करूँ प्रणाम ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे चन्द्रमाल वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सूर्य माल वक्षार स्वर्णमय पर अरहंत देव का धाम ।
रत्नमयी श्री जिनबिम्बों को विनय सहित मैं करूँ प्रणाम ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमाल वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नागमाल वक्षार प्रभावी सिद्धायतन महान भवन ।
जिन पूजा का श्रेष्ठ महाफल पाऊँ मैं सम्यग्दर्शन ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे नागमाल वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देवमाल वक्षार जिनालय सोलहवें के कर दर्शन ।
निश्चय रत्नत्रय पाने का जागरुक हो करूँ यतन ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे देवमाल वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद – रोला

विद्युन्माली संबंधी वक्षार जिनालय ।
सोलह जिनगृह पूजूँ पाऊँ निज सिद्धालय ॥
मैं अपने परिणाम सँवारूँ निज में आऊँ ।
लौकिक सुख तज पूर्ण अलौकिक शिव सुख पाऊँ ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ गृह सोलह वक्षार ।
आत्म ध्यान की शक्ति से हो जाऊँ भव पार ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षोडशवक्षारजिनालयस्थ सतरह सौ अट्ठाईस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद - सोरठा

पूजे मैंने देव गृह सोलह वक्षार के।
हो जाऊँ निर्बंध यही भावना है प्रभो।

छंद - मानव

जिनवर की पूजन करके यह जीवन धन्य हुआ है।
निज शुद्धस्वरूप सुगिरि के आनन्द अनन्य हुआ है॥
पर्यायमूढ़ता से ही मैंने भवकष्ट उठाए।
निज के स्वरूप को भूला, भवबंधन नहीं मिटाए॥
भोगे अनंत दुःख मैंने इस जन्म मरण के द्वारा।
बस कर्माधीन रहा मैं संसार भ्रमण के द्वारा॥
मैं भावमरण करता हूँ प्रति समय मोह के द्वारा।
श्री गुरु की परम कृपा से अब सिमट रहा मिथ्यातम॥
ध्रुव द्रव्य आत्मा जाना सर्वोत्कृष्ट है अनुपम।
उत्पाद और व्यय युत है ध्रुव तत्त्व त्रिकाली सत् है॥
गुण पर्यायों से भूषित निज द्रव्य सदा शाश्वत है॥
पर्याय समयवर्ती है प्रतिसमय बदलती जाती।
ध्रुवधाम त्रिकाली अनुपम सहवर्ती गुण की थाती॥
ध्रुव का अवलंबन लेकर मैं द्रव्यदृष्टि पाऊँगा।
पर्यायदृष्टि को तजकर निज वैभव दमकाऊँगा॥
यह दृढ़ निश्चय है मेरा अब कौन रोक सकता है।
रत्नत्रय पथ पर हूँ मैं अब कौन टोक सकता है॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधी षोडश वक्षार जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

विद्युन्माली गिरि वक्षार जिनालय सोलह पूजे आज।
मैं अनादि हूँ मैं अखंड हूँ मैं अभेद हूँ जिनराज॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वादः

श्री पुष्करार्ध पश्चिम विद्युन्माली मेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन

स्थापना

वीर छंद

पुष्करार्ध की पश्चिम दिशि में विद्युन्माली मेरु महान ।
पूर्व और पश्चिम विदेह में सोलह सोलह गृह भगवान ॥
भरतैरावत एक एक है सब मिल कर जिनगृह चौंतीस ।
विनय सहित पूजन करता हूँ नाश करो भवदुख हे ईश ॥

तीन सहस छह शतक बहत्तर जिन प्रतिमाएँ शोभावान ।
''वत्थु सहावो धम्मो'' जानूँ करूँ स्वयं का मैं कल्याण ॥
ये चौंतीस जिनालय पूजूँ पंचम मेरु भव्य के पास ।
पंचम गति पाऊँ हे स्वामी नित प्रति करूँ तत्त्व अभ्यास ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - विजया

मोह की चाशनी ने बिगाड़ा मुझे, मेरा अस्तित्व विपदाओं से भर गया ।
मेरा अपना स्वभावी सहज शान्ति सुख अपनी भूलों के कारण स्वयं मर गया॥
विद्युन्माली के विजयार्ध चौंतीस हैं इनके जिन मंदिरों को मैं पूजूँ सदा ।
ज्ञान सम्यक् हो मेरे हृदय में सदा इसमें संशय का दोष न आए कदा ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

सर्वव्यापी तिमिर का विषम रस पिया शुद्ध गरिमामयी भावना उड़ गई।
रागद्वेषों की माया बढ़ी इस कदर वह निगोदों के जीवन से जा जुड़ गई॥
विद्युन्माली के विजयार्ध चौंतीस हैं इनके जिन मंदिरों को मैं पूजूँ सदा।
ज्ञान सम्यक् हो मेरे हृदय में सदा इसमें संशय का दोष न आए कदा॥
ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

मैंने झाँकी नहीं शुद्ध निज आत्मा मैंने प्रति पल विभावों का ही रस पिया।
घोर मिथ्यात्व में ही रहा मग्न मैं मैंने समकित स्वरस भी कभी ना पिया॥
विद्युन्माली के विजयार्ध चौंतीस हैं इनके जिन मंदिरों को मैं पूजूँ सदा।
ज्ञान सम्यक् हो मेरे हृदय में सदा इसमें संशय का दोष न आए कदा॥
ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

हो पुरुष फिर भी मैं तो नपुन्सक बना हो अकर्मण्य बैठा रहा मोह में।
आत्म अनुभव की बेला भी खोयी सदा मैं रहा लीन अपने ही निज द्रोह में॥
विद्युन्माली के विजयार्ध चौंतीस हैं इनके जिन मंदिरों को मैं पूजूँ सदा।
ज्ञान सम्यक् हो मेरे हृदय में सदा इसमें संशय का दोष न आए कदा॥
ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

मैं परम श्रेष्ठ संस्कृति को भूला सदा राग की रागिनी मैं बजाता रहा।
प्राण पण से न की चेष्टा एक क्षण इसलिए चारों गतियों में जाता रहा॥
विद्युन्माली के विजयार्ध चौंतीस हैं इनके जिन मंदिरों को मैं पूजूँ सदा।
ज्ञान सम्यक् हो मेरे हृदय में सदा इसमें संशय का दोष न आए कदा॥
ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मैं तो रहता असंयम की छाया में हूँ कभी करता नियंत्रण नहीं अपने पर।
दृष्टि पर्याय पर ही रही है सदा मात्र भिक्षुक बना फिर रहा दरबदर॥
विद्युन्माली के विजयार्ध चौंतीस हैं इनके जिन मंदिरों को मैं पूजूँ सदा।
ज्ञान सम्यक् हो मेरे हृदय में सदा इसमें संशय का दोष न आए कदा॥
ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

अगर मूल की भूल क्षय करता तो पुष्प रत्नत्रयी नाथ निश्चित ही पाता।
महा मोह भ्रम क्षीण करता सदा को यथाख्यात चारित्र का गीत गाता॥
विद्युन्माली के विजयार्ध चौंतीस हैं इनके जिन मंदिरों को मैं पूजूँ सदा।
ज्ञान सम्यक् हो मेरे हृदय में सदा इसमें संशय का दोष न आए कदा॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

स्वयं को निरख कर करूँ तत्त्व निर्णय तो संसार के सर्व भावों से रीतूँ।
स्व परिणति को सादर बुलाऊँ हृदय में तो पल भर में सारे विभावों को जीतूँ॥
विद्युन्माली के विजयार्ध चौंतीस हैं इनके जिन मंदिरों को मैं पूजूँ सदा।
ज्ञान सम्यक् हो मेरे हृदय में सदा इसमें संशय का दोष न आए कदा॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

सभी सिद्ध मुझको बुलाते निकट में बिठाते मुझे पास अपने सदा को।
निजानंद आनंदघन पूर्ण होता परम मोक्ष सुखपति मैं होता सदा को॥
त्रिलोकाग्र पर गूँजते गीत जय के विजयश्री की दुन्दुभि स्वपरिणति बजाती।
सहज मुक्ति कामिनि मुझे देखते ही अनंतों गुणों से मुझी को रिझाती॥
स्वयं शुद्ध होता स्वयं बुद्ध होता स्वयं शक्ति द्वारा स्वयं सिद्ध होता।
स्वयं का ही आनंद पाता स्वयं मैं स्वयं सर्व संसार अवरुद्ध होता॥
विद्युन्माली के विजयार्ध चौंतीस हैं इनके जिन मंदिरों को मैं पूजूँ सदा।
ज्ञान सम्यक् हो मेरे हृदय में सदा इसमें संशय का दोष न आए कदा॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अर्घ्यावलि

छंद – मरहठा माधवी

विद्युन्माली पूर्व और पश्चिम विदेह को जानिए।
इनमें हैं विजयार्ध रजत गिरि कुल बत्तीस प्रमाणिए॥
सीता सरि के दक्षिण उत्तर आठ आठ विजयार्घ हैं।
सीतोदा उत्तर दक्षिण भी आठ आठ वैताढ्य हैं॥

भरत और ऐरावत में भी एक एक विजयार्ध है।
मोक्ष सौख्य की प्राप्ति हेतु बस निश्चयनय भूतार्थ है॥

सीता उत्तर तट आठ विजयार्ध जिनालय

छंद - वीर

भद्रशाल वेदी सुनिकट सीता के उत्तर तट पर एक।
कच्छा देश मध्य रूपाचल जिनगृह पूजूँ मस्तक टेक॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे कच्छादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुकच्छा मध्य एक विजयार्ध जिनालय को वंदन।
आस्रव भावों का निरोध करने को लूँ संवर का धन॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महाकच्छा के भीतर रूपाचल पर जिन मंदिर।
भाव निर्जरा पाऊँ स्वामी तुव चरणों की पूजन कर॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे महाकच्छा देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश कच्छकावती रजत गिरि पर जिन चैत्यालय सुखकार।
जिनगृह पूजन करूँ विनय से हरूँ आस्रव भव दुखकार॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे कच्छकावती देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

आवर्ता है देश सुहाना गिरि विजयार्ध गेह पावन।
मृत्युंजयी जिनेश्वर की प्रतिमाएँ पूजूँ मन भावन॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे आवर्तादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश लांगलावर्त रजतगिरि श्री जिन चैत्यालय छविमान।
अरहंतों के द्रव्य और गुण पर्यायों को लूँ मैं जान॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे लांगलावर्ता देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पुष्कला गिरि विजयार्ध सुमंगलमय जिन भवन महान।
पर द्रव्यों से राग द्वेष तज निज स्वद्रव्य का हो बहुमान ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे पुष्कला देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पुष्कलवती मध्य वैताढ्य सुगिरि पर श्री जिनधाम।
भाव द्रव्य निर्जरा शक्ति से पाऊँ मैं निज में विश्राम ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे पुष्कलावती देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीता दक्षिण तट आठ विजयार्ध जिनालय

सीता सरि दक्षिण में देवारण्य निकट है वत्सा देश।
गिरि विजयार्ध जिनालय पूजूँ धारूँ शुद्ध दिगम्बर वेश॥९॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुवत्सा मध्य नमूँ विजयार्ध जिनालय कंचन सम।
दर्शन प्रतिमा ले ने के पहिले ही नाशूँ मिथ्यातम ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश महावत्सा में गिरि वैताढ्य जिनालय अकृत्रिम।
दर्शन कर विश्वास हो गया यह भव मेरा है अंतिम ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सा देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वत्सकावती मध्य में रूपाचल जिन भवन प्रणाम।
सम्यग्दर्शन पूर्वक ही व्रत पालूँ उत्तम श्रेष्ठ प्रधान॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावती देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रम्यादेश विदेह रजतगिरि जिन चैत्यालय करूँ नमन।
सामायिक प्रतिमा पालन कर समभावों में रहूँ मगन ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुरम्या मध्य श्रेष्ठ विजयार्ध चैत्यालय वन्दूँ ।
प्रोषध प्रतिमा पालन करके जिन चरणों को अभिनन्दूँ ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रमणीया के मध्य देश में है विजयार्ध जिनालय एक ।
प्रतिमा पाल सचित्त त्याग जिन बिम्बों को दूँ मस्तक टेक ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रमणीया देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश मंगलावती रजतगिरि मंगलमय पावन जिनधाम ।
रात्रि भुक्ति परित्याग पूर्वक जिनबिम्बों को करूँ प्रणाम॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावती देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीतोदा दक्षिण तट आठ विजयार्ध जिनालय

छंद सरसी

सीतोदा के दक्षिण तट पर भद्रशाल वनपास ।
है पश्चिम विदेह में धार्मिक चउ संघों का वास ॥
पद्मादेश सुमध्य रजतगिरि मंगल भवन जिनेश ।
नव कोटि से ब्रह्मचर्य व्रत पालन करूँ हमेश ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

देश सुपद्मा रजताचल पर गृह अरहंत महेश ।
लूँ प्रतिमा आरंभ त्याग मैं वन्दूँ सर्व जिनेश ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

देश महापद्मा रचताचल पूजूँ जिनगृह नाथ ।
धरूँ परिग्रह त्याग सुप्रतिमा मैं भी बनूँ सनाथ ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

देश पद्माकावती रचतगिरि जिनगृह स्वर्णमयी ।
अनुमति त्याग सुप्रतिमा पालूँ होऊँ ज्ञानमयी ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं..।

शंखादेश मध्य में है विजयार्ध शीष जिनगेह ।
ले उद्दिष्ट त्याग ग्यारहवीं प्रतिमा प्रभो सनेह ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

नलिनादेश महान सुगिरि विजयार्ध जिनालय एक ।
क्षुल्लक हो फिर ऐलक होऊँ जागे पूर्ण विवेक ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे नलिनदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

कुमुदादेश मध्य में है विजयार्ध जिनालय श्रेष्ठ ।
निरति चार प्रतिमा सब पालूँ तजूँ परिग्रह नेष्ठ ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे कुमुदादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

सरिता देश विदेह खंड छह आर्य खंड विजयार्ध ।
जिन मुनि हो निर्ग्रंथ बनूँ मैं लूँ निश्चय भूतार्थ ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सरितादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

सीतोदा उत्तर तट आठ विजयार्ध जिनालय

सीतोदा सरिता उत्तर तट भूतारण्य समीप ।
वसु विजयार्ध जिनालय पूजूँ जला ज्ञान का दीप ॥
वप्रादेश मध्य में हैं विजयार्ध जिनेन्द्र भवन ।
सब अरहंतों को वंदन कर पाऊँ मुक्ति सदन ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरदक्षिणतटे वप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

देश सुवप्रा मध्य रजत गिरि का चैत्यालय वंद्य ।
सब सिद्धों को वन्दन करके सदा करूँ आनंद ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरदक्षिणतटे सुवप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

देश महावप्रा में है विजयार्ध सुगिरि रजताभ ।
सब आचार्यों को वन्दूँ लूँ शुद्ध भाव का लाभ ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरदक्षिणतटे महावप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

देश वप्रकावती रजत गिरि नवकूटों में एक ।
सर्व उपाध्यायों को वन्दूँ जागे आत्म विवेक ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरदक्षिणतटे वप्रकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं..।

गंधादेश विदेह रजतगिरि उत्तम श्री जिनधाम ।
सर्व साधुओं को वंदन कर निज में करूँ विराम ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरदक्षिणतटे गंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

देश सुगंधा मध्य रजतगिरि शाश्वत चैत्यालय ।
जिनबिम्बों से युक्त नमूँ इक शत वसु गर्भालय ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरदक्षिणतटे सुगंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

देश गंधिला रूपाचल अभिनंदनीय जिनगेह ।
मंगलोत्तम शरण चार पाऊँ मैं निःसंदेह ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरदक्षिणतटे गंधिलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

गंधमालिनी देश एक विजयार्ध भव्य सुन्दर ।
पूजूँ वन्दनीय प्रतिमाएँ शाश्वत जिन मंदिर ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरदक्षिणतटे गंधमालिनी देशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं।

भरत क्षेत्र विजयार्ध जिनालय

पुष्करार्ध पश्चिम में विद्युन्माली मेरु महान ।
सुरगिरि दक्षिण भरत क्षेत्र है अतिशय शोभावान ॥
इसमें है विजयार्ध रजतमय जिस पर श्री जिनगेह ।
परम भक्ति से वन्दूँ पाऊँ ज्ञान सुधारस गेह ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि भरतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

पुष्करार्घ पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु महान ।
सुरगिरि के उत्तर में ऐरावत है क्षेत्र प्रधान ॥
इसमें है विजयार्ध रजतमय जिस पर श्री जिनगेह ।
परम भक्ति से वन्दूँ पाऊँ परमामृत रस मेह ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. ।

महार्घ्य

ताटंक

जिन शासन का अनुशासन ही एकमात्र मंगलकारी ।
महा मोह दुःशासन से बचना ही है निज हितकारी ॥
तुम अपने स्वभाव के शासक निज पर ही शासन करना।
सदा कुशासन से बचकर के बन जाना शिवमग चारी ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ चैत्यालय विजयार्ध ।
सिद्ध स्वपद की प्राप्ति की पूरी हो प्रभु साध ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि चतुस्त्रिंशत्विजयार्ध जिनालयस्थ तीन हजार छह सौ बहत्तर जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा ।

जयमाला

छंद – सोरठा

चौंतीसों जिनगेह पंचम गिरि विजयार्ध के ।
पूजे भक्ति प्रमाण सम्यग्दर्शन प्राप्ति हित ॥

छंद – विधाता

बहारें शीघ्र आएँगी जरा धीरज धरो चेतन ।
शुद्ध वैराग्य धारा से जरा अब तो जुड़ो चेतन ॥
तुम्हारा नाम चेतन है अचेतन से विलक्षण तुम ।
तुम्हीं चैतन्य गुणधारी निरख लो रूप निज चेतन ॥
अनंतों भव गँवा डाले चतुर्गति में भ्रमण करके ।
चरण पंचम स्वगति की ओर अब तो तुम धरो चेतन ॥

शुद्ध सम्यक्त्व की महिमा हृदय में पूर्ण ले आओ।
शुद्ध संयम के रथ पर ही जरा तो तुम चढ़ो चेतन॥
मोह रागादि विष रस से बचो अब तो सदा को ही।
विभावी भाव विष रस तज कर्म सारे हरो चेतन॥
ज्ञान गुण पास में है ही ध्यान अपना करो निर्मल।
मोक्ष फल शीघ्र पा लोगे करो पुरुषार्थ तो चेतन॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधीचतुस्त्रिंशत्‌विजयार्धजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

ताटंक

गिरि विजयार्ध जिनालय विद्युन्माली प्रभु पूजे चौंतीस।
वीतराग निर्ग्रंथ दिगम्बर मुद्रा धारूँ महा महीश॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वादः

卐

चलो रे भाई मोक्षपुरी–

गाड़ी खड़ी रे खड़ी रे तैयार चलो रे भाई मोक्षपुरी॥
सम्यक्‌दर्शन टिकट कटाओ, सम्यक्‌ ज्ञान संवारो।
सम्यक्‌ चरित की महिमा से आठों धर्म निवारों॥चलो रे. ॥१॥
अगर बीच में अटके तो सर्वार्थसिद्धि जाओगे।
तैतीस सागर एक कोटि पूरव वियोग पाओगे॥चलो रे. ॥२॥
फिर नर भव से ही यह गाड़ी तुमको ले जाएगी।
मुक्ति वधू से मिलन तुम्हारा निश्चित करवाएगी॥ चलो रे. ॥३॥
भव सागर का सेतु लांघकर यह गाड़ी जाती है।
जिसने अपना ध्यान लगाया उसको पहुंचाती है॥चलो रे. ॥४॥
यदि चूके तो फिर अनंत भव धर-धर पछताओगे।
मोक्षपुरी के दर्शन से तुम वंचित रह जाओगे॥चलो रे. ॥५॥

ॐ

श्री पुष्करार्ध विद्युन्माली मेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – वीर

विद्युन्माली मेरु षटकुलाचल जिन मंदिर पूजूँ आज ।
हिमवन तथा महाहिमवन निषधाचल दक्षिण दिशि जिनराज ॥
उत्तर में है नील सुगिरि अरु रुक्मि श्रेष्ठ शिखरी विख्यात ।
निज स्वभाव की ही महिमा है तीनों लोकों में प्रख्यात ॥

श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी देवी के यहाँ निवास ।
पद्मद्रह, अरु महापद्मद्रह, तिगिंच्छ केसरिद्रह जल राशि ॥
पुन्डरीक, महापुंडरीकद्रह कमल सुशोभित पृथ्वीकाय ।
श्री जिनवर की पूजन करके निज स्वरूप भज लूँ शिवदाय ॥

स्वर्णिम चैत्यालय में रत्निम प्रतिमा छह सौ अड़तालीस ।
भाव भक्ति से वन्दन करता हूँ मैं आज तुम्हें जगदीश ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद – वीर

सजल भाव श्रुत ज्ञान प्राप्त कर करूँ आत्मा का उद्धार ।
जन्मादिक त्रय रोग विनाशूँ हो जाऊँ स्वामी अविकार ॥

भव्य षटकुलाचल जिन चैत्यालय पूजूँ हो सम्यग्ज्ञान।
आस्रव को संवर से जीतूँ बंध निर्जरा से भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

श्रेष्ठ भाव श्रुत ज्ञान सुचंदन पाऊँ करूँ आत्म उद्धार।
भवाताप ज्वर पूर्ण विनाशूँ हो जाऊँ स्वामी अविकार ॥
भव्य षटकुलाचल जिन चैत्यालय पूजूँ हो सम्यग्ज्ञान।
आस्रव को संवर से जीतूँ बंध निर्जरा से भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

शुद्ध भाव श्रुत ज्ञान सुअक्षत पाऊँ करूँ आत्म उद्धार।
अक्षय पद की प्राप्ति करूँ मैं हो जाऊँ स्वामी अविकार ॥
भव्य षटकुलाचल जिन चैत्यालय पूजूँ हो सम्यग्ज्ञान।
आस्रव को संवर से जीतूँ बंध निर्जरा से भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षय पदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

शुद्ध भाव श्रुत ज्ञान पुष्प पा करूँ आत्मा का उद्धार।
महाशील गुण प्राप्त करूँ मैं हो जाऊँ स्वामी अविकार ॥

भव्य षटकुलाचल जिन चैत्यालय पूजूँ हो सम्यग्ज्ञान।
आस्रव को संवर से जीतूँ बंध निर्जरा से भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

शुद्ध भाव श्रुत ज्ञान सुचरु पा करूँ आत्मा का उद्धार।
पूर्ण अनाहारी बन जाऊँ हो जाऊँ स्वामी अविकार ॥

भव्य षटकुलाचल जिन चैत्यालय पूजूँ हो सम्यग्ज्ञान।
आस्रव को संवर से जीतूँ बंध निर्जरा से भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

दीप भाव श्रुत ज्ञान प्रजालूँ करूँ आत्मा का उद्धार ।
मोह तिमिर मिथ्यात्व नष्ट कर हो जाऊँ स्वामी अविकार ॥

भव्य षटकुलाचल जिन चैत्यालय पूजूँ हो सम्यग्ज्ञान ।
आस्रव को संवर से जीतूँ बंध निर्जरा से भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

शुद्ध भाव श्रुत ज्ञान धूप ले करूँ आत्मा का उद्धार ।
अष्ट कर्म विध्वंस करूँ प्रभु हो जाऊँ स्वामी अविकार ॥

भव्य षटकुलाचल जिन चैत्यालय पूजूँ हो सम्यग्ज्ञान ।
आस्रव को संवर से जीतूँ बंध निर्जरा से भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्ट कर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

शुद्ध भाव श्रुत ज्ञान सुफल पा करूँ आत्मा का उद्धार ।
महामोक्ष फल प्राप्त करूँ मैं हो जाऊँ स्वामी अविकार ॥

भव्य षटकुलाचल जिन चैत्यालय पूजूँ हो सम्यग्ज्ञान ।
आस्रव को संवर से जीतूँ बंध निर्जरा से भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

शुद्ध भाव श्रुत ज्ञान अर्घ्य पा करूँ आत्मा का उद्धार ।
पद अनर्घ्य अविलंब प्राप्त कर हो जाऊँ स्वामी अविकार ॥

दर्शन ज्ञान चारित्र तपो मय आराधना करूँ शिवकार ।
भवभावी वासना नष्ट कर नाशूँ कर्ममयी संसार ॥

भव्य षटकुलाचल जिन चैत्यालय पूजूँ हो सम्यग्ज्ञान ।
आस्रव को संवर से जीतूँ बंध निर्जरा से भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

दोहा

जिन मंदिर से सुसज्जित गिरि हिमवान प्रधान।
भाव सहित पूजन करूँ जय जय जय भगवान॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि हिमवानपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जिनगृह से है सुशोभित सुगिरि महा हिमवान।
पूजन करके हे प्रभो करूँ कर्म अवसान॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि महाहिमवानपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शोभित है जिनराज गृह निषध सुगिरि अतिभव्य।
मंगलमय जिन चरण नित वन्दूँ है मंतव्य॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि निघषपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नील सुगिरि जिनगेह को पूजूँ मन वच काय।
जानूँ छह सामान्य गुण करूँ ध्यान सुखदाय॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि नीलपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

रुक्मि श्रृंग जिनगेह को वन्दूँ शीष झुकाय।
चार अभाव सुजान लूँ जो हैं सौख्य प्रदाय॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि रुक्मिपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शिखरी पर्वत गेह जिन पूजूँ श्री भगवान।
षटकारक को जानकर करूँ आत्म कल्याण॥
ये ही सोलह गृह जानिए सोलह आने आप।
इन्हें प्राप्त कर नाशिए भव ज्वर का संताप॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि शिखरीपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद – ताटंक

शुद्ध ज्ञान की एक किरण पर तन मन धन हो न्योछावर।
यही शुद्ध समकित दाता है यही ज्ञान का है सागर॥
यही एक चारित्र भावना की पावन गंगा अमलान।
यही एक है मुक्ति प्रदायक परम श्रेष्ठ रत्नत्रय यान॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ गेह कुलाचल श्रेष्ठ।
भाव भासना के बिना जप तप संयम नेष्ठ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ छह सौ अड़तालीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद – ताटंक

सुखद स्वस्ति कर धर्मयान चढ़ मैं द्रुत गति से जाऊँगा।
गुणस्थान आरोहण क्रम से शुद्ध सिद्ध पद पाऊंगा॥
गुणस्थान मिथ्यात्व प्रथम में तो अनंत भवदुख होता।
तत्त्व बोधकर उपशम समकित ले चौथा अविरत होता॥
गिर कर तृतिय मिश्र में आ फिर दूजा सासादन होता।
नीचे गिर मिथ्यात्व प्रथम में फिर दुख का सागर होता॥
फिर पुरुषार्थ करूँ चौथे में सम्यग्दर्शन पाऊँगा।
सुखद स्वस्ति कर धर्मयान चढ़ मैं द्रुत गति से जाऊँगा॥
हुआ स्वरूपाचरण किन्तु है चरित मोह की कमजोरी।
पंचम देश विरत में लूँगा एक देश व्रत की डोरी॥
षष्टम महाव्रती बनते ही हो प्रमत्त मुनि दशा पवित्र।
सप्तम अप्रमत्त में झूला झूलूँगा मैं परम विचित्र॥
फिर मैं श्रेणी चढ़ने की तैयारी में लग जाऊँगा।
सुखद स्वस्ति कर धर्मयान चढ़ मैं द्रुत गति से जाऊँगा॥
अष्टम चढूँ अपूर्व करण परिणाम अपूर्व विमल होंगे।
नवम भाव अनिवृत्ति करण में परम भाव निर्मल होंगे॥

दशम सूक्षम सांपराय में सूक्ष्म लोभ का कण होगा।
ग्यारहवें उपशान्त मोह से निश्चित ही गिरना होगा॥
परिणामों की यह विचित्रता इसे दृष्टि में लाऊँगा।
सुखद स्वस्ति कर धर्मयान चढ़ मैं द्रुत गति से जाऊँगा।
फिर पुरुषार्थ बढ़ाऊँ श्रेणी क्षपक चढ़ूँ ऊपर जाऊँ।
अष्टम नव दशम से सीधा द्वादश मोह क्षीण पाऊँ॥
तत्क्षण चरित मोह को क्षयकर चार घातिया कर दूँ चूर्ण।
यथाख्यात चारित्र सुफल पा हो सर्वज्ञ दशा परिपूर्ण॥
राग नाश अन्तमुहूर्त में वीतराग बन जाऊँगा।
सुखद स्वस्ति कर धर्मयान चढ़ मैं द्रुत गति से जाऊँगा॥
त्रयोदशम में हो सयोग केवली बनूँ अरहंत महान।
चार अनंत चतुष्टय पाऊँ पाऊँ अनुपम केवल ज्ञान॥
चतुर्दशम में हो अयोग केवली ऊर्ध्व गति करूँ प्रयाण।
एक समय में मुक्ति धरा पा जाकर बनूँ सिद्ध भगवान॥
चौदह गुणस्थान से ऊपर सिद्ध चक्र को पाऊँगा।
सुखद स्वस्ति कर धर्मयान चढ़ मैं द्रुत गति से जाऊँगा।
ज्ञान दीप की शिखा प्रज्ज्वलित कर भवताप नशाऊँगा।
कर्मनाश की श्रेष्ठ प्रक्रिया को हर्षित अपनाऊँगा॥
पंचम भाव पारिणामिक से ध्रुव पंचम गति पाऊँगा।
श्री अरहंत केवली होकर स्वयं सिद्ध बन जाऊँगा॥
गुण श्रेणी निर्जरा भावना पल पल क्षण क्षण भाऊँगा।
सुखद स्वस्ति कर धर्मयान चढ़ मैं द्रुत गति से जाऊँगा।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि षट्कुलाचलजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – वीर

विद्युन्माली भव्य षटकुलाचल चैत्यालय पूजे आज।
सुन इष्टोपदेश अति पावन प्राप्त करूँगा निज पदराज॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वादः

श्री पुष्करार्ध विद्युन्माली मेरु संबंधी द्वय इष्वाकर जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - वीर

पुष्करार्ध विद्युन्माली से संबंधित दो इष्वाकार ।
इन दोनों पर दो चैत्यालय स्वर्णमयी हैं सुछवि अपार ॥
इनकी दो सौ सोलह जिन प्रतिमाएँ रत्नमयी मनहर ।
पर्वत कालोदधि तट से है मानुषोत्तर तक सुन्दर ॥

आठ लाख योजन लंबे हैं एक सहसयोजन विस्तार ।
चार शतक योजन ऊँचे हैं सुगिरि मनोहर इष्वाकार ॥
चार चार हैं सिद्धकूट प्रति पर्वत पर बहु शोभावान ।
एक एक पर श्री जिन मंदिर भव्य अकृत्रिम महिमावान ॥

विमल भावना पूर्वक पूजन करूँ श्री अरहंत जिनेश ।
दीपावलि सम जगमग जगमग ज्ञान जगाऊँ हृदय विशेष ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - ताटंक

आस्रव को जय करना है तो ज्ञान धनुर्धर बन जाओ ।
भव संग्राम भूमि में आस्रव को जय कर शिवसुख पाओ ॥

विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजो भाव सहित ।
त्रिविध रोग क्षय हेतु सदा को हो जाओ परभाव रहित ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

संज्ञ असंज्ञ आस्रव दोनों जीवों में होते उत्पन्न ।
चिदाभास हैं चिद्विकार हैं नहीं अन्य थल हों उत्पन्न ॥
विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजो भाव सहित ।
क्षय संसार ताप करने को हो जाओ पर भाव रहित ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

अविरति सम्यग्दृष्टि जीव को भी तो बंध नहीं होता ।
ज्यों ज्यों ये ऊपर चढ़ता है त्यों त्यों ये अबंध होता ॥
विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजो भाव सहित ।
अक्षय पद पाना है तो तुम हो जाओ पर भाव रहित ।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षय पदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

जब रागादि युक्त भाव होते तब बंधक होता जीव ।
जब रागादि मुक्त होता है तब बंधक होता न कदीव ॥
विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजो भाव सहित ।
काम बाण क्षय करना है तो हो जाओ परभाव रहित ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

गिरा डाल से पका हुआ फल फिर न डाल से जुड़ता है।
कर्म भाव जब खिर जाता है फिर न पुनः वह जुड़ता है ॥
विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजो भाव सहित ।
क्षुधा व्याधि जय करना है तो हो जाओ परभाव रहित ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

राग द्वेष मोहादि रहित जय ज्ञान रचित होते हैं भाव ।
तब कर्मों का प्रवाह रुकता प्रगटित होता शुद्ध स्वभाव ॥

विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजो भाव सहित ।
मोह तिमिर क्षय करना है तो हो जाओ परभाव रहित ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

दोनों ही आस्रव दुखदायी संवर द्वारा रुकते हैं ।
आस्रव जय कर्ता के चरणों में इन्द्रादिक झुकते हैं ॥

विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजो भाव सहित ।
अष्ट कर्म क्षय करना है तो हो जाओ परभाव रहित ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्ट कर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

शुद्ध ज्ञानमय एकमात्र ज्ञायक ही सतत निरास्रव है ।
ज्ञान चेतना का अधिपति है इसको रंच न आस्रव है ॥

विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजो भाव सहित ।
मोक्ष सुफल पाना है तो तुम हो जाओ परभाव रहित ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

क्षायोपशमिक ज्ञान है जब तक तब तक बुद्धि पूर्वक राग ।
यह तो होता नहीं ज्ञानी को है अबुद्धि पूर्वक राग ॥

अतः निरास्रव कहलाता है ज्ञानी ज्ञान भाव द्वारा ।
पूर्व बद्ध भी क्षय करता है अपनी ज्ञान शक्ति द्वारा ॥

विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजो भाव सहित ।
पद अनर्घ्य पाना है तो तुम हो जाओ परभाव रहित ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद - शार्दूलविक्रीड़ित

इष्वाकार महान श्रृंग दक्षिण उत्तम जिनालय सहित ।
लेकर के वसु द्रव्य शुद्ध प्रासुक पूजन करूँ सौख्य हित ॥
पाऊँ शाश्वत पूर्ण ज्ञान सागर पा ज्ञान धारा अमित ।
ध्याऊँ धर्म ध्यान उत्तम फिर शुक्ल ध्यानी बनूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि दक्षिणदिक्षु इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

इष्वाकार सुगिरि प्रसिद्ध उत्तर पूजूँ जिनालय परम ।
इकशत वसु जिनबिम्ब नाथ वन्दूँ अर्चन करूँ रात दिन ॥
सन्मुख मानस्तंभ श्रेष्ठ पूजूँ सत्यम् शिवम् सुन्दरम् ।
पाऊँ शुद्ध ज्ञान सूर्य केवल शुद्धात्मा में रहूँ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि उत्तरदिक्षु इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

महार्घ्य

छंद - वीर

समकित की ऊष्मा को पाकर मिथ्यातम गल जाए नाथ ।
भेदज्ञान उर में प्रगटित हो मोह सर्व जल जाए नाथ ॥
प्राप्त स्वरूपाचरण करूँ प्रभु इष्वाकार जिनालय पूज ।
निज पुरुषार्थ शक्ति के द्वारा पाऊँ मैं समकित की दूज ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ इष्वाकार जिनेन्द्र ।
दृढ़ प्रतीति उर में जगी मैं ही हूँ आत्मेन्द्र ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधि द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ दो सौ सोलह जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा ।

जयमाला

छंद - सोरठा

दोनों इष्वाकार पूजे मैंने भक्ति से ।
पाऊँ सौख्य अपार आत्म ज्ञान की शक्ति से ॥

छंद – दिग्पाल

चरणानुसारि द्रव्यम्, द्रव्यानुसारि चरणम् ।
सापेक्ष परस्पर है दोनों अपूर्व करणम् ॥
निज द्रव्य ज्ञानमय है, उपयोग ध्यानमय है ।
लक्षण है चेतनामय, अविरुद्ध ध्यान धरणम् ॥

श्रद्धान हो स्वयं का, सद्ज्ञान हो स्वयं का ।
चारित्र हो स्वयं का, चिद्रूप भूप शरणम् ॥
चैतन्यसूर्य अनुपम, सुख वीर्य ज्ञान दर्शम् ।
किंचित् नहीं है भ्रमतम, तारण महान तरणम् ॥

जो निज बिसारता है, आगम पुकारता है ।
वह जन्म धारता है, होता अवश्य मरणम् ॥
यह राग जब न होगा, संसार तब न होगा ।
सविकार फिर न होगा, जब हो स्वरूप वरणम् ॥

जब द्रव्यसिद्धि होगी, तब चरण सिद्धि होगी ।
जब चरण सिद्धि होगी, तब द्रव्यसिद्धि परिणम् ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधी द्वयइष्वाकारजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – वीर

विद्युन्माली दोनों इष्वाकार जिनालय पूजे आज ।
सब संकल्प विकल्प छोड़कर निर्विकल्प होऊँ जिनराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

श्री मानुषोत्तर पर्वत चार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - ताटंक

पुष्कर के दो खंड कर रहा मध्य मानुषोत्तर पर्वत ।
चारों दिशि में चार जिनालय रत्निम जिन प्रतिमा संयुक्त ॥
पर्वत सतरह सौ इक्कीस महायोजन ऊँचा सुविशाल ।
एक सहस बाईस योजन का सहज मूल विस्तार विशाल ॥

मध्य भाग में सात शतक तेईस योजन यह विस्तृत है ।
चार शतक चौबीस सुयोजन ऊपर में यह सुस्थित है ॥
चार शतक बत्तीस बिम्ब जिन मन वच काय त्रियोग सँवार ।
इनकी पूजन करूँ भाव से मनुज लोक सीमा इस पार ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - अवतार

भव सिन्धु दुखमयी पूर्ण, नाथ सुखाऊँगा ।
चारित्र शुद्धि से नाथ, शिवपद पाऊँगा ॥
मनुजोत्तर चार महान, जिन मंदिर वन्दूँ ।
आनंदामृत के हेतु, निज पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

चारित्र शुद्ध कर प्राप्त भव ज्वर दुख नाशूँ ।
संसार भाव हर नाथ निज द्युति परकाशूँ ॥
मनुजोत्तर चार महान जिन मंदिर वन्दूँ ।
आनंदामृत के हेतु निज पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारताप विनाशनाय चंदनं नि.।

चारित्र शुद्धि के पूर्ण अक्षत उर लाऊँ ।
अक्षय पद के ही हेतु निज को ही ध्याऊँ ॥
मनुजोत्तर चार महान जिन मंदिर वन्दूँ ।
आनंदामृत के हेतु निज पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् नि. ।

चारित्र शुद्धि के पुष्प शीलमयी लाऊँ ।
क्षय कामबाण की पीर करके सुख पाऊँ ॥
मनुजोत्तर चार महान जिन मंदिर वन्दूँ ।
आनंदामृत के हेतु निज पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि.।

चारित्र शुद्ध नैवेद्य अंतर में लाऊँ ।
परिपूर्ण तृप्त हो नाथ शिव सुख उपजाऊँ ॥
मनुजोत्तर चार महान जिन मंदिर वन्दूँ ।
आनंदामृत के हेतु निज पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

चारित्र शुद्ध के दीप ज्योतिर्मय लाऊँ ।
मोहान्धकार को नाश निज पद प्रगटाऊँ ॥
मनुजोत्तर चार महान जिन मंदिर वन्दूँ ।
आनंदामृत के हेतु निज पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

चारित्र शुद्ध की धूप ध्यानमयी लाऊँ ।
कर अष्ट कर्म विध्वंस शिव सुख तरु पाऊँ ॥
मनुजोत्तर चार महान जिन मंदिर वन्दूँ ।
आनंदामृत के हेतु निज पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं नि.।

चारित्र शुद्ध फल मोक्ष मैं जाकर पाऊँ ।
आनंद अतीन्द्रिय पूर्ण निज उर में लाऊँ ॥
मनुजोत्तर चार महान जिन मंदिर वन्दूँ ।
आनंदामृत के हेतु निज पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

चारित्र शुद्ध के अर्घ्य हे प्रभु भेंट करूँ ।
संसार व्याधि सम्पूर्ण मटियामेट करूँ ॥
जागे सम्यक् पुरुषार्थ निज को ही ध्याऊँ ।
परमामृत रस का स्वाद प्रभु प्रतिक्षण पाऊँ ॥
मनुजोत्तर चार महान जिन मंदिर वन्दूँ ।
आनंदामृत के हेतु निज पद अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

दोहा

मानुषोत्तर पूर्व दिशि चैत्यालय छविमान ।
एक शतक वसु विम्ब सब रत्नमयी भगवान ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तर पूर्वदिग्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मनुजोत्तर दक्षिण दिशा श्री जिन भवन महान।
भाव द्रव्य वसुद्रव्य ले पूजूँ श्री भगवान ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तर दक्षिणदिग्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मनुजोत्तर पश्चिम दिशा जिन मंदिर जिनबिम्ब।
शुद्ध भाव से पूज कर देखूँ निज प्रतिबिम्ब ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरपश्चिमदिग्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

मनुजोत्तर उत्तर दिशा चैत्यालय अतिभव्य।
भाव सहित पूजन करूँ पूरा हो मंतव्य ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरपर्वतउत्तरदिग्जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - ताटंक

अगर मुक्ति की इच्छा है तो सच्चा भाव लिंग धारो।
भाव द्रव्य संयम मय मुनि बन भव सागर दुख निरवारो ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ मानुषोत्तर गेह।
प्राप्त करूँ शुद्धात्म रस अब मैं निःसंदेह ॥

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ चार सौ बत्तीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

सोरठा

मानुषोत्तर गेह मैंने पूजे विनय से।
पाऊँ निज पद नेह सम्यग्दर्शन प्राप्त कर ॥

छंद - नवसरसी

माता मेरी जिनवाणी हैं पिता वीर भगवान।
समकित है मेरा भाई साथी है सम्यग्ज्ञान ॥

है मित्र हमारा सम्यक् चारित्र परम बलवान।
निज परिणति मेरी रानी अति सुन्दर शोभावान ॥
पर परिणति कुलटा दासी ने मुझे किया हैरान।
अपने स्वरूप को भूला मैं पर मैं आपा मान ॥

उपयोग चेतना लक्षण चैतन्य भावमय प्राण।
माता मेरी जिनवाणी हैं पिता वीर भगवान ॥

अब आज सुमति की बातें सुन लिया स्वयं को जान।
तत्त्वों के सम्यक् निर्णय से हुआ भेद विज्ञान ॥

मैं ज्ञाता दृष्टा चेतन परिपूर्ण ध्रौव्य विभुवान।
स्वामी अनंतगुण का हूँ सिद्धत्व निराली शान ॥

तीर्थंकर का लघु नंदन जिनवर की हूँ संतान।
माता मेरी जिनवाणी हैं पिता वीर भगवान ॥

चैतन्य पुंज अविनाशी टंकोत्कीर्ण गुणवान।
मैं सिद्धपुरी का वासी त्रिभुवनपति महामहान ॥

समता का सागर मेरे उर में बहता रसवान।
चैतन्य धातु से निर्मित आतम का करता ध्यान ॥

पावन रत्नत्रय लेकर शिवपथ पर किया प्रयाण।
माता मेरी जिनवाणी हैं पिता वीर भगवान ॥

इन्द्रादि चक्रवर्ती के वैभव का तनिक न मान।
यह तीन लोक की संपत्ति धूरा सम ली है जान ॥

निर्भार अतीन्द्रिय चिद्घन आनंदमूर्ति छविमान।
सुख बल युत सहजानंदी दर्शन मय ज्ञान निधान ॥

अपने स्वरूप का मुझको आया है निर्मल भान।
माता मेरी जिनवाणी हैं पिता वीर भगवान ॥

है शुद्ध भाव सुत मेरा आज्ञाकारी गुणवान।
परिवार यही है मेरा मैं लूँगा केवल ज्ञान ॥

पर्याय मूढ़ता छोड़ी ध्रुव पद है दृष्टि प्रधान।
किंचित् भी नहीं अधूरा हूँ परम पूर्ण श्रीमान ॥

शुद्धातम के आश्रय से पाऊँगा केवल ज्ञान।
माता मेरी जिनवाणी हैं पिता वीर भगवान ॥

अन्याय अनीति अभक्ष्यों की छोड़ी मैंने बान।
आत्मानुभूति के द्वारा करता अनुभव रस पान ॥

निज की वीणा पर गाता मैं छेड़ सुरीली तान।
निज के घुंघरू बजते हैं गाते हैं मंजुल गान ॥

पर भावों को त्यागा है त्यागा है विषय निदान।
माता मेरी जिनवाणी हैं पिता वीर भगवान।

निज आत्म शक्ति के बल से कर्मों का हो अवसान।
सारी जगती गाएगी समकित का जय जय गान ॥

अवसर अपूर्व पाया है अनुपम शिव पथ अभियान।
परमोत्कृष्ट मंगलमय बेला का है बहुमान ॥

अब सिद्ध शिला पर मेरा जाएगा निश्चित यान ॥
माता मेरी जिनवाणी हैं पिता वीर भगवान।

ॐ ह्रीं श्री मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – वीर

मानुषोत्तर चार जिनालय भक्ति भाव से पूजे आज।
मनुज लोक से त्रिलोकाग्र जा पाऊँगा मैं निज पदराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

ॐ

श्री अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर बावन जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - वीर

अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर महा मनोहर द्वीप महान ।
अष्टान्हिका पर्व में पूजन करते इन्द्र सुरादिक आन ॥
इक अंजनगिरि की चारों दिशि दधिमुख चार जिनालय ज्येष्ठ।
दधिमुख के दोनों कोनों पर एक एक रतिकर हैं श्रेष्ठ ॥
इस प्रकार इक दिशि में तेरह चारों दिशि में है बावन ।
अंजन गिरि हैं कृष्ण सुऊँचे चौरासी सहस्र योजन ॥
दधिमुख पर्वत श्वेत वर्ण के ऊँचे दस सहस्र योजन ।
रतिकर पर्वत लाल वर्ण के ऊँचे एक सहस्र योजन ॥
सभी ढोल सम गोल मनोहर इन्द्र सुरों को मन भावन ।
द्वीप एक सौ त्रेसठ कोटि लाख चुरासी है योजन ॥
बावन चैत्यालय की प्रतिमा पाँच सहस्र छह सौ सोलह ।
आत्म भावना भाते भाते मैं भी हो जाऊँ निस्पृह ॥
भाव भक्ति से विनय पूर्वक पूजन करता हूँ भगवान ।
आत्म ध्यान की महाशक्ति से मैं भी पाऊँ पद निर्वाण ॥

दोहा

नन्दीश्वर चारों दिशा बावन जिनगृह पूज ।
सम्यग्दर्शन हो हृदय मिले मुक्ति की दूज ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद – रोला

रत्नत्रय का नीर चढ़ाऊँ विमल भाव से ।
जुड़ जाऊँ मैं नाथ सदा को निजस्वभाव से ॥
अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर मैं हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो जाने का ही भाव जगाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

अविनाभावी चंदन दर्शन ज्ञानमयी लूँ ।
भव ज्वर नाशूँ जिन शिवपद निर्वाणमयी लूँ ॥
अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर मैं हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो जाने का ही भाव जगाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि. ।

अक्षय पद की प्राप्ति करूँ रत्नत्रय द्वारा ।
ज्ञान शस्त्र से अब प्रभु काटूँ भव दुखकारा ॥
अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर मैं हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो जाने का ही भाव जगाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

रत्नत्रय के पुष्प चढ़ाऊँ विनय सहित प्रभु ।
मैं पाऊँ निष्काम भाव से महाशील विभु ॥
अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर मैं हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो जाने का ही भाव जगाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. ।

साम्यभाव रस मय चरु लाऊँ ज्ञान भाव से ।
क्षुधा रोग विध्वंस करूँ बचकर विभाव से ॥

अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर मैं हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो जाने का ही भाव जगाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

रत्नत्रय के दीप जलाऊँ निज ज्योतिर्मय ।
मोह तिमिर मिथ्यात्व भाव को करूँ आज क्षय॥
अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर मैं हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो जाने का ही भाव जगाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

रत्नत्रय की धूप चढ़ाऊँ अष्ट कर्म हर ।
नित्य निरंजन शिवपद पाऊँ त्रिलोकाग्र पर ॥
अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर मैं हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो जाने का ही भाव जगाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

रत्नत्रय फल पाऊँ स्वामी महामोक्ष फल ।
मुक्ति महल में जाऊँ होऊँ परम समुज्ज्वल ॥
अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर मैं हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो जाने का ही भाव जगाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

रत्नत्रय के अर्घ्य चढ़ाऊँ परम ध्यानमय ।
पद अनर्घ्य प्रगटाऊँ अपना पूर्ण ज्ञानमय ॥
काय वचन मन क्रिया योग आस्रव दुखदायी ।
आस्रव प्रतिरोधक संवर ही है सुखदायी ॥
अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर मैं हो आऊँ ।
जा न सकूँ तो जाने का ही भाव जगाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

दोहा

नन्दीश्वर पूरव दिशा तेरह श्री जिनधाम ।
विनय सहित पूजन करूँ पाऊँ शिवसुख धाम ॥

पूर्व दिशा तेरह जिनालय

छंद – विष्णु पद

मन वच काया से वंदन कर पाऊँ निज आलय ।
पूर्व दिशा में अंजन गिरि पर श्री जिन चैत्यालय ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्-अंजनगिरिजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंजनगिरि की चार दिशा में चार वापिकायें ।
एक लाख योजन जल पूरित द्रह सम दिखलायें ॥
पूरव नंदा वापी दधि मुख चैत्यालय ध्याऊँ ।
जिन दर्शन से निज दर्शन कर प्रभु निज घर आऊँ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंद्वावापिकामध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नन्दावापी की ईशान दिशा में रतिकर है ।
उस पर शाश्वत जिन चैत्यालय अति ही सुन्दर है ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंद्वावापी-ईशानकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नन्दावापी आग्नेय दिशि में भी रतिकर है ।
भाव सहित मैं पूजूँ जिनगृह जो बहु मनहर है ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंद्वावापी-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

दक्षिण नंदवती वापी में दधिमुख गृह ध्याऊँ ।
श्री जिनवर की पूजन करके अब निज घर आऊँ ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदवतीवापिकामध्यस्थित दधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अग्निकोण में नंदवती वापी के रतिकर है ।
त्रिभुवन पूज्य जिनालय शाश्वत पावन दुखहर हैं ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदवतीवापी-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापी नंदवती नैऋत्य दिशा में है रतिकर ।
पर्वत पर जिनगृह में जिन प्रतिमाएँ हैं मनहर ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदवतीवापी-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नंदोत्तरा सुवापी पश्चिम दधिमुख पर्वत है ।
रत्नमयी बिम्बों से शोभित जिनगृह शाश्वत है ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदोत्तरावापिकामध्यदधिमुख पर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पश्चिम नंदोत्तरा वापी नैऋत्य कोण रतिकर ।
जिन मंदिर की पूजन कर लूँ भव्य भावना भा ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदोत्तरावापिकानैऋत्यकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापी नंदोत्तरा सुपश्चिम की वायव्य दिशा ।
रतिकर जिन मंदिर पूजन कर नाशूँ मोह निशा ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदोत्तरावापिकावायव्यकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

उत्तर में वापिका नंदि घोषा में दधिमुख है ।
जिन प्रभु की पूजन से मिलता स्वर्ग मोक्ष सुख है ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नन्दीघोषावापिकामध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

नंदी घोषा है वायव्य कोण में रतिकर पर्वत एक ।
एक अकृत्रिम जिन चैत्यालय पूजूँ मस्तक टेक ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नन्दीघोषा-वायव्यकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापी नंदी घोषा की ईशान दिशा सुप्रसिद्ध।
रतिकर पर्वत पर चैत्यालय है इक जगत प्रसिद्ध ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नन्दीघोषावापी-ईशानकोणे रतिकरपर्वत जिनालय जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

दक्षिण दिशा तेरह जिनालय

छंद - दोहा

नंदीश्वर दक्षिण दिशा नमूँ त्रयोदश गेह ।
विनय सहित वन्दन करूँ पाऊँ निज रस मेह ॥
नन्दीश्वर दक्षिण दिशा अंजन गिरि जिनधाम ।
वन्दन कर पाऊँ प्रभो निजपुर में विश्राम ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अंजनगिरि जिनालयजिन-बिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंजन गिरि के पूर्व में अरजा वापी मध्य ।
दधिमुख पर्वत के शिखर पूजूँ जिनगृह भव्य ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अरजावापिकामध्यदधिमुख पर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अरजा वापी सजल का कोण एक ईशान ।
रतिकर पर्वत प्रथम पर जिन मंदिर छविमान ॥१६॥

ॐ ह्रींश्रीनन्दीश्वरद्वीपेदक्षिणदिशिअरजावापिका-ईशानकोणेरतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अरजा वापी जानिए आग्नेय दिशि एक ।
दूजा रतिकर पूजिये जिन मंदिर सविवेक ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अरजावापिका-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंजन गिरि दक्षिण दिशा विरजा वापी मध्य ।
दधिमुख पर्वत पूजिए जिन गृह शोभित भव्य ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि विरजावापिकादधिमुखपर्वत स्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विरजा वापी जानिए आग्नेय दिशि कोण ।
रतिकर पहला पूजिये जिन चैत्यालय मौन ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि विरजावापिका-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विरजा के नैऋत्य में रतिकर द्वितीय सुलाल ।
श्री जिन भवन सुपूजिये सदा झुका निज भाल ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि विरजावापिका-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंजन गिरि पश्चिम दिशा वापी अशोका मध्य ।
दधिमुख पर्वत शिखर पर सिद्धायतन सुदिव्य ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अशोकावापिकामध्य दधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

इसी अशोका वापिका के नैऋत्य सुकोण ।
रतिकर पर जिनधाम है पूजूँ होकर मौन ॥२२॥

ॐ ह्रींश्रीनन्दीश्वरद्वीपेदक्षिणदिशि अशोकवापिका नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत स्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

इसी अशोका वापिका के वायव्य सुकोण ।
दूजा रतिकर जिन भवन पूजूँ होकर मौन ॥२३॥

ॐ ह्रींश्रीनन्दीश्वरद्वीपेदक्षिणदिशि अशोकवापिका वायव्यकोणे रतिकरपर्वत स्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंजन गिरि उत्तर दिशा दधिमुख पर्वत शीष ।
मध्य वीतशोका अचल पूजूँ त्रिभुवन ईश ॥२४॥

ॐ ह्रींश्रीनन्दीश्वरद्वीपेदक्षिणदिशि अंजनगिरि-उत्तरदिक्-अशोकवापिका मध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

वापि वीतशोका सलिल है सुकोण वायव्य ।
पहिला रतिकर श्रेष्ठ है पूजूँ देकर अर्घ्य ॥२५॥

ॐ ह्रींश्रीनन्दीश्वरद्वीपेदक्षिणदिशि अशोकवापिका वायव्यकोणे रतिकरपर्वत स्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वीतशोक ईशान में रतिकर द्वितीय महान ।
जिन चैत्यालय पूज कर करूँ आत्म कल्याण ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि वीतशोकवापिका ईशानकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पश्चिम दिशा तेरह जिनालय

छंद - ताटंक

नन्दीश्वर पश्चिम दिशा हैं तेरह जिन धाम ।
विनय सहित वन्दन करूँ पाऊँ निज ध्रुव धाम ॥
पहिले कृष्ण वर्ण अंजन गिरि के चैत्यालय को वंदन ।
एक शतक वसु जिन प्रतिमाओं को मैं सादर करूँ नमन ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अंजनगिरिजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजया वापी दधिमुख पर्वत दधि सम श्वेत श्रेष्ठ मनहर ।
दस सहस्र योजन ऊँचा गिरि इस पर शाश्वत जिन मंदिर ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अंजनगिरिविजयावापीमध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजयावापी के ईशान कोण में रतिकर पर्वत लाल ।
एक सहस्र योजन ऊँचा है इस पर जिनगृह है सुविशाल ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि विजयावापी-ईशानकोणे रतिकरपर्वत स्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

विजया वापी आग्नेय दिशि रतिकर पर्वत द्वितीय महान ।
इस पर जिन मंदिर में जिन प्रतिमाएँ मैं पूजूँ धर ध्यान ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि-विजयावापी-आग्नेयकोणे रतिकर पर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंजन गिरि के दक्षिण वापी सजल वैजयंतीं शुभ नाम ।
दधिमुख पर्वत से शोभित है इस पर वन्दूँ मैं जिनधाम ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि-अंजनगिरि-दक्षिणवैजयंतीवापी दधिमुखपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापि वैजयंती आग्नेय दिशा में है रतिकर पर्वत ।
जिनगृह में जिन प्रतिमा सन्मुख इन्द्रादिक सुर होते नत ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि वैजयंतीवापिका-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापि वैजयंती नैऋत्य कोण में दूजा रतिकर गेह ।
इन्द्रादिक सुर महापर्व में पूजन करते धर उर नेह ॥३३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि वैजयंतीवापिका-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

भव्य जयंती वापी अंजनगिरि के पश्चिम में उत्तम ।
दधिमुख पर्वत पर जिन मंदिर पूजत जाए भव विभ्रम ॥३४॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अंजनगिरि-पश्चिमजयंतीवापिका मध्यदधिमुखपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापी अमल जयंती के वायव्य कोण में नग रतिकर ।
दिव्य अकृत्रिम जिन चैत्यालय मैं भी पूजूँ भव भयहर ॥३५॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि जयंतीवापिका-वायव्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापी सजल जयंती के नैऋत्य कोण में रतिकर है ।
शाश्वत जिन प्रतिमाओं से संयुक्त श्री जिन मंदिर हैं ॥३६॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि जयंतीवापिका-नैऋत्यकोणे रतिकर पर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंजन गिरि उत्तर में वापी अपराजिता महान प्रसिद्ध ।
इसमें दधिमुख पर्वत पर शाश्वत जिन मंदिर हैं विशुद्ध ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अंजनगिरि-उत्तरादिअपराजिता वापिका मध्यदधिमुखपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापी अपराजिता दिशा वायव्य कोण में रतिकर लाल ।
अति सुन्दर है भव्य जिनालय पूजें सदा झुका निज भाल॥३८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अपराजितावापिका-वायव्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अपराजिता सुवापी की ईशान दिशा में रतिकर है ।
इस पर जिन मंदिर पूजूँ जो वन्दनीय है सुन्दर है ॥३९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अपराजितावापिका-ईशानकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रोला

अष्टम द्वीप श्री नंदीश्वर है अति पावन ।
उत्तर दिशि में तेरह जिनगृह हैं मन भावन ॥

उत्तर में अंजनगिरि पर्वत एक जिनालय ।
इसकी चारों दिशि में चार वापिका जलमय ॥
हर वापी के मध्य एक दधिमुख पर्वत है ।
वापी के दो कोणों पर इक इक रतिकर है ॥

छंद - सोरठा

अंजन गिरि है एक दधिमुख चार प्रसिद्ध हैं ।
रतिकर पर्वत आठ ये तेरह जिन धाम हैं ॥

उत्तर दिशा तेरह जिनालय

सोरठा

अष्टम द्वीप महान नंदीश्वर उत्तर दिशा ।
अंजन गिरि पर एक जिनगृह पूजूँ शाश्वत ॥४०॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रम्यावापी मध्य अंजन गिरि पूरव दिशा ।
दधिमुख पर्वत शीष पूजूँ श्री जिनगेह को ॥४१॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनागिरिपूर्वरम्यावापीमध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रम्यावापी कोण रतिकर है ईशान में ।
श्री जिन मंदिर एक भक्ति सहित नित पूजिए ॥४२॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रम्यावापी-ईशानकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रम्या वापी कोण आग्नेय रतिकर द्वितीय ।
पूजूँ श्री जिनबिम्ब अष्ट कर्म के नाश हित ॥४३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रम्यावापी-आग्नेयकोणेरतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रमणीया है नाम अंजन गिरि दक्षिण दिशा ।
दधिमुख श्वेत प्रधान राग नाश हित पूजिए ॥४४॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनगिरिदक्षिणदिकरमणीयावापिका दधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रमणीया आग्नेय रतिकर सुन्दर जानिए ।
शाश्वत श्री जिनधाम पूजूँ तत्त्व विचार कर ॥४५॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रमणीयावापिका-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

रमणीया नैऋत्य रतिकर जिनगृह वंदिये ।
समकित की निधि हेतु पूजूँ श्री जिनराज को ॥४६॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रमणीयावापिका-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद गीतिका

वापिका सुप्रभा पश्चिम दिशा अंजन गिरि सही ।
बीच दधिमुख तुंग श्री जिनगेह की महिमा कही ॥४७॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनगिरिपश्चिमदिक्-सुप्रभावापिका-मध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापिका सुप्रभा के नैऋत्य में रतिकर परम ।
हृदय से वन्दन करूँ मैं जिनालय पावन परम ॥४८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सुप्रभावापिकानैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

सुप्रभा के कोण में वायव्य दिशि जिन मंदिरम् ।
नाम रतिकर सुगिरि सुन्दर पर जिनालय है परम ॥४९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सुप्रभावापिकावायव्यकोणे रतिकरपर्वत स्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापिका सर्वतोभद्रा दिशा उत्तर अंजनम् ।
बीच दधिमुख श्वेत पर्वत पर नमूँ जिन मंदिरम् ॥५०॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनगिरि-उत्तरदिक्सर्वतोभद्रावापिका मध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापिका सर्वतोभद्रा कोण दिशि वायव्य का ।
अचल रतिकर पूज लूँ मैं अर्घ्य ले वसु द्रव्य का ॥५१॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सर्वतोभद्रावापिकावायव्यकोणे रतिकर पर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

वापिका सर्वतोभद्रा है दिशा ईशान के ।
गीत रतिकर गूंजते जय जय जिनेन्द्र महान के ॥५२॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सर्वतोभद्रावापिका-ईशानकोणे रतिकर पर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद - द्रुत विलंबित

सुवन चार दिशा नंदीश्वरम् । सकल बावन श्री जिन मंदिरम् ॥
सुगृह पूरव दक्षिण जानिए । दिशा पश्चिम उत्तर मानिए ॥
प्रति दिशा गेह त्रयोदशम् । है शिवम् सत्यम् सुन्दरम् ॥
सुवन चंपक आम्र सुसुन्दरम् । वन अशोक तथा सप्तच्छदम् ॥
सहज क्षीरोदधि जल निर्मलम् । विमल नंदनवन शुभ चंदनम् ॥
धवल अक्षत मेरु सुदर्शनम् । सहज पांडुक वन तरु पुष्पकम् ॥
सहज ज्ञानामृत रस चरु परम । विमल केवल ज्ञान सुदीपकम् ॥
सहज ध्यान सुधूप सुगंधनम् । सहज ज्ञान महाफल सुखकरम् ॥
जयति जय जय जय नंदीश्वरम् । जयति बावन जिन चैत्यालम् ॥
जयति श्री जिनवाणी मंगलम् । स्वपर भेद विज्ञान प्रकाशकम् ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ नन्दीश्वर जिनराज।
निज दर्शन करके प्रभो पाऊँ निज पदराज॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ पाँच हजार छह सौ सोलह जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

सोरठा

नन्दीश्वर जिनधाम बावन पूजे विनय सहित।
जागे आत्म स्वभाव मोक्ष मार्ग की प्राप्ति हित॥

छंद - दिग्वधू

शिवपथ पाया है तो काँटों से डरना क्या ।
रागों को जीता है तो जग में करना क्या ॥

समकित पाना है तो मिथ्या भ्रम को क्षय कर।
संयम धन पाते ही जड़ धन का करना क्या ॥

आनंद अतीन्द्रिय की धारा जब मिल जाए।
स्वर्गों के नश्वर सुख का भी फिर करना क्या ॥
अविरति को जीत लिया जीता प्रमाद दुखमय।
इन चउ कषाय का रस फिर उर में धरना क्या ॥

अब यथाख्यात पाया कर मोह क्षीण मैंने।
जब मोह हो गया क्षय तो भव में मरना क्या ॥
पक्षाति क्रान्त होकर जिय नयातीत होता।
जब निर्विकल्प हो तो जल्पों का करना क्या ॥

आत्मत्व भाव जागा जीवत्व भाव जागा।
जब कर्म मर चुका है तो इसको हरना क्या ॥
जब सिद्ध स्वपद पाकर त्रिभुवन को जीत लिया।
पद मुक्ति पुरी का पा त्रिभुवन का करना क्या ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टमद्वीपनन्दीश्वरसंबंधि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – वीर

अष्टम द्वीप श्री नंदीश्वर बावन जिनगृह पूजे आज।
सिद्ध शिला पर रहने का ही भाव जगा उर में जिनराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

श्री एकादशम द्वीप कुन्डलवर चार जिनालय

स्थापना

छंद - वीर

एक खरब अरु चार अरब पचासी कोटि छहत्तर लाख ।
है योजन विस्तार द्वीप कुन्डलवर का जिन आगम साख ॥
एकादशम द्वीप कुन्डलवर मध्य श्रेष्ठ पर्वत कुन्डल ।
इस पर चारों दिशि में चार जिनालय पूजूँ परमोज्ज्वल ॥
दूने कुन्डलवर समुद्र ने इसको घेरा है चहुँ ओर ।
जो भी सिद्ध हुए हैं उन सबको वन्दन है भाव विभोर ॥

छंद - वसंततिलका

आनंदघन स्वरूपी है द्रव्य मेरा ।
फिर भी बसा हुआ है संसार मन में ॥
जब तक विभाव भावों से मित्रता है ।
तब तक स्वभाव प्रगटित होगा न मेरा ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

छंद - विधाता

ज्ञान नभ से बरसता है शुद्ध आनंद रूपी जल ।
त्रिविध पीड़ा विनाशूँ मैं करूँ निज भाव धवलोज्ज्वल ॥
ग्यारहवाँ द्वीप कुन्डलवर जिनालय चार नित वन्दूँ ।
सदानंदी बनूँ हे प्रभु स्वभावी भाव अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

ज्ञानधारा विमल पाऊँ भवातप नाश करने को ।
चलूँ सन्मार्ग पर स्वामी विभावी भाव हरने को ॥
ग्यारहवाँ द्वीप कुन्डलवर जिनालय चार नित वन्दूँ ।
सदानंदी बनूँ हे प्रभु स्वभावी भाव अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

ज्ञान गंगोत्री का स्रोत मेरे मन को भाया है ।
स्वभावी भाव का सपना भी सच होने को आया है ॥
ग्यारहवाँ द्वीप कुन्डलवर जिनालय चार नित वन्दूँ ।
सदानंदी बनूँ हे प्रभु स्वभावी भाव अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षय पदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

काम के बाण बहु दुखमय अभी तक मैंने पाए हैं ।
सरस निजपुष्प भावों के मुझे अब रास आए हैं ॥
ग्यारहवाँ द्वीप कुन्डलवर जिनालय चार नित वन्दूँ ।
सदानंदी बनूँ हे प्रभु स्वभावी भाव अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

स्वभावी भाव रस नैवेद्य कैसे नाथ पाऊँगा ।
क्षुधा का रोग क्षय करने स्वबल कब उर सजाऊँगा ॥
ग्यारहवाँ द्वीप कुन्डलवर जिनालय चार नित वन्दूँ ।
सदानंदी बनूँ हे प्रभु स्वभावी भाव अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

ज्ञान के द्वीप ज्योतिर्मय अभी तक ना जलाए हैं ।
मोह विभ्रम विनाशूँ मैं न अवसर ऐसे पाए हैं ॥
ग्यारहवाँ द्वीप कुन्डलवर जिनालय चार नित वन्दूँ ।
सदानंदी बनूँ हे प्रभु स्वभावी भाव अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

ज्ञान की धूप लाऊँ मैं कर्म आठों नशाऊँ मैं।
विभावी भाव क्षय करके निजातम शुद्ध पाऊँ मैं ॥
ग्यारहवाँ द्वीप कुन्डलवर जिनालय चार नित वन्दूँ।
सदानंदी बनूँ हे प्रभु स्वभावी भाव अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्ट कर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

ज्ञानमय ध्यान फल पाऊँ मोक्ष फल सौख्य उर लाऊँ।
निजानंदी बनूँ स्वामी सहज सम भाव ही पाऊँ ॥
ग्यारहवाँ द्वीप कुन्डलवर जिनालय चार नित वन्दूँ।
सदानंदी बनूँ हे प्रभु स्वभावी भाव अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

ज्ञान के अर्घ्य मैं लाऊँ स्वपद पाऊँ अनर्घ्य अपना।
करूँ शुद्धात्म का चिन्तन करूँ संसार दुख सपना ॥
बंध के भाव क्षय करके निर्जरा भाव लाऊँ मैं।
पूर्व बंधों को क्षय करके शाश्वत मोक्ष पाऊँ मैं ॥
ग्यारहवां द्वीप कुन्डलवर जिनालय चार नित वन्दूँ।
सदानंदी बनूँ हे प्रभु स्वभावी भाव अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद – शिखरिणी

श्री कुन्डलगिरि की पूर्व दिशि को वन्दन करूँ।
जिनालय शाश्वत की अमित महिमा वर्णन करूँ ॥
बिम्ब इक शत वसु के अर्घ्य पद में अर्पण करूँ।
द्रव्य प्रासुक लेकर विनय युत मैं पूजन करूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरौ पूर्वदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

दिशा दक्षिण जिनगृह श्री कुन्डलगिरि भव्य है।
जिनालय शाश्वत इक पूर्णतः सुन्दर दिव्य है ॥

बिम्ब इक शत वसु के अर्घ्य पद में अर्पण करूँ ।
द्रव्य प्रासुक लेकर विनय युत मैं पूजन करूँ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरौ दक्षिणदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री कुन्डलगिरि की दिशा पश्चिम में जिन भवन ।
श्री जिनवर राजे अकृत्रिम शाश्वत को नमन ॥
बिम्ब इक शत वसु के अर्घ्य पद में अर्पण करूँ ।
द्रव्य प्रासुक लेकर विनय युत मैं पूजन करूँ ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरौ पश्चिमदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री कुन्डलगिरि पर दिशा उत्तर में जिन भवन ।
इन्द्र सुर हर्षित हो सदा करते शिर नमन ॥
बिम्ब इक शत वसु के अर्घ्य पद में अर्पण करूँ ।
द्रव्य प्रासुक लेकर विनय युत मैं पूजन करूँ ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरौ उत्तरदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

महार्घ्य

छंद – ताटंक

धर्म ध्यान की युक्ति यही है शुक्ल ध्यान का ये ही स्रोत।
ये ही श्रेणी क्षपक प्रदाता यथाख्यात से ओत-प्रोत॥
ये ही पद सर्वज्ञ प्रदाता ये ही देता पद अरहंत ।
ये ही सिद्ध स्वरूप प्रदायक यही बनाता है भगवंत॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ कुन्डलवर गृह चार ।
भक्ति भाव है हृदय में मेरे अपरंपार ॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ चार सौ बत्तीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद – सोरठा

कुन्डलगिरि पर चार हैं जिन भवन अकीर्तम ।
पूजे मैंने आज मोक्ष प्राप्ति के हित प्रभो ॥

छंद – विजया

विभावों के मेले में तुम निज को भूले,
भटकते चतुर्गति के चक्कर में हर दम।
न निज भूल तुमने सुधारी अभी तक,
न बचने का इससे किया आज तक श्रम॥
अगर तत्व निर्णय का पुरुषार्थ करते,
तो सम्यक्त्व की ज्योति मिलती अनूठी।
स्वपरिणति तुम्हारी तुम्हें आ जगाती,
पिलाती तुम्हें ज्ञान भावों की बूटी॥
तुरत जाग जाते तुम अँगड़ाई लेकर,
बढ़ाते चरण मोक्ष के श्रेष्ठ पथ पर।
सुसज्ञित हो रत्नत्रय भूषण से चेतन,
निमिष में ही चलते तुम संयम के रथ पर॥
कुचलते कषायों की सारंगियों को,
यथाख्यात की बीन तुम ही बजाते।
महा मोह को क्षीण करते जरा में,
स्वपद श्रेष्ठ अरहंत उर में सजाते॥
सभी सिद्ध तुमको बुलाते निकट निज,
बिठाते तुम्हें पास अपने सदा को।
निजानंद आनंदघन पूर्ण होते,
महा मोक्ष सुख पाते फिर तुम सदा को॥

ॐ ह्रीं श्री एकादशंकुन्डलवरद्वीपसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – वीर

ग्यारहवें कुन्डलवर द्वीप जिनालय सादर पूजे आज।
भोगों को सम्पूर्णतया क्षय कर के पाऊँ निज पद राज॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान॥

इत्याशीर्वादः

श्री त्रयोदशम रुचकवर चार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - वीर

त्रयोदशम है द्वीप रुचकवर मध्य रुचक गिरि वलयाकार।
स्वर्णमयी अति सुन्दर पर्वत स्वर्णिम चहुँ दिशि मंदिर चार॥
सोलह खरब सतत्तर अरब बहत्तर कोटि सु सोलह लाख।
है योजन विस्तार द्वीप का मध्य लोक जिनआगम साख॥
रुचक वासिनी दिक्कुमारियाँ गिरि कूटों पर करतीं वास।
रहतीं श्री जिन गर्भ पूर्व से जन्म समय तक माता पास॥
इसको घेरे हुए समुद्र रुचक वर है दूना विस्तार।
भाव सहित पूजन करता हूँ मन वच काय त्रियोग संवार॥

छंद - वसंततिलका

पर्याय दृष्टि जिसकी संसार उसका।
है लीन मोह मद में दुखिया वही है॥
है द्रव्य दृष्टि जिसकी वह मोक्ष मार्गी।
ध्रुव धाम पास में है सुखिया वही है॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद – विजात

मैं साम्यभावी स्वभाव रस से करूँगा पूजन प्रभो तुम्हारी।
स्वरूप मेरा महामहिम है परम प्रभामय स्वज्ञान धारी॥

त्रयोदशम है ये द्वीप सुन्दर सुगिरि रुचकवर के चार जिनगृह ।
करूँ मैं वन्दन जिनेश्वरों को बनूँ हे स्वामी सदा को निस्पृह ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

मैं साम्यभावी स्वभाव चंदन चरण चढ़ाऊँ विनय से स्वामी ।
भवातपी भव का रोग हर के सदा को समभावी होऊँ नामी ॥
त्रयोदशम है ये द्वीप सुन्दर सुगिरि रुचकवर के चार जिनगृह ।
करूँ मैं वन्दन जिनेश्वरों को बनूँ हे स्वामी सदा को निस्पृह ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

मैं साम्यभावी स्वभाव अक्षत की महिमा पाऊँ सुनो जिनेश्वर ।
महान अक्षय स्वपद मिले प्रभु है भावना यह महा महेश्वर ॥
त्रयोदशम है ये द्वीप सुन्दर सुगिरि रुचकवर के चार जिनगृह ।
करूँ मैं वन्दन जिनेश्वरों को बनूँ हे स्वामी सदा को निस्पृह ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षय पदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

मैं साम्यभावी सुपुष्प लाऊँ चरण में अर्पित करूँ परम प्रभु ।
स्वपद स्वगुणमय निष्काम पाऊँ ये काम पीड़ा हरूँ महाप्रभु ॥
त्रयोदशम है ये द्वीप सुन्दर सुगिरि रुचकवर के चार जिनगृह ।
करूँ मैं वन्दन जिनेश्वरों को बनूँ हे स्वामी सदा को निस्पृह ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

मैं साम्यभावी स्वभाव रस मय सुचरु बनाऊँ तुम्हें चढ़ाऊँ ।
क्षुधा की पीड़ा सदा को नाशूँ स्वमुक्ति पथ पर चरण बढ़ाऊँ ॥
त्रयोदशम है ये द्वीप सुन्दर सुगिरि रुचकवर के चार जिनगृह ।
करूँ मैं वन्दन जिनेश्वरों को बनूँ हे स्वामी सदा को निस्पृह ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

मैं साम्यभावी स्वभाव दीपक की ज्योति पाऊँ प्रभो ये वर दो।
विनाश कर दूँ मैं मोहतम को स्वज्ञान रवि का प्रकाश भर दो ॥
त्रयोदशम है ये द्वीप सुन्दर सुगिरि रुचकवर के चार जिनगृह।
करूँ मैं वन्दन जिनेश्वरों को बनूँ हे स्वामी सदा को निस्पृह ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

मैं साम्यभावी स्वधूप लाऊँ स्वभाव अपना प्रगट करूँ प्रभु।
मैं अष्ट कर्मों के पर्वतों को स्वध्यान बल से विघट करूँ विभु ॥
त्रयोदशम है ये द्वीप सुन्दर सुगिरि रुचकवर के चार जिनगृह।
करूँ मैं वन्दन जिनेश्वरों को बनूँ हे स्वामी सदा को निस्पृह ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्ट कर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

मैं साम्यभावी स्वभाव फल पा बनूँगा आनंदघन जिनेश्वर।
बनूँगा ज्ञानाधिराज अब मैं स्वभाव से ही हूँ आत्मेश्वर ॥
त्रयोदशम है ये द्वीप सुन्दर सुगिरि रुचकवर के चार जिनगृह।
करूँ मैं वन्दन जिनेश्वरों को बनूँ हे स्वामी सदा को निस्पृह ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं नि.।

मैं साम्यभावी अनर्घ्य पद का बनूँगा स्वामी स्वयं को ध्या कर।
स्वसिद्धपुर का बनूँगा अधिपति स्वभाव भावों के पास जाकर ॥
स्वभाव के ही भवन बनाकर स्वभाव का ही करूँगा चिन्तन।
विभाव गृह में न अब रहूँगा न अब करूँगा मैं कर्म बन्धन ॥
त्रयोदशम है ये द्वीप सुन्दर सुगिरि रुचक वर के चार जिनगृह।
करूँ मैं वन्दन जिनेश्वरों को बनूँ हे स्वामी सदा को निस्पृह ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

अर्घ्यावलि

छंद - पद्धटिका (त्रोटक)

दिशि पूर्व रुचक गिरि गृह महान। यह अर्घ्य समर्पित गुण निधान॥
जय देव सुदेव जिनेन्द्र प्रभो। भव तारण तरण महान विभो ॥

शुद्धात्म स्वरूप प्रकाश करो। मम सकल विभाव विनाश करो ॥
मैं भी तुव पथ पर आऊँ प्रभु। परमात्म परम पद पाऊँ विभु ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौपूर्वदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद – झूलना

जिनराज प्रभु पावन परम जिनगेह में छविमान ।
रुचक गिरि दक्षिण दिशा जिनवर जपूँ धर ध्यान ॥
प्रभु ज्ञान रवि चैतन्य चिन्तामणि सुदेव प्रधान ।
जिन शरण पाकर आज ही मैं लहूँ सम्यग्ज्ञान ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौदक्षिणदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद – श्रृंगार

दिशा उत्तर गिरि रुचक प्रधान। जिनालय स्वर्णिम श्री भगवान ॥
चढ़ाऊँ अर्घ्य विनय गुण रूप। प्राप्त कर लूँ शुद्धात्म स्वरूप ॥
पूर्ण समकित है निज श्रद्धान। यही है उत्तम सम्यग्ज्ञान ॥
यही सम्यक् चारित्र महान। प्राप्त हो मुझको हे भगवान ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ पश्चिमदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद – सवैया

द्वीप रुचक वर उत्तर दिशि जिनगेह की पूजाकर हर्षाऊँ ।
आगम को अभ्यास करूँ नित प्रभु अज्ञान दशा विघटाऊँ ॥
समकित सन्मुख होकर जिनेश्वर तुरतहि सम्यग्दर्शन पाऊँ ।
नाश करूँ मिथ्यात्व महातम चरित स्वरूपाचरण सुपाऊँ ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ उत्तरदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

महार्घ्य

छंद – ताटंक

अपने अपने भावों का ही फल पाता है यह प्राणी ।
अपने अपने परिणामों से होता ज्ञानी अज्ञानी ॥

शुभ भावों से शुभ फल मिलता अशुभ भाव से सदा अशुभ।
शुद्ध भाव से सतत शुद्ध फल मिलता है शिव सुखदाती ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ रुचक सुगिरि गृह चार।
शुद्धात्मा का ध्यान कर संयम लूँ उर धार ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ चार सौ बत्तीस जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

सोरठा

द्वीप रुचक गिरि चार जिन चैत्यालय पूज कर।
सिद्ध समान स्वरूप जान लिया है हे प्रभो ॥

छंद – सरसी

आज विजय का पर्व अनूठा मंगलमय सुखकार।
दर्श मोह को जीता मैंने छाया हर्ष अपार ॥

सप्त तत्त्व की श्रद्धा जागी जागी निज की प्रीत।
अनंतानुबंधी को जय कर लिया विश्व को जीत ॥

भेद ज्ञान का वैभव पाया सुना आत्म संगीत।
स्वपर विवेक जगा अंतर में पर परिणति भयभीत ॥

इष्ट अनिष्ट सुहाती समता वस्तु स्वरूप विचार।
आज विजय का पर्व अनूठा मंगलमय सुखकार ॥

हिंसा झूठ कुशील परिग्रह सभी हुए बेकार।
न्याय नीति को जाना मैंने किया आत्म श्रृंगार ॥

विषय वासना की छलनाएँ हुईं क्षणिक में क्षार।
तीव्र कषाय भाव का मैंने किया पूर्ण परिहार ॥

कुमति पिशाचिन भागी घर से गाती सुमति मल्हार।
आज विजय का पर्व अनूठा मंगलमय सुखकार ॥

प्रकट स्वरूपाचरण हुआ है ज्यों चंदा की कोर।
ज्ञान दूज पायी है मैंने चलूँ पूर्णिमा ओर ॥

निज परिणति संग नाचूँ गाऊँ चले न पर का जोर।
पावन समकित शीतल चंदन का गूँजा है शोर ॥

भव का अंत निकट आया अब बूँद मात्र संसार।
आज विजय का पर्व अनूठा मंगलमय सुखकार ॥

परम शान्ति उर में छायी है पाया सत्य स्वरूप।
नाश हुआ मिथ्यात्व सदा को लखा शुद्ध तप रूप ॥

रागादिक पुद्गल विकार से मैं हूँ भिन्न अनूप।
ध्रुव चैतन्य स्वभावी हूँ मैं तो त्रिभुवन का भूप ॥

मुक्ति वधू ने आमंत्रण दे गाए मंगलचार ॥
आज विजय का पर्व अनूठा मंगलमय सुखकार।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशंद्वीपरुचकवरसंबंधि चतुर्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

आशीर्वाद

छंद – वीर

द्वीप रुचकवर तेरहवें के चार जिनालय पूजे आज।
क्षायिक श्रेणी के ऊपर चढ़ मोह क्षीण कर दूँ जिनराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

ॐ

श्री ऊर्ध्व लोक चैत्यालय पूजन

स्थापना

छंद - ताटंक

ऊर्ध्व लोक पर स्वर्गादिक में अकृत्रिम चैत्यालय हैं।
लाख चुरासी सहस संतानवे तेईस स्वर्ण जिनालय हैं॥
प्रतिमा इक्यानवे कोटि अरु लाख चौहत्तर जोड़ विख्यात।
सहस अठत्तर चार शतक चौरासी बिम्ब महा विख्यात॥
इन्द्रादिक सुर भक्ति भाव से इनको वन्दन करते हैं।
अपने अपने दिव्य विमानों में नित पूजन करते हैं॥
हम तो मध्य लोक में रहते अतः यहीं से वन्दन कर।
विनय सहित पूजन करते हैं अंतर की कालुषता हर॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

छंद - रोला

भवसागर सम्पूर्ण सुखाऊँ त्रिविध रोग हर।
रत्नत्रय रूपी जल लाऊँ व्रत संयम धर॥
ऊर्ध्व लोक के सकल अकृत्रिम जिन चैत्यालय।
विनय भक्ति से वन्दूँ स्वामी करूँ राग जय॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भव पीड़ा का नाश करूँगा ज्ञान भाव से ।
भव ज्वर नाशूँगा अपने निर्मल स्वभाव से ॥
ऊर्ध्व लोक के सकल अकृत्रिम जिन चैत्यालय ।
विनय भक्ति से वन्दूँ स्वामी करूँ राग जय ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि.।

अक्षय पद पाऊँ मैं उत्तम शुद्ध भाव से ।
भव समुद्र को पार करूँ मैं निज स्वभाव से ॥
ऊर्ध्व लोक के सकल अकृत्रिम जिन चैत्यालय ।
विनय भक्ति से वन्दूँ स्वामी करूँ राग जय ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. ।

काम बाण की व्याधि मिटाऊँ आत्म शक्ति से ।
भाव पुष्प अर्पित करता हूँ परम भक्ति से ॥
ऊर्ध्व लोक के सकल अकृत्रिम जिन चैत्यालय ।
विनय भक्ति से वन्दूँ स्वामी करूँ राग जय ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

निश्चय व्यवहाराभासी चरु अब न बनाऊँ ।
क्षुधा रोग क्षय हित अनुभव रस सुचरु चढ़ाऊँ ॥
ऊर्ध्व लोक के सकल अकृत्रिम जिन चैत्यालय ।
विनय भक्ति से वन्दूँ स्वामी करूँ राग जय ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्व लोक संबंधी चौरासी लाख संतानवे सहस्र तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

महा मोह मिथ्यात्व तिमिर सम्पूर्ण विनाशूँ ।
ज्ञान भाव के दीप जलाऊँ ज्ञान प्रकाशूँ ॥
ऊर्ध्व लोक के सकल अकृत्रिम जिन चैत्यालय ।
विनय भक्ति से वन्दूँ स्वामी करूँ राग जय ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

ध्यान धूप की अनुपम महिमा हे प्रभु पाऊँ ।
नित्य निरंजन निज पद पा के शिवपुर जाऊँ
ऊर्ध्व लोक के सकल अकृत्रिम जिन चैत्यालय ।
विनय भक्ति से वन्दूँ स्वामी करूँ राग जय ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि.।

महामोक्ष फल पाने की अभिलाषा जागी ।
भव तरु फल की बांछा मेरे उर से भागी ॥
ऊर्ध्व लोक के सकल अकृत्रिम जिन चैत्यालय ।
विनय भक्ति से वन्दूँ स्वामी करूँ राग जय ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं नि.।

अर्घ्य चढ़ाए मैंने अब तक भव भावों से ।
अब अनर्घ्य पद पाऊँगा मैं निज भावों से ॥
ज्ञान ध्यान वैराग्य भाव अब ऊर में लाऊँ ।
संयम रूपी यान नाथ अब मैं भी पाऊँ ॥
ऊर्ध्व लोक के सकल अकृत्रिम जिन चैत्यालय ।
विनय भक्ति से वन्दूँ स्वामी करूँ राग जय ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवे हजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।

छंद – वीर

ऊर्ध्व लोक के लाख चौरासी संतानवे सहस्र तेईस ।
सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालय पूजूँ भक्ति सहित हे ईश ॥
अर्घ्यावलि में इनकी संख्या कहकर अर्घ्य चढ़ाऊँ आज ।
जिन शासन की उज्ज्वल महिमा उर में सतत् बढ़ाऊँ आज ॥
इन्द्रादिक सुर सभी देव संयम धारण के सदा अयोग्य ।
अतः मनुज पर्याय श्रेष्ठ है जो संयम धारण के योग्य ॥
पंच पाप तज अणुव्रत धारूँ करूँ स्वयं का सम्यक् भान ।
अष्ट मूल गुण धारी होकर श्रावक हो जाऊँ भगवान ॥
फिर मैं पंच महाव्रत धारूँ अट्ठाईस मूल गुण युक्त ।
भाव द्रव्य संयममय मुनि बन हो जाऊँ भव दुख मुक्त ॥

अर्घ्यावलि

सोलह स्वर्गों के चैत्यालय

१. प्रथम सौधर्म स्वर्ग संबंधी बत्तीस लाख जिनालय

प्रथम स्वर्ग सौधर्म नाम का है सौधर्म इन्द्र का नाम ।
मेरु चूलिका से कुछ ऊपर लाखों ही हैं श्रेष्ठ विमान ॥
हैं सौधर्म स्वर्ग में जिनमंदिर बत्तीस लाख छविमान ।
इन्द्रादिक सुर पूजन करते भाते भव्य भाव प्रतिमान ॥
वसु कर्मों की इकशत अड़तालीस प्रकृतियाँ नष्ट करूँ ।
आठों कर्मों के सदैव को बंधन हर भव कष्ट हरूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसम्बन्धी प्रथमस्वर्गस्य बत्तीसलाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

२. द्वितीय ईशान स्वर्ग के अट्ठाईस लाख जिनालय

द्वितीय स्वर्ग ईशान नाम है जो ईशान इन्द्र का नाम ।
अट्ठाईस लाख जिनमंदिर कलापूर्ण हैं शोभावान ॥
ग्यारह प्रतिमा निरतिचार पालूँगा मैं क्रम क्रम से शुद्ध ।
क्षुल्लक ऐलक पद धारूँगा हो जाऊँगा साधु प्रबुद्ध ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसम्बन्धी द्वितीयस्वर्गस्य अट्ठाईसलाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

३. तृतीय सनतकुमार स्वर्ग के बारह लाख जिनालय

सनतकुमार स्वर्ग तीसरा इन्द्र नाम भी सनत कुमार ।
बारह लाख जिनालय शोभित जिनकी शोभा अपरंपार ॥
पंच महाव्रतधारी बनकर धरूँ मूलगुण अट्ठाईस ।
पूर्ण देश संयमपति बनकर जिन मुनि बन जाऊँ जगदीश ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि तृतीयस्वर्गस्य बारहलाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

४. चतुर्थ माहेन्द्र स्वर्ग के आठ लाख जिनालय

चौथा तो माहेन्द्र स्वर्ग है जिसका इन्द्र सुनाम महेन्द्र ।
आठ लाख जिन चैत्यालय में राजित हैं जिनवर आत्मेन्द्र ॥
छठे सातवें गुणस्थान में झूलूँ स्वामी मैं प्रतिपल ।
दोष लगे तो प्रतिक्रमण प्रायश्चित कर होऊँ उज्ज्वल ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चतुर्थस्वर्गस्य आठलाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

५.-६. पंचम षष्टम स्वर्ग के चार लाख जिनालय

ब्रह्म तथा ब्रह्मोत्तर में हैं ब्रह्म नाम के इन्द्र महान ।
चार लाख जिन मंदिर दोनों स्वर्गों में हैं शोभावान ॥
धर्म ध्यान फिर शुक्ल ध्यान धर श्रेणी उपशम चढ़ जाऊँ ।
अप्रमत्त से ऊपर चढ़कर आत्म ध्यान वैभव पाऊँ ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि पंचमब्रह्मस्वर्ग-षष्टमब्रह्मोत्तरस्वर्गसंबंधि चार लाख जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

७-८. सप्तम अष्टम लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग के पचास हजार जिनालय

लान्तव अरु कापिष्ठ स्वर्ग में इन्द्र एक ही होता है ।
सहस्र पचास जिनालय वन्दन करके हर्षित होता है ॥
निज पुरुषार्थ जगा कर अष्टम नवम दशम ग्यारह पाऊँ ।
ग्यारवें से गिर जाऊँगा सप्तम षष्टम रुक जाऊँ ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि सप्तमलान्तवस्वर्ग-अष्टमकापिष्ठस्वर्ग संबंधि पचास हजार जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

९-१०. नवम शुक्र दशम महाशुक्र स्वर्ग के चालीस हजार जिनालय

शुक्र अरु महाशुक्र स्वर्ग में शुक्र इन्द्र देवों के साथ ।
हैं चालीस सहस्र जिनालय पूजन करता अपने हाथ ॥

फिर क्षायिक सम्यग्दर्शन पा क्षायिक श्रेणी चढ़ जाऊँ।
बिना रुके ही मोह क्षीण कर गुण स्थान द्वादश पाऊँ ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि नवमशुक्रस्वर्ग-दशममहाशुक्रस्वर्गसंबंधि चालीस हजार जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

११-१२. एकादशम शतार द्वादशम सहस्रार स्वर्ग के छह हजार जिनालय

स्वर्ग शतार सहस्रार में इन्द्र एक हैं देव अनेक।
छह हजार जिनमंदिर पूजूँ उर में धारूँ स्वपर विवेक ॥
अब चारित्र मोह क्षय करके इसके भी आगे जाऊँ।
गुणस्थान तेरहवाँ पाकर पद सर्वज्ञ सहज पाऊँ ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि एकादशंशतारस्वर्ग-द्वादशंसहस्रारस्वर्गसंबंधि छह हजार जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

१३-१४-१५-१६. आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्गों के सात सौ जिनालय

त्रयोदशम आनत में तो हैं आनत इन्द्र महा बलवान।
चतुर्दशम प्राणत में हैं ही प्राणत इन्द्र परम गुणवान ॥
पंद्रहवें अच्युत में जानों अच्युत इन्द्र सुगुणशाली।
सोलहवें प्राणत में प्राणत इन्द्र बड़ा महिमाशाली ॥
इस प्रकार से इन चारों में चार इन्द्र ही रहते हैं।
इनमें मात्र सात सौ जिन मंदिर हैं गणधर कहते हैं ॥
तेरहवें से ऊपर उठकर चौदहवाँ पाऊँ कुछ क्षण।
उसे छोड़ कर ऊपर जाऊँ सिद्ध स्वपद पाऊँ भगवान ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि त्रयोदशमआनतस्वर्ग-चतुर्दशं प्राणतस्वर्ग पंचदशं आरणस्वर्ग षोडशंअच्युतस्वर्गसंबंधि सप्तशतक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

नवग्रीवक १. सुदर्शन, २. अमेरु, ३. सुप्रबुद्ध के प्रथमत्रयी एक सौ ग्यारह जिनालय

नवग्रीवक की प्रथम त्रयी में एक शतक ग्यारह जिनगेह ।
द्रव्य भाव पूजन करके प्रभु मोह क्षय करूँ निःसंदेह ॥
अनुभव रस मय स्वानुभूति पा हो जाऊँ स्वामी निर्ग्रंथ ।
द्रव्य भाव संयम मय मुनि बन चलूँ सदैव मुक्ति के पंथ ॥
त्रिभुवन तिलक शीर्ष चूड़ामणि सिद्ध चक्र पाऊँ सुखकार ।
नित्य निरामय निरंजनी बन निर्द्वंदी होऊँ अविकार ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि प्रथम सुदर्शनग्रीवक द्वितीय अमेरुग्रीवक तृतीय सुप्रबुद्ध ग्रीवकसंबंधि एक सौ ग्यारह जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

१. नवग्रीवक द्वितीय त्रयी – यशोधरा, सुभद्र, सुविशाल के एक सौ सात जिनालय

नवग्रवीक की द्वितीय त्रयी में जिनगृह एक शतक अरु सात।
सारे ग्रीवक वासी सुर गण पूजन करते हैं दिन रात ॥
मैं भी सादर शीष झुकाऊँ स्वपद निराहारी हो जाऊँ ।
सिद्ध चक्र से संबंधित हों निर्मल निज वैभव पाऊँ ॥११।

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चतुर्थ यशोधराग्रीवक पंचम सुभद्रग्रीवक षष्टम सुविशालग्रीवकसंबंधि एक सौ सात जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

नवग्रीवक की तृतीय त्रयी – सुमन, सौमनस, प्रीतिंकर के इक्यानवे जिनालय

नवग्रीवक की तृतीय त्रयी में इक्यानवे श्रेष्ठ जिनगेह ।
नाथ अथाह विनय से पूजूँ करूँ स्वज्ञायक से ही नेह ॥
भाव लिंग बिन द्रव्यलिंग मुनि नवग्रीवक तक जाता है।
आयु पूर्ण हो जाने पर तो वह नीचे ही आता है॥
मात्र द्रव्य लिंग पाने को जिनमुनि वेश नहीं चाहूँ ।
भावलिंग युत द्रव्यलिंग धर जिन मुनिपद दृढ़ निर्वाहूँ ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि सप्तम सुमनग्रीवक अष्टम सौमनसग्रीवक, नवम प्रीतिंकरग्रीवकसंबंधि इक्यानवे जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

नव अनुदिश – प्रथम जिनालय – आदित्य

उपरिम ग्रीवक के ऊपर नव अनुदिश हैं बहु शोभायुक्त ।
दो भववातारी होकर सुर हो जाते हैं भव से मुक्त ॥
मध्य स्थित आदित्य नाम है एक जिनालय श्रेष्ठ महान ।
भाव सहित पूजन करके मैं करूँ कर्म वसु का अवसान॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि प्रथमअनुदिशसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्य नि.।

द्वितीय जिनालय – अर्चि

पूर्व दिशा में अर्चि देव गृह एक जिनालय शोभावान ।
अर्चन पूजन वन्दन करके करूँ आत्मा का कल्याण ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि द्वितीयअर्चिअनुदिशसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्य नि.।

तृतीय जिनालय – अर्चि मालिनी

दक्षिण दिशि में अर्चिमालिनी विमान में इक जिन मंदिर।
प्रासुक अष्ट द्रव्य अर्पित कर पंच अणुव्रत धारूँ सुन्दर॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि तृतीयअर्चिमालिनी अनुदिशसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्य नि.।

चतुर्थ जिनालय – वैर

पश्चिम में विमान वैर है जिसमें श्रेष्ठ जिनालय एक।
विनय भाव से एक शतक प्रतिमा पूजूँ धर हृदय विवेक॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चतुर्थ वैरअनुदिशसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बभ्योऽर्घ्य नि.।

पंचम जिनालय – वैरोचन

उत्तर दिशि में वैरोचन है नाम विमान जिनालय एक।
द्रव्यभाव पूजा करके प्रभु वन्दूँ जिन प्रतिमा प्रत्येक ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि पंचम वैरोधन अनुदिशसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्य नि.।

षष्टम जिनालय – सोम

इसकी ही ईशान दिशा में सोम नाम का एक विमान।
इसमें जिन चैत्यालय पूजूँ करूँ आत्मा का ही ध्यान ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि षष्टम सोम अनुदिशसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

सप्तम जिनालय – सोमरूप

फिर आग्नेय कोण में एक विमान सोमरूप सुन्दर।
इसमें रत्निम स्वर्णिम पावन सादर पूजूँ जिनमंदिर ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि सप्तम सोमरूप अनुदिशसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

अष्टम जिनालय – अंक महान

फिर नैऋत्य कोण में एक विमान जिनालय महिमामय।
वन्दूँ एक शतक प्रतिमा से शोभित मंदिर गरिमावान ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि अष्टम अंक अनुदिशसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

नवम् जिनालय – स्फटिक

फिर वायव्य कोण में है स्फटिक विमान महा मनहर।
श्रेष्ठ जिनालय से शोभित है पूजूँ भाव सहित जिनवर ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि नवम स्फटिक अनुदिशसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

पंच अनुत्तर के जिनालय

नव अनुदिशि के ऊपर पंच अनुत्तर के विमान पावन।
इक भव अवतारी होते हैं सभी देव इसके धन धन ॥
मध्य भाग सर्वार्थ सिद्धि का सर्वोत्तम है श्रेष्ठ विमान।
शेष चार चारों दिशि में है उत्तम प्रतिमा युक्त महान ॥

पंच अनुत्तर – प्रथम जिनालय – विजय

प्रथम अनुत्तर के विमान का विजयनाम है मनभावन।
पूजूँ श्रेष्ठ जिनालय की सर्वोत्तम प्रतिमाएँ पावन ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि प्रथम विजय अनुत्तरसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

पंच अनुत्तर द्वितीय जिनालय – वैजयंत

द्वितीय अनुत्तर के विमान का वैजयंत है नाम प्रसिद्ध ।
भाव पूर्वक वन्दन करके मैं भी हो जाऊँ प्रभु सिद्ध ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि द्वितीय वैजयंत अनुत्तरसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

पंच अनुत्तर तृतीय जिनालय – जयंत

तृतीय अनुत्तर के विमान का नाम जयंत मनोहारी ।
पूजूँ सविनय सर्व जिनालय जो है चहुँगति दुखहारी ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि तृतीय जयंत अनुत्तरसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

पंच अनुत्तर चतुर्थ जिनालय – अपराजित

चौथे अपराजित विमान में जिन चैत्यालय परम मनोज्ञ ।
प्रतिदिन वन्दूँ नाचूँ गाऊँ हो जाऊँ मुनिपद के योग्य ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चतुर्थ अपराजितसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि.।

पंच अनुत्तर पंचम जिनालय – सर्वार्थ सिद्धि

पंचम है सर्वार्थ सिद्धि जो मध्य अनुत्तर में सुविशाल ।
श्रेष्ठ जिनालय की पूजन कर हो जाऊँ मैं प्रभो निहाल ॥

इस विमान से सिद्ध शिला की दूरी अरे अल्प अत्यंत ।
किन्तु मार्ग है नहीं यहाँ से कैसी लाचारी भगवंत ॥

मुक्ति प्राप्त करने को नीचे सात राजु आना पड़ता ।
मुक्ति प्राप्ति हित मुनिवन प्राणी निज स्वभाव में ही अड़ता ॥

इन सबकी है मुक्ति सुनिश्चित तैंतीस सागर के पश्चात् ।
भक्ति सहित वन्दन करता हूँ भावी सिद्ध हमारे तात ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि पंचम सर्वार्थ सिद्धि अनुत्तरसंबंधि एक जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि.।

महाघ्य

छंद - वीर

तीन लोक की पूजन कर के सम्यक् फल तू कर ले प्राप्त।
क्रम क्रम परम पंच परमेष्ठी बन कर तू भी हो जा आप्त ॥

दोहा

महाअर्घ्य अर्पण करूँ ऊर्ध्व लोक जिनबिम्ब।
जिन छवि में निरखा करूँ अपना ही प्रतिबिम्ब ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवेहजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

जयमाला

छंद -मानव

अभिनव श्रृंगार सजाती निज परिणति है आती हर्षित।
फिर भी मैं हो जाता हूँ पर परिणति द्वारा मूर्छित ॥

संसार भाव करके फिर भव भार बढ़ाया मैंने।
भव भावों में रत होकर संसार बढ़ाया दूषित ॥

निज परिणति अति व्याकुल हो चुपके से मुझे जगाती।
फिर हे प्रभु हो जाता हूँ स्वयमेव गुणों से भूषित ॥

पर परिणति रोती रहती मैं चल देता शिव पथ पर।
आने न कभी देता हूँ फिर उर में विभाव रज दूषित ॥

फिर संयम की तरणी पर चढ़ जाता हूँ निज बल से।
कोई न रोक पाता है होता हूँ ज्ञान सुभूषित ॥

मोहादि भाव क्षय करके चारों कषाय जय कर लूँ।
अरहंत दशा प्रगटाऊँ पाऊँ कैवल्य अपरिमित ॥

दिव्य ध्वनि मैंने पायी जिनवाणी माँ के द्वारा।
माता जिनवाणी मेरी करती है भव्यों का हित ॥

सम्यक्त्व सहित संयम की आभा प्रदान करती है।
जय अष्ट कर्म करने को करती है माता प्रेरित ॥

मोहादि विकारी भावों की लहरें क्षय कर देतीं।
पद वीतराग देती माँ अन्तर्मुहूर्त में समुचित ॥

माँ त्रिलोकाग्र पहुँचाकर ध्रुव सिद्ध स्वपद देती है।
माता की परम कृपा से होता मैं त्रिभुवन वन्दित ॥

उपकार नहीं भूलूँगा मैं जिनवाणी माता का।
माँ की आज्ञा से मैंने तज दिए राग सब अनुचित ॥

निज ध्रुव की धुन अब लागी है मेरे अन्तस्तल में।
ध्रुव धाम लक्ष्य में लेकर ध्रुव पद पाऊँगा निश्चित ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधि चौरासीलाखसंतानवेहजार तेईस जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – वीर

ऊर्ध्व लोक के सकल जिनालय भक्ति सहित पूजे हैं आज।
ऊध्व लोक में सिद्ध शिला पर जाकर पाऊँ निज पदराज ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥

इत्याशीर्वादः

卐

अंतिम महार्घ्य

छंद - वीर

अब जिन वच सुन ज्ञाता दृष्टा बन तुव चरण शरण आया।
सम्यग्दर्शन की धारा पा निज स्वरूप को प्रभु ध्याया॥

चला दुधारा भेद ज्ञान का जड़ देही से भिन्न हुआ।
किए शुद्ध आत्मा के दर्शन फिर न कभी भी खिन्न हुआ॥

दूर दर्शिता के स्वामी सद्गुरु की पायी कृपा अपार।
अविरति के दुःशासन से बच संयम का पाया आधार॥

दीप्ति मंत निज ज्ञान दिवाकर से पाया मैंने दिव्यास्त्र।
दिव्य चक्षु बन द्रव्य दृष्टि बन कर्मों पर छोड़ा ब्रह्मास्त्र॥

दिव्य दर्शिनी परिणति मेरी दिव्यांगना समान मिली।
त्वरित दिव्य रथ पर बैठाया हृदयाम्बुज की कली खिली॥

फिर बदली मेरी दिनचर्या आत्म ध्यान प्रारंभ किया।
प्राप्त स्वरूपाचरण हो गया आत्म धर्म आरंभ किया॥

भव दुर्दशा विनाश हो गई फिर न हुआ मेरा दुर्नाम।
दुर्निवार संसार निवारा पा निर्जरा हुआ निष्काम॥

दुर्दमनीय विभाव विनाशे दुर्गति गमन हो गया नष्ट।
दुर्मति दूर हो गई मेरी कभी न होगा अब भव कष्ट॥

भव दायित्व छोड़ कर मैंने राग दनुज को जीत लिया।
दमन किया संसार दुखों का भव भावों से रीत लिया॥

ध्यान अग्नि में द्युति कर्मों की जला विनाश अब्रह्म किया।
ध्रुव धामी निज धुन में लय हो परम पूर्ण निज ब्रह्म लिया॥

तीन लोक मंडल विधान का अंतिम महाअर्घ्य अर्पित।
इसके फल में मिले मुझे प्रभु एक मात्र निर्मल समकित॥

ॐ ह्रीं श्री तीनलोकमंडल जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं नि.।

महा जयमाला

छंद - ताटंक

राग द्वेष का सब कर्तृत्व त्याग दूँ नाथ अकर्त्ता बन ।
ज्ञान रूप परिणमन करूँ मैं ज्ञाता दृष्टा चेतन बन ॥
ज्ञान दशा जब तक विकार के साथ एक हो रहती है ।
तब तक यह चैतन्य तत्त्व तज भव सागर में बहती है ॥

ज्ञाता दृष्टा गुण है मेरा सर्वोत्तम सुख दाता ।
यही मोह अरि का क्षय कर्ता अष्ट कर्म अरि का घाता ॥
जो जीता है वही है मैं हूँ ऐसी द्रव्य दृष्टि करना ।
तज पर्याय दृष्टि इस क्षण ही मोह महातम को हरना ॥

जब पर्याय दृष्टि जाती है तब होता सम्यग्दर्शन ।
तब ही सम्यग्ज्ञान प्रकट हो मिलता है चारित्र सघन ॥
यह रत्नत्रय मोक्षमार्ग है पाथेय परम हित कर ।
यही मुक्ति सुख का दाता है यही आत्मा के शिवकर ॥

भव अभाव की यदि इच्छा है तो अपने स्वभाव को देख ।
इसमें तेरे गुण अनंत के लिखे हुए अनगिनती लेख ॥
यहाँ विभावों का न भाव हैं नहीं मोह का झंझावात ।
नहीं राग का वन दावानल बड़वानल न उदधि का क्लांत ॥

अनुभव रस से भरा हुआ है निज अनुभव के द्वारा देख ।
नित्य निरंजन कर्म रहित है इसमें नहीं राग की रेख ॥
दर्शन ज्ञान स्वरूप शाश्वत द्रव्य दृष्टि से सिद्ध समान ।
मोक्ष स्वरूपी शिवसुख सागर अतः स्वयं ही तू भगवान ॥

बहुत हो चुका बहुत कर चुका अब तो तू हो जा निष्कर्म ।
अकर्तृत्व की महिमा पा निज मात्र यही है उत्तम धर्म ॥
अब तो सम्यग्दर्शन प्रगटा तज के मिथ्या भ्रम की टेक ।
शुद्ध अरूपी पूर्ण खरा है परभावों से विरहित एक ॥

मेरा चेतन मोह राग से रहता है सदैव ही त्रस्त ।
ज्ञान भाव पर ध्यान न देता बुद्धि हो गई इसकी अस्त ॥
पर में ही जाता रहता है निज स्वभाव में रहता सुप्त ।
इसके निज घर में जाते ही पर परिणति हो गई विलुप्त ॥

सम्यग्ज्ञान पूर्ण है उर में गुण अनंत हैं इसमें गुप्त ।
पंच महाव्रत धारण करने में यह रहता कभी न सुस्त ॥
यथाख्यात प्रगटित होते ही होते कर्म घातिया लुप्त ।
फिर अरहंत दशा पाता है हो सर्वज्ञ दशा से युक्त ॥

ज्ञान भावना जो भाते हैं वे पाते हैं पद निर्वाण ।
राग भावना जो पाते हैं वे पाते हैं नर्क निदान ॥
शुभ परिणामों वाले पाते स्वर्गों के सुख नश्वर रूप ।
हों परिणाम अशुभ तो पाते नर्क निगोदों के दुख कूप ॥

जो परिणाम शुद्ध करते हैं करते कर्मों का अवसान ।
त्रिलोकाग्र पर वे जाते हैं वे ही पाते मोक्ष महान ॥
ज्ञायक अपने भाव रूप परिणाम किया करता प्रतिपल ।
ज्ञेय पदार्थ परिणमित होते अपने भावों से पल पल ॥

अतः सदा ही आत्म धर्म निज पावन मंगलकारी है ।
भव दुखहारी शिवसुखकारी पाने की अब बारी है ॥
शब्दों की मणि माला तो अक्षर पुष्पों से बन जाती ।
स्वर व्यंजन जब मिल जाते हैं तब यह भाषा कहलाती ॥

समता का संदेश सुनाती साम्य भाव रस लाती है ।
चेतन की भावना शुद्ध लख मुक्ति वधू आ जाती है ॥
यही सनातन रीति मुक्ति पथ की आगम से मिल जाती ।
जो एकत्व भावना भाता उसके उर में झिल जाती ॥

बंध मोक्ष के परिणामों से शून्य त्रिकाली वस्तु प्रधान ।
मैं इनके कारण से भी हूँ शून्य यही पुरुषार्थ महान ॥

ऐसा स्वीकृत करते ही आ जाती काल लब्धि स्वयमेव ।
जाग्रत हो जाता स्वकाल भी हो जाता सम्यक्त्व अमेव ॥
असद्भूत व्यवहार न चाहूँ ना सद्भूत आदि चाहूँ ।
मैं तो केवल निश्चय भूत पदार्थ आत्मा ही चाहूँ ॥
सत्यम् शिवम् सुन्दरम् चेतन शुद्ध आत्मा का स्वामी ।
त्रिभुवन तिलक शीर्ष चूड़ामणि है निज पति अन्तर्यामी ॥
चिदानंद चिच्चमत्कार चैतन्य ज्ञान घन अविकारी ।
चिन्मय चिद्घन ज्ञान भावना स्वामी है भवदुखहारी ॥
समयसार है यही आत्मा यही नियम का सार महान ।
ये ही प्रवचन सार जिनेश्वर का इस जग को मंगलगान ॥
तीन लोक मंडल विधान हो गया पूर्ण निर्विघ्न जिनेश ।
अधो मध्य अरु ऊर्ध्व लोक के चैत्यालय पूजे सविशेष ॥

दोहा

कृत्रिम अकृत्रिम जिन भवन पूज्यनीय जिन बिम्ब ।
दर्शन कर इनमें प्रभो निरखूँ निज प्रतिबिम्ब ॥
जयमाला पूर्णार्घ्य यह तुम्हें समर्पित नाथ ।
जब तक निज पद ना मिले तजूँ न तुव पद साथ ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकमंडल जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो महाजयमाला पूर्णार्घ्यं नि.।

आशीर्वाद

छंद – ताटंक

तीन लोक के सकल जिनालय मैंने पूजे हर्षित हो ।
भेदज्ञान की कला सीख ली मैंने स्वामी पुलकित हो ॥
तीन लोक मंडल विधान की पूजन का उद्देश प्रधान ।
दुर्गति गमन नहीं हो स्वामी सुगति गमन हो हे भगवान ॥
भव दुख क्षय हो कर्म नाश हों प्रगटाऊँ उर सम्यग्ज्ञान ।
रत्नत्रय व्रतधारी बन कर प्राप्त करूँ शाश्वत निर्वाण ॥

इत्याशीर्वादः

शांति पाठ

छंद – गीतिका

शान्ति पाने के लिए आया शरण में हे प्रभो।
नष्ट सर्व अशान्ति कर दो भ्रान्ति सब हर दो विभो॥
सकल जग में शान्ति हो प्रभु नहीं कोई हो दुखी।
सभी प्राणी ज्ञान पाकर सदा को ही हों सुखी॥
परम शान्ति महान हो प्रभु नहीं कोई क्लेश हो।
सुखी हों सब जीव जग के ज्ञान दर्शन वेश हो॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य

क्षमापना पाठ

छंद – तार्टक

इस विधान में हुई भूल जो उनको क्षमा करें तत्क्षण।
वत्सल निधि परमेश्वर भगवन दया करें प्रतिपल क्षण क्षण॥
ज्ञान भावना का आदर ही करूँ सतत मैं प्रभो विशेष।
निज चिद्रूप शुद्ध प्रगटाऊँ इस विधान का है उद्देश॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री त्रैलोक्य चैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतमोगणी।
मंगलं कुन्दकुन्दाद्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलं॥
सर्व मंगल मांगल्यं सर्वकल्याण कारकम्।
प्रधानं सर्व धर्माणां जैन जयतु शासनम्॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

卐

ॐ

श्री तीन लोक मंडल विधान का

मण्डल बनाने की विधि का परिचय

ऊर्ध्वलोक संबंधी जिनालय

प्रथम स्वर्ग	– ३२ लाख
द्वितीय स्वर्ग	– २८ लाख
तृतीय स्वर्ग	– १२ लाख
चतुर्थ स्वर्ग	– ८ लाख
पंचम, षष्टम	– ४ लाख
सप्तम, अष्टम	– ५० हजार
९-१०-११-१२	– ४६ हजार
१३-१४-१५-१६	– ७ सौ
ग्रीवक प्रथम त्रयी	– १११
ग्रीवक द्वितीय त्रयी	– १०७
ग्रीवक तृतीय त्रयी	– ९१
नव अनुदिश	– ९
पंचअनुत्तर	– ५
	८४९७०२३

अधोलोक संबंधी जिनालय

भवनवासी

असुर कुमार	– ६४ लाख
नागकुमार	–८४ लाख
सुपर्णकुमार	– ७२ लाख
द्वीपकुमार	– ७६ लाख
उदधिकुमार	– ७६ लाख
स्तनितकुमार	– ७६ लाख
विद्युतकुमार	– ७६ लाख
दिक्कुमार	– ७६ लाख
अग्निकुमार	– ७६ लाख
वायुकुमार	– ९६ लाख
	७७२०००००

मध्यलोक संबंधी जिनालय

पंचमेरु	– ८०	ईष्वाकार	– ४
गजदंत	–२०	मानुषोत्तर	– ४
पृथ्वीकायिक वृक्ष	– १०	नन्दीश्वर	– ५२
वक्षार	– ८०	कुण्डलवार	– ४
विजयार्ध	– १७०	रुचकवर	– ४
कुलाचल	– ३०		४५८

इस प्रकार तीनलोक संबंधी अधो, मध्य, ऊर्ध्व लोक के सब मिलाकर ८५६९७४८१ स्वर्णमयी अकृत्रिम जिनालय हैं। इन सब में ९२५,५३,२७,९४८ रत्नमयी जिनबिम्ब हैं।

जैनं जयतु शासनम्

डी.टी.पी. कम्पोजिंग – प्रिन्टेक पाईन्ट, एम.पी. नगर, भोपाल ☎ ७६०१५०